श्री १०८ महर्षि स्वामी दयानन्दजी सरस्वती की जन्म शताब्दी

पंकटयुद्धि पुराणकथारसं; बहुलकोविदलोक मनोहरम् ।

॥ ओ३म् ॥

पुराण-तत्त्व-प्रकाश

॥ प्रथम भाग ॥



जिसको—

श्रीमान पं० वंशीधर जी पाठक आगरा निवासी की सहायता से

चिम्मनलाल वैश्य कासगंज निवासी ने निर्मित कर

आर्यभास्कर यन्त्रालय आगरा में मुद्रित ।
रजिस्टरी ऐक्ट २५ सन् १८६७ई० के अनुसार कराई गई है

द्वितीयवार		मूल्य प्रति पुस्तक
११००	१९२५	१) एक रुपया

॥ ओ३म् ॥



प्रिय पाठक वृन्द !

मेरे परमपूज्य स्वर्गवासी पिता श्रीलाला टीकारामजी को सत्यप्रिय भाषण करने की बड़ी रुचि थी, इस कारण उनका प्रेम भी ऐसे ही महा पुरुषों के साथ रहता था। मैं अपने पिता का इकलौता पुत्र हूं। मेरे पास ऐसा धन का भण्डार नहीं, जिससे पाठशाला, धर्मशाला, अनाथालय इत्यादि बनवा कर संसारमें उनके नाम स्मरणार्थ-छोड़ सकूं। हां मैंने बड़े परिश्रम के साथ इस ग्रन्थको तय्यार किया है, जिस में सत्य प्रिय कथन हैं, जिससे देश के उपकार होने की भी सम्भावना है उसी को आज मैं,

अपने माननीय पिता के नाम पर समर्पण करता हूं।

हे शक्तिमान् प्रभो!

आप दयाभण्डार हो आपकी कृपासे यह पुस्तक लोकप्रिय हो जिससे मेरे पिता का नाम चिरस्थायी रहे। ओं शम्।

आवश्यक सूचना

इस पुस्तक का उर्दू अनुवाद उर्दू जानने वालों के हितार्थ शीघ्र छप कर तय्यार हो जायगा। अतएव कोई महाशय इस पुस्तक और इसके किसी परिच्छेद को उर्दू अनुवाद करने का कष्ट न उठावें।

स्थान आर्य्यमन्दिर
३० नवम्बर सन् १९२३

आपका शुभचिन्तक—
चिम्मनलाल तिलहर, यू० पी०
जि० शाहजहांपुर।

* ओ३म् *

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति ।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः

प्रिय भ्रातृगण !

आज मैं आपके समीप, पुराण-तत्व-प्रकाश का द्वितीय एडीशन लेकर आता हूं आप पक्षपात को त्याग, अवलोकन कर, सारको ग्रहण कीजिये; जिसके अर्थ मैंने परिश्रम किया है। इस पुराणतत्वप्रकाश के लिखने से मेरा प्रयोजन यही है कि सम्पूर्ण संसार के मनुष्यों पर प्रकट होजावे कि अठारह पुराण महर्षिव्यास के बनाये हुए नहीं हैं-हां इन पुराणों को प्रायः स्वार्थी पुरुषों ने आर्य जाति को रसातल में पहुंचाने के अर्थ उक्त महात्मा के नाम से बना, प्रचलित कर दिये, जिससे उनका मनोरथ सिद्ध होगया, अर्थात् भारतवासी नितांत अज्ञ बन गये, वेद का नाम ही शेष रह गया, वास्तव में धर्म का स्वरूप ही उलट गया, और नाना मतमतान्तरों के कारण फूट का बाज़ार गर्म होगया। धन, बल, पराक्रम, योग्यता पर पानी पड़गया। सच पूंछो तो भारत के शिर का मुकुट गिर गया तिस पर तुर्रा यह है कि हमारे सनातनी भाई इन पुराणों को व्यासकृत मानते ही चले आते हैं।

क्याही अच्छा हो कि हमारे पौराणिक भाई अपनी विचारदृष्टि, इन पुराणों के लेखों पर डालते हुये, उन आक्षेपों पर भी ध्यान दें जो उन पर मुसलमान तथा ईसाई भाइयों ने किये, जिससे हमारा प्राचीन महत्व संसार से उठ गया और हम सब मुर्दा क़ौम में शुमार होगये। निकट था कि हम अविद्या के अथाह समुद्र में डूब कर नष्ट होजाते परन्तु परमात्मा के अनुग्रह और प्राचीन पुरुषों के तपोबल के पुण्य प्रताप से इस भूमि में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी का जन्म होगया जिन्होंने ब्रह्मचर्य का यथावत् पालन कर, पूर्णविद्या पढ़, योग्य विद्वान् और योगीराजों से विचार कर बहुत से प्रमाणों और युक्तियों से संसारी पुरुषों पर प्रकट कर दिया कि यह अठारह पुराण महर्षि व्यासप्रणीत नहीं हैं।

परन्तु शोक तो यह है कि सनातनी भाइयों के हृदय में इस बात को पूर्ण निश्चय नहीं हुआ। इस कारण अब मैं योग्य पण्डितों की सहायता से विस्तारपूर्वक इस विषय को वर्णन करता हूं, आप प्रेमपूर्वक प्रत्येक विषय को

विचारपूर्ण निश्चय कर डङ्के की चोट अपने भाइयों और अन्य विदेशी जनों पर प्रकट कर दीजिये कि यह अठारह पुराण व्यासोक्त नहीं हैं, और न वेदानुकूल हैं इस कारण यह मानने के योग्य भी नहीं हैं, हां सनातनधर्म पुस्तक वेद है वही ईश्वरीय ज्ञान है इसलिये ईश्वर के प्रेमियो ! आओ ! हम सब मिलकर वैदिक-धर्म का अन्वेषण करें, जिसको जान सम्पूर्ण प्राणी परमात्मा की आज्ञा पालन करते हुये ओं रूपी झण्डे के नीचे बैठ शान्ति प्राप्त कर स्वर्ग के सुखों को भोगें। ओं शम् ॥

स्थान
तिलहर यू० पी०
ज़िला शाहजहाँपुर



देशका शुभचिन्तक
चिम्मनलाल वैश्य
पुत्र-लाला टीकारामजी वैश्य
निवासी कासगंज, ज़िला एटा

धन्यवाद।

इस स्थान पर मैं उन पण्डितों और योग्य पुरुषों का धन्यवाद अदा करता हूं जिन्होंने मुझको प्रत्येक प्रकार की सहायता देकर इस महान् कार्य को पूर्ण कराया। परमेश्वर उन सबको सर्व प्रकार के आनन्द मङ्गल दे जिससे यह भारत संतान के सुधार में लगे रहें।

चिम्मनलाल वैश्य



॥ ओ३म् ॥

: प्रस्तावना :

एक सुयोग्य सनातनी पुरोहितजी का सहनशील आर्यसेठ यजमान के यहां

: प्रवेश :

आर्य सेठ—श्रीमान् पण्डितजी को आते देख, उपस्थान दे, दोनों हाथ जोड़, नमस्ते कर कहा कि महाराज ! आइये, विराजिये।

सुयोग्य पण्डितजी—आयुष्मान् कह, अन्य वार्तालाप के पश्चात् सेठजी से कहा कि आपने अभी तक दयानन्दी ग्रन्थों को ही देखा है, इस कारण आपकी बुद्धि विपरीत होगई है जिससे आप परमात्मा को साकार नहीं मानते और ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य्य और भगवती आदि को कुछ का कुछ कहते हो एवं इन्द्र, चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र इत्यादि देवताओं की निन्दा करते हो और गंगा, यमुना, सरस्वती आदि के स्नान और परमेश्वर के अवतारों की भक्ति और नाना तिथियों के उपवास, मूर्त्ति पूजा से स्वर्ग की प्राप्ति नहीं मानते। मृतक श्राद्ध और तर्पण से मरे हुये पितरों की तृप्ति होना स्वीकार नहीं करते, इसी भाँति "श्रीवासुदेवायनमः" "शिवायनमः" इत्यादि मन्त्रों, स्तोत्रों के जप और तिलकों के लगाने से पापों के नाश होने का खण्डन करते हो इस लिए अब आप कृपाकर एकबार अठारह पुराणों को जो वेदानुकूल हैं सुन लीजिये आप हमारे यजमान और सच्चे भक्त हैं और आपके पुरुषा भी बड़े धर्मात्मा और योग्य पुरुष थे इस लिये हमको आप जैसे सज्जनों के सनातन-धर्म त्यागने का बड़ा खेद होता है।

श्री महाराज आप हमारे बड़े और पूज्य हैं, सदा से आपके बड़े हमारे कुल के पुरोहित होते चले आये हैं इस कारण आपकी आज्ञा का पालन करना हमारा धर्म है, परन्तु धर्मविषय में सत्यसनातन वेदोक्त शिक्षा करना और उसी पर चलाना आपका परम कर्त्तव्य है उसीको सनातनधर्म कहते हैं, वही माननीय है

और परलोक में जहाँ माता, पिता बान्धवादि कुछ नहीं कर सकते वहाँ पूर्णरूप से धर्म ही सहायता करता है क्योंकि जीव स्वयंही जन्म लेता है और मरता है, पाप और पुण्य को भोगता है जैसा श्रीमद्भागवत स्कन्ध १० में लिखा है।

एकः प्रसूयते जन्तुरेक एव प्रलीयते।
एको नुभुंक्ते सुकृतमेक एव च दुष्कृतम्॥

और महाभारत में भी कहा है कि मरे हुए पुरुष के साथ उसकी स्त्री, पुत्र, मित्र, पिता, माता कोई नहीं जाता किन्तु उसको ऐसे छोड़ देते हैं जिस प्रकार फलरहित वृक्ष को पक्षी। उसकी कमाये हुये धन का कोई औरही स्वामी होजाता है, उसके शरीर की हड्डी, रुधिर, मांस को अग्नि भस्म कर देती है उस जीव के साथ केवल उसका किया हुआ कर्म ही जाता है। इस लिए मनुष्य-मात्र को उचित है कि यत्नपूर्वक धर्म को सञ्चय करें, क्योंकि संसार में केवल मनुष्य की योनि ही ऐसी है जो ज्ञान, विज्ञान द्वारा सम्यक् प्रकार परमात्मा को जान सुख भोग परमानन्दको प्राप्त करती है, अन्यथा नहीं। जैसा श्रीमद्भागवत स्कन्ध ६ अध्याय १६ में कहा है—

लब्ध्वेह मानुषीं योनिं ज्ञानविज्ञानसम्भवाम्।
आत्मानं यो न बुध्येत न क्वचिच्छुभमाप्नुयात्॥

इसीकारण तो अनेकशः पुरुष और स्त्रियों ने महान् कष्ट को सहन करते हुए धर्म को नहीं त्यागा। क्योंकि अमृत, जीवन, राज्य, पुत्र, यश, धन इत्यादि धर्मकी एक कला के समान भी नहीं, इसी कारण पण्डितजी मैं भी धर्मविषयमें लल्लोपत्तो करना ठीक नहीं समझता क्योंकि धर्म ही सार है इसलिये कहा है कि जब तक शरीर स्वस्थ रहे तब तक मनुष्यधर्मका आचरण करता रहे क्योंकि अस्वस्थ होजाने पर कुछ नहीं होता, जैसा कि शिवपुराण अध्याय ३९ में लिखा है।

यावत्स्वास्थ्य शरीरस्यं तावद्धर्मं समाचरेत्।
अस्वस्थश्चोदितो ह्यन्यैर्न किंचित्कर्तुमुत्सहेत्॥

श्रीमान् ने कृपा कर मुझको अनेक वार यही उपदेश किया था, कि भाई प्रथम अपने घरको देखना उचित है और विना अपने घरके देखे अन्यकी वात मानना बुद्धिके विपरीत है, पण्डितजी मैंने आपके कथनानुसार बहुधा पुराण मँगवाकर एक सुयोग्य पण्डितजी से सुने जिससे मुझको यह भी विदित होगया कि आपने भी सम्पूर्ण पुराणों को यथावत् नहीं विचारा वरन् आप यह कदापि न कहते कि तुम देवताओं की निन्दा करते हो, पुराणों की सनातन रीतिक

छोड़ते हो। पण्डितजी महाराज! श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजी देवताओं की बड़ी प्रतिष्ठा करते थे और हम सब देवताओं के सेवक हैं फिर निन्दा कैसी? देखिये दयालु विद्वान्का कर्त्तव्य है कि जो मनुष्य अविद्यामें फंस सुमार्गको छोड़ कुमार्गमें जाते हों उनको सत्यमार्ग से अन्यथा कभी न जानेदे क्योंकि वह गुरु व सुजन, माता, पिता, देवता और पति नहीं जो मृत्यु के छुड़ानेका उपाय न बतलावे जैसा श्रीमद्भागवत स्कन्ध ५ में लिखा है।

आप हमारे घरानेके पुरोहित हैं और शास्त्रानुसार आपका कर्त्तव्य यही है कि आप हमारे साथ पूरा हित करें जो धर्म पर चलाने से होता है और धर्म वेदसे जाना जाता है। सम्पूर्ण पुराण भी एक स्वर होकर कह रहे हैं कि ईश्वरीय ज्ञान वेद ही है, पुराणों का कथन है कि पुराण वेदानुकूल बनाये गये हैं परन्तु शोक यह है कि पुराणों के बहुधा लेख वेदसे नहीं मिलते। देखिये पुराणोंने ईश्वर को सगुण और निर्गुण माना है। फिर सगुणसे त्रिदेव होना लिखा है अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, और शिव, जिनकी बड़ी २ महिमा वर्णन की हैं परन्तु फिर आगे चल कर उन पर अनेकान दोष लगाये हैं। इसी भांति जिनको देवता माना है उनके व्यवहारोंका पाठ करनेसे मुझको तो बड़ी लज्जा आती है कि जिनके कहने और सुननेसे सभ्यताका पता भी नहीं लगता। पण्डितजी महाराज! क्या करें उनहीं विषयों को जब मुसलमान और ईसाई भाई हमें सुनाते हैं तो उस समय हमारी दशा शोचनीय होजाती है, हम सब ऋषियोंकी सन्तान होने और वेदोंका ईश्वरीय ज्ञान मानने पर भी उनके सन्मुख बात कहनेके योग्य नहीं रहते। तिस पर तुर्रा यह है कि भारतवर्ष के भूषण विद्वान् और योग्य पुरुष उन त्रिदेवादिकी निन्दाओं को स्तुति कहते हैं, सच पूंछिये तो पण्डितजी मेरी श्रद्धा आपके आधुनिक सनातनधर्म से इन पुराणोंके सुनने और विचार करनेसे ही जाती रही, और श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी के कथनका महत्त्व मेरे हृदयमें प्रवेश कर गया। यथार्थ में वह बड़े योगीराज ऊर्ध्वरेता बालब्रह्मचारी थे जिन्होंने ब्रह्मचर्य्य धारण कर, वेदोंको पढ़, बड़े २ विद्वानोंसे यथावत् विचार कर, संसारको कुमार्ग में जानेसे ही नहीं रोका, वरन् वेदोंको सनातन, ईश्वरकृत होने और प्राचीन पुरुषाओंके महत्त्वको जगत्में चिरायु रहने के लिये अपने तन, मन, विद्या और पुरुषार्थ को समर्पण करदिया, जिसका हम सबको पूर्णरूप से धन्यवाद देना चाहिये, न कि जैसा वर्त्तमान समयमें प्रायः आपकी नाममात्रकी धर्मसभायें उनके विषयमें मिथ्या कथन कर रही हैं और आपसे योग्य पुरुष भी उनको निन्दक कहते हैं, अस्तु। शोक तो यही है कि आप पक्षपातको त्यागकर कुछ विचार नहीं करते। क्या अच्छा हो कि आप प्रतिदिन सायङ्कालको यहां पधार कर पुराणके उन विषयोंको श्रवण करें जिनके अवलोकन करनेहीसे मेरी श्रद्धा और भक्ति आधुनिक सनातनधर्मसे जाती रही फिर आप अच्छे प्रकार विचार सत्यको ग्रहण कर अपने यजमान

दिको उसी सनातनधर्म पर चलाइये जिससे प्राणीमात्रका कल्याण हो, आपको भी उसका यथार्थ फल मिले।

पण्डितजी--सेठजी मैं आपकी अन्तिम वार्ताके अनुकूल कलसे प्रतिदिन आकर आपके कथनको सुन विचार करूंगा फिर जो मुझको सत्य प्रतीत होगा उसको मैं स्वीकार कर अपने यजमानों को उसी के अनुकूल चलाने का प्रयत्न करूंगा; परन्तु मेरा कहना आपसे यह है कि जोकुछ आप मुझको सुनावें उसको भारतवासियों के उपकारार्थ मुद्रित कराकर प्रकाशित करादें इसके उपरान्त जो समय आप इस कार्य्य के लिये नियत करें उसकी सूचना भी नगर निवासियों को देदेना योग्य है जिससे अन्य पुरुषोंको भी विचार करने का अवसर प्राप्त हो क्योंकि सर्वसाधारण मनुष्योंको धन तथा विद्या और समय के अभाव से बहुधा पुराणों की बातें सुनने और पढ़ने का अवसर नहीं मिलता वह भी इनको सुन यथार्थ लाभ उठावें।

मैं आपको धन्यवाद देता हूं क्योंकि आपने मेरे निवेदन को स्वीकार करलिया। धन्य है पण्डितजी यदि मेरे कथनके मुद्रित होने से भारतवासियों को कुछ लाभ होने की आशा है तो मैं आपकी आज्ञानुसार अपने कथन को अवश्यमेव मुद्रित करानेका प्रयत्न करूंगा और यह धार्मिक कथन छः बजे शामसे प्रारम्भ हुआ करेगा जिसकी सूचना पबलिकको भी दे दूंगा अन्तको हमारी आपसे यह भी प्रार्थना है कि हमारे कथनको सुन और विचार कर यदि किसी विषयमें कुछ शङ्का हो तो आप स्वयं तथा अपने सनातनी मित्रोंसे उसका समाधान लिखाकर छपवा देवें जिससे पबलिकको सत्यासत्यके जाननेमें सुगमता हो। लीजिये इस हेतु मैं भी हस्ताक्षर करे देता हूं आपभी अपने हस्ताक्षर कर दीजिये।

पण्डितजी—बहुत अच्छा

(दोनोंने हस्ताक्षर कर दिये)

हस्ताक्षर } पं० रामप्रसाद
दुर्गाप्रसाद वैश्य

पण्डितजी—अब हम जाते हैं-आपकी इच्छानुसार आपके सब कथनको सुन यदि हमारे और हमारे भाइयोंको जो २ अनुचित प्रतीत होगा उसका उत्तरभी अवश्य छपवा देंगे जिससे संसारके प्राणियोंको यथावत् लाभ हो।

आर्य्य सेठ—अच्छा श्री महाराज नमस्ते।

पण्डितजी—आयुष्मान् कह कर चल दिये।

आर्य्य सेठ—ने निम्नलिखित सूचना नगरनिवासियोंको दी।

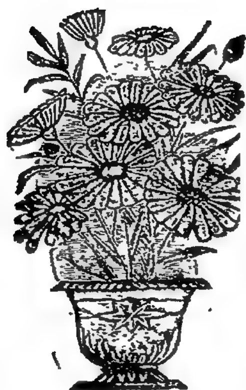
सूचना।

सर्वसज्जनों पर प्रकट हो कि १५ जून सन् १६०७ के ६ बजे शामसे प्रतिदिन मैं अपनी कोठी पर श्रीमान् पं० रामप्रसादशर्माजी के सन्मुख पुराणोंके विषयमें कथन करूंगा। कृपापूर्वक नियत समय पर पधार कर लाभ उठाइये और मुझको कृतार्थ कीजिये॥ इति॥

१५ जून सन् १६०७ }

आपका शुभचिन्तक—
पूर्णप्रसाद.





* ओ३म् *

पुराण-तत्त्व-प्रकाश

प्रथम परिच्छेद

नियुक्त समय पर सेठजी के यहां पंडित जी का पधारना और आर्य्य सेठ का धर्म सम्बन्धी निवेदन करना ।

आर्य्य सेठ—श्रीमान् पण्डितजी को आते देखकर पूर्ववत् आइये महाराज! नमस्ते। विराजमान हूजिये। इतने में अभिलाषी श्रोतागण भी आगये जो यथा-योग्य के पश्चात् सब स्थिर चित्त होकर बैठ गये तब सेठजी ने निम्न लिखित मन्त्र से परमेश्वर की प्रार्थना की।

ओं पावकानः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञंवष्टुधियावसुः ।

हे सर्व विद्यामय प्रभु ! आपकी कृपा से सर्व शास्त्र विज्ञानयुक्त, अन्नादि के साथ वर्तमान, पवित्र स्वरूप सत्य भाषण मय, मंगलकारक वाणी हमें प्राप्त हो जिससे हमारी सब मूर्खता नष्ट हो और हम महापाण्डित्य युक्त हों ।

इसके उपरान्त सेठजी ने श्रीमान् पण्डितजी से कहा कि समस्त सभ्य हिन्दू भाई अठारह पुराणों को मानते हैं और वह १८ हैं जैसा कि श्रीमद्भागवत् स्कन्ध १२ अ० ७ श्लोक २३ में लिखा है कि (१) ब्रह्म, (२) पद्म, (३) विष्णु, (४) शिव, (५) लिंग, (६) गरुड़, (७) नारद, (८) भागवत, (९) अग्नि, (१०) स्कन्द, (११) भविष्य, (१२) ब्रह्मवैवर्त्त, (१३) मारकण्डेय, (१४) वामन, (१५) वाराह, (१६) मत्स्य, (१७) कूर्म और (१८) ब्रह्माण्ड । ऐसाही लिंगपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ३९ श्लोक ६१, ६२, ६३ और मारकण्डेयपुराण महात्म्य में लिखा है ।

(१) ब्रह्म, (२) पद्म, (३) विष्णु, (४) शिव, (५) भागवत, (६) नारद, (७) मार्कण्डेय, (८) अग्नि, (९) भविष्य, (१०) ब्रह्मवैवर्त्त, (११) लिंग, (१२) वाराह, (१३) स्कन्द, (१४) वामन, (१५) कूर्म, (१६) मत्स्य, (१७) गरुड़, (१८) ब्रह्माण्ड ।

शिवपुराण वायुसंहिता अ० १ श्लोक ३८-३९-४० ।

(१) ब्रह्म, (२) पद्म, (३) विष्णु, (४) शिव, (५) भागवत, (६) नारदीय, (७) मार्कण्डेय, (८) अग्नि, (१०) ब्रह्मवैवर्त्त, (११) लिंग, (१२) वाराह, (१३) स्कंद, (१४) वामन, (१५) कूर्म, (१६) मत्स्य, (१७) गरुड़, (१८) ब्रह्माण्ड ।

पद्मपुराण षष्ठी उत्तरखण्ड अध्याय २३६ में लिखा है ।

अष्टादशं तु ब्रह्माण्डं पुराणानि यथाक्रमम् ।

१ ब्रह्म, २ पद्म, ३ विष्णु, ४ शिव, ५ भागवत, ६ नारदीय, ७ मार्कण्डेय, ८ अग्नि, ९ भविष्य, १० ब्रह्मवैवर्त्त, ११ लिंग, १२ वाराह, १३ वामन, १४ कूर्म, १५ मत्स्य, १६ गरुड़, १७ स्कंद, १८ ब्रह्माण्ड ।

देवीभागवत स्कंद १ अध्याय ३ में लिखा है—

१ मत्स्य, २ मार्कण्डेय, ३ भागवत, ४ भविष्य, ५ ब्रह्माण्ड, ६ ब्रह्मवैवर्त्त, ७ ब्रह्म, ८ वामन, ९ वाराह, १० विष्णु, ११ वायु, १२ अग्नि, १३ नारद, १४ पद्म, १५ लिंग, १६ गरुड़, १७ कूर्म, १८ स्कंद ।

कूर्मपुराण अध्याय १ श्लोक १३, १४, १५ में लिखा है—

१ ब्रह्म, २ पद्म, ३ विष्णु, ४ शिव, ५ भागवत, ६ भविष्य, ७ नारद, ८ मार्कण्डेय, ९ अग्नि, १० ब्रह्मवैवर्त्त, ११ लिंग, १२ वाराह, १३ स्कन्द, १४ वामन, १५ कूर्म, १६ मत्स्य, १७ गरुड़, १८ वायु ।

श्रीमान् पण्डितजी देखिये श्रीमद्भागवत, लिंग, मार्कण्डेय, शिव और पद्म इन पांच पुराणों में ब्रह्म, पद्म, विष्णु और शिव की गणना समान है परन्तु श्रीमद्भागवत में पांचवां लिंग और लिंग में पांचवां भागवत शिव, पद्म, और कूर्म में पांचवाँ भागवत को गिना है इस प्रकार अन्य पुराणों की गणना का भेद है और देवी भागवत में और ही रीति से गणना की है इसके सिवाय देवी-भागवत कूर्म और अग्नि पुराण में वायुपुराण का नाम आया है इस भेद का कारण क्या है इसके अतिरिक्त अग्नि और वन्हि का एकही अर्थ है फिर भी अग्नि वन्हि दो पुराण पृथक् २ उपस्थित हैं, ब्रह्मवैवर्त्त यद्यपि एकही पुराण प्रसिद्ध है परन्तु वर्त्तमान समय में उसके भी दो प्रकार के पुस्तक पाये जाते हैं, एक का नाम ब्र०वै० और दूसरे का नाम प्राचीन ब्रह्मवैवर्त्त पुराण रक्खा गया है । स्कंद पुराण का आजकल कोई स्वतन्त्र पुस्तक नहीं है परन्तु कई भाग काशीखण्ड, रेवाखण्ड, तत्कालखण्ड और भीमखण्ड आदि नामों से स्वतन्त्र पुस्तकें मिलती हैं । इसी भांति भविष्यत् और शिवपुराण भी दो २ प्रकार के मिलते हैं । इस

सूरत में समस्त पुराणों की संख्या अधिक होजाती है परन्तु इनमें से अठारह पुराणों के कर्त्ता व्यासजी माने जाते हैं।

अब पण्डितजी सबसे प्रथम यह जानना आवश्यक है कि व्यासजी महाराज का जन्म कब हुआ? और वह किस धर्म के मानने वाले थे? इसके अतिरिक्त यह भी जानना चाहिये कि पुराणों में जो कुछ लिखा है वह उनके धर्म के अनुकूल है वा प्रतिकूल? जब हम इन बातों का विचार करते हैं तो स्पष्ट प्रकट होता है कि महर्षि व्यास पाराशर महाराज के पुत्र थे जो महाराज युधिष्ठिर के राज्यशासन के समय विद्यमान थे और महाराज युधिष्ठिर के राज्य के विषय में भारत के प्रसिद्ध ज्योतिषी वाराहमिहिर वाराहीसंहिता में लिखते हैं कि विक्रम संवत् आरम्भ होने से ५१८ वर्ष पूर्व महाराज युधिष्ठिर का २५२६ संवत् था इसलिये २५२६×५१८×१९६४ अर्थात् ५००८ वर्ष महाराजा युधिष्ठिर के राज्य को व्यतीत हुए होगये यदि पौराणिकों का यह वचन "अष्टादश पुराणानां कर्त्ता सत्यवती सुतः" अर्थात् सत्यवती के पुत्र व्यास ने १८ पुराणों को बनाया। सत्य है तो विष्णु और लिंग पुराण के निम्न लिखित वाक्यों से स्पष्ट प्रकट हो रहा है कि पुराण अपने को व्यास महाराज का बनाया हुआ सिद्ध नहीं कर सकते जैसा विष्णु पुराण अंश १ अध्याय १ में लिखा है।

उपसंहृत वान्सत्रं सयस्तद्वाक्य गौरवात्। २५॥
त्वया तस्मान्महाभाग ददाम्यन्यं महावरम्॥ २६॥

हे मैत्रेय! जब मैंने अपने दादा वशिष्ठ के कहने से राक्षसों का नाश करने वाला यज्ञ बन्द किया तब उन्होंने प्रसन्न होकर मुझको यह वर दिया कि तुम पुराण बनाने वाले होगे।

पुराणसंहिताकर्त्ता भवान्वत्स भविष्यति।
देवता परमार्थं च यथावद्वेत्स्यते भवान्॥

लिंगपुराण अध्याय ६४ में लिखा है कि पुलस्त्य मुनि ने पराशर से कहा कि हे पुत्र! इस बड़े भारी वैर में भी तैने वशिष्ठ जी के वचन से क्षमा की और हमारे पुत्र राक्षसों का संहार नहीं किया इस कारण से हम बहुत प्रसन्न हैं। अब हम तुमको वर देते हैं कि पुराणसंहिता करने का तुमको सामर्थ्य होगा और देवताओं का परमार्थ तुम ठीक २ जानोगे, कर्म की प्रवृत्ति तथा निवृत्ति में तुम्हारी बुद्धि निर्मल और निःसन्देह रहेगी"। यह सुन वशिष्ठजी ने भी पाराशर से कहा कि पुलस्त्यजी जैसा कहते हैं वैसाही होगा। पाराशर मुनि भी इसी भांति वशिष्ठ और पुलस्त्यजी का अनुग्रह पाय विष्णु पुराण रचते भये।

जैसा कि—

ततश्च प्राह भगवान् वशिष्ठो वदतांवरः ॥ ११९ ॥
पुलस्त्येन यदुक्तं ते सर्वमेतद्भविष्यति ।
अथ तस्य पुलस्त्य वशिष्ठस्य च धीमतः ॥ १२० ॥
प्रसादाद्वैष्णवं चक्रे पुराणं वै पराशरः ।

इस पर भी यह मानही लिया जावे कि पुराणों को व्यास महाराज ने ही बनाया तो उनको बने ५००८ वर्ष से कुछ अधिक हुए परन्तु ऐसा भी जाना नहीं जाता क्योंकि पुराण अपने २ बनने का समय पृथक् २ बतला रहे हैं देखिये पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १९२ में लिखा है कि नारदजी व्याकुल अवस्था में सनकादिकों को मिले तब उन्होंने इस मलीनता होने का कारण पूंछा तो उन्होंने कहा कि मैं पुष्कर, प्रयाग, काशी, गोदावरी के किनारे, हरिक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, श्रीरङ्गसेतबन्धु तथा और तीर्थों में इधर उधर घूमता हुआ आया हूं परन्तु कहीं भी मनके संतोष का करने वाला कल्याण नहीं देखा। सम्पूर्ण आश्रम, तीर्थ, नदियां, कुंड और देवताओं के स्थान मुसलमानों से भर गये हैं और अनेक स्थानों को दुष्टों ने गिरा दिया है। जैसा कि—

आश्रमायवनैरुद्धास्तीर्थानिसरितोह्रदाः।
देवतायतनान्यत्र दुष्टैरुच्छेदितानिच ॥ ३५॥

प्रिय पण्डितजी! इतिहासों के देखने से विदित होता है कि यह दशा भारत में महमूद गजनवी से लेकर औरंगजेब के समय तक होती रही इससे स्पष्ट प्रकट होता है कि पद्मपुराण संवत् १०१४ और १७२६ के बीच में बनाया गया और ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है कि जो घोर कलियुग में तमाकू पीता है वह नरक को जाता है।

प्राप्ते कलियुगे घोरे सर्वे वर्णाश्रमे नराः।
तमालं भक्षितं येन सगच्छेन्नरकार्णवे ॥

पद्मपुराण में लिखा है कि जो तमाकू पीने वाले ब्राह्मण को दान देता है वह नरक को जाता है और ब्राह्मण गांव का सूकर होता है।

धूम्रपानरतं विप्रं दानं कुर्वन्ति ये नराः।
दातारो नरकं यान्ति ब्राह्मणो ग्रामशूकरः ॥

इतिहास इस विषय में एक स्वर होकर कह रहे हैं कि तम्बाकू अमरीका से अकबर के समय में भारतवर्ष में आया इससे भी प्रकट होता है कि यह

दोनों पुराण अकबर के पीछे बनाये गये और अकबर का समय विक्रम के १६१३ से १६६२ तक रहा।

इसके अतिरिक्त स्वामी शंकराचार्य्य रामानुज महाराज से प्रथम हो चुके थे क्योंकि रामानुजजी ने शंकरभाष्य का निषेध किया है और यह बात संसार में प्रसिद्ध है कि शंकर स्वामी सारे संसार को माया और अपने को ब्रह्म मानते थे और सम्पूर्ण हिंदू शंकरस्वामी को महादेव का अवतार कहते थे जिनका होना बौद्ध मत से प्रथम नहीं हो सकता क्योंकि उन्होंने बौद्धमत का खण्डन किया है। पद्मपुराण में पार्वती जी के प्रश्न के उत्तर में महादेव जी कहते हैं—

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्ध उच्यते
मयैव कथितं देवि ! कलौ ब्राह्मणरूपिणा ॥७॥ अध्याय २३५।

हे देवि ! कलियुग में मैंने ब्राह्मण का रूप धारण कर मायावाद प्रवर्तक किया (जो छिपा हुआ बौद्ध मत है) इस लिये पद्मपुराण बुद्ध, शंकर, रामानुज के पीछे बना इसके उपरान्त श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ३ में बुद्ध महाराज को अवतार माना है जैसा कि—

ततः कलौ संप्रवृत्ते संमोहाय सुरद्विषाम् ।
बुद्धो नाम्ना जिनसुतः कीटकेषु भविष्यति ॥ २४ ॥

इतिहास से विदित होता है कि बुद्ध विक्रमी सवत् ६१४ से पूर्व उत्पन्न हुए और ८० वर्ष की आयु में मर गये जिसको २५७७ वर्ष व्यतीत हुए परन्तु व्यास महाराज के जन्म को ५००८ वर्ष हुए। इससे प्रकट होता है कि श्रीमद्भागवत व्यास महाराज की बनाई हुई नहीं है। इसके अनन्तर इस बात को सब मानते हैं कि शुकदेवजी ने राजा परीक्षित को भागवत सुनाई परन्तु इतिहास से यह प्रकट नहीं होता क्योंकि कौरव और पाण्डवों के युद्धके पश्चात् महाराज युधिष्ठिर गद्दीपर बैठे जिन्होंने ३६ वर्ष ८ महीने २५ दिन राज्य किया और उनकी मृत्यु के पीछे परीक्षितने ६० वर्ष राज्य किया और भागवतमें लिखा है कि परीक्षित के राज्य के पीछे अर्थात् महाभारत के ९६ वर्ष के पश्चात् शुकदेवजी ने उनको भागवत सुनाया परन्तु महाभारत के शान्ति पर्व अध्याय ३३३ से प्रकट होता है कि जब लड़ाई समाप्त हुई और भीष्मजी के अन्त समय पर युधिष्ठिर उनसे उपदेश सुनने को गये तब उन्होंने शुकदेवजी के विषय में कहा कि बहुत दिन व्यतीत हुए कि उनका देवलोक होगया—

शुकस्तु मारुतादूर्ध्वं गतिःकृत्वांतरिक्षगां ।
दर्शयित्वा प्रभावं स्वं ब्रह्मभूतोऽभवत्तदा ॥ १९ ॥

यह कह व्यास शोकातुर हुए। युधिष्ठिर के इस प्रकार पूंछने पर प्रकट होता है कि मानों उन्होंने उसको देखा नहीं। उस समय राजा परीक्षित गर्भ में भी न थे फिर भला जब कि शुकदेवजी राजा परीक्षित के जन्म से प्रथम ही मर गये थे तो फिर उनका ८६ वर्ष पीछे भागवत सुनना किस प्रकार हो सकता है और व्यासजी महाराज इनसे बहुत पहिले हुए तो फिर क्योंकर व्यासजी ने भागवत को बनाया इस के उपरान्त ज्ञानेश्वर मिश्रने जो गीता की टीका बनाई है उसमें उन्होंने १२७२ शकाब्द में हेमाद्रि का होना सिद्ध किया है और उन्हीं के समय में पण्डित बोपदेवजी हुए जिन्होंने राजा सचिव हिमाद्रको भागवत सुनाई थी इससे प्रत्यक्ष प्रकट होता है कि भागवत को बने बहुत थोड़े दिन हुए अग्निपुराण अ० १६ श्लोक २ में लिखा है कि मायामोहरूप शुद्धोदन का बेटा हुआ जैसा कि—

मायामोहस्वरूपोऽसौशुद्धोदनसुतोऽभवत्।

इससे प्रकट होरहा है कि यह पुराण बुद्ध के जन्म के पीछे बनाया गया और भविष्यत् पुराण में भी बुद्ध, पीपाभक्त, अकबर और गुरु नानक की उत्पत्ति का वर्णन है फिर यह व्यास महाराज का बनाया क्यों कर हुआ देखिये भविष्य पु० के तृतीय प्रति सर्ग पर्व अ० ६ में लिखा है।

एतस्मिन्नेव काले तु कलिनासंस्तुतोहरिः।
काश्यपादुद्भवो देवो गौतमो नाम विश्रुतः॥ ३६
बौद्धधर्मञ्च संस्कृत्य पट्टने प्राप्तवान् हरिः॥ ३७॥

सम्पूर्ण इतिहासवेत्ता एक स्वर हो कह रहे हैं कि रामानुज विक्रम की १२ शताब्दि में हुए जिन्होंने वैष्णव मत चला कर शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म से लोगों को चक्रांकित किया; परन्तु वैष्णव मतका खण्डन लिङ्ग पुराण में है—

शङ्खचक्रे तापयित्वा यस्य देहः प्रदह्यते,
स जीवनकुणपस्त्याज्यः सर्वकर्मबहिष्कृतः,

अर्थात् जिसके शरीर पर तपाकर शङ्ख, चक्र आदि की छापें लगाई गई हैं वह जीते जी मुर्दा और सब धर्मों से पतित के समान त्यागने योग्य है। इससे स्पष्ट प्रकट होरहा है कि यह लिङ्गपुराण भी व्यासजी का बनाया हुआ नहीं है क्योंकि रामानुजजी को आज तक ७६१ वर्ष हुए और व्यासजी को ५००८ वर्ष हुए।

जगन्नाथ जी का मन्दिर संवत् १२३१ विक्रमी में उड़ीसा के राजा अनंग

भीमदेव ने बनाया था इसको सब इतिहासवेत्ता मानते हैं और मन्दिर पर भी यही संवत् पड़ा है और इसका माहात्म्य स्कंदपुराण में लिखा है इससे प्रकट होता है कि स्कंदपुराण संवत् १२३१ के पीछे बनाया गया।

ब्रह्मवैवर्त्तादिकी भविष्यत् वाणियों के पढ़ने से जाना जाता है कि यह मुसलमानों के भारताक्रमण के पश्चात् बने हैं क्योंकि उनमें यह लिखा है कि कांची और काश्मीर मण्डल का राज्य यवन भोग करेंगे।

गान्धारेसिन्धुसौवीरे कांचीकाश्मीरमण्डलम्।
भोक्ष्यन्ति निन्द्यकृतयः यवनः कलिदूषितः॥

अर्थात् यवन लोग; खन्दार, सिंध, कांची और काश्मीर में राज्य करेंगे इससे स्पष्ट जाना जाता है कि जब मुसलमानी राज्य उक्त देशों में होगया था तब ब्रह्मवैवर्त्त पुराण बना था यदि यह भविष्यत्वाणी होती तो यह लिखते कि सम्पूर्ण भारत यवनों के आधीन होजायगा सो नहीं लिखा देखिये गरुड़पुराण अध्याय ५५ में लिखा है—

पूर्वे किरातास्तस्यास्ते पश्चिमे यवनास्थितः।

अर्थात् भारत के पूर्व की ओर किरात और पश्चिम यवन बसते हैं भला पण्डित जी महाराज क्या व्यासजी के समय में इस भारतखण्ड में मुसलमान रहते थे कदापि नहीं इससे जाना जाता है कि यह पुराण भी थोड़े ही समय का बना हुआ है।

पण्डितजी महाराज पुराणवालों ने पुराणों में जो लक्षण लिखे हैं उनमें भी परस्पर मतभेद है और यह लक्षण भी पूरे २ उपरोक्त पुराणों में नहीं मिलते पुराणों का सामान्य लक्षण यह है।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥ कूर्म अ० १॥

अर्थात् जिसमें सर्गनाम जगत् की उत्पत्ति और प्रतिसर्ग प्रलय सृष्टि के आरम्भ से वंश वा कुलों का वर्णन मन्वन्तरों की व्यवस्था अनेक कुलों में उत्पन्न हुए प्रधान पुरुषों के चरित्रों का वर्णन हो उनको पुराण कहते हैं। श्रीमद्भागवत स्कन्द १२ अ० ७ में दश लक्षण लिखे हैं।

सर्गश्चाविसर्गश्च वृत्तिरक्षान्तराणि च। वंशो वंश्यानुचरितं संस्थाहेतुरपाश्रयः॥ दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः। केचित्पञ्चविधं ब्रह्मन्महदल्पव्यवस्थया॥

ऐसाही विष्णु पुराण अं० ३ अध्याय ६ में लिखा है। परन्तु अग्निपुराण और भविष्य में व्याकरण कोश-वैद्यक, ज्योतिष, मारण, उच्चाटन, वशीकरण, गृहादि बनाना और सामुद्रिक इत्यादि विषय भी लिखे हैं फिर आप यह क्योंकर कह सकते हैं कि यह पुराण व्यासोक्त है और भी देखिये कि पण्डितवर वराह-मिहर ने अपने समय के प्रचलित मान्य पुस्तकों की जो सूची लिखी है उसमें भी तो पुराण ग्रन्थों के नाम तक नहीं लिखे इसके उपरान्त उन्होंने जो मथुरापुरी का वर्णन किया है उसमें लिखा है कि मथुरानगरी में बौद्धों के बड़े २ बीस मंदिर और २००० बौद्ध धर्मोपदेशक थे। इसके अतिरिक्त चीन के प्रसिद्ध यात्री फाहियन ने ख्रीष्टाब्द की ५ वीं शताब्दि में जो भारत की यात्रा की थी उसने अपनी यात्रा पुस्तक में लिखी है कि मथुरापुरी बौद्ध मन्दिरों से परिपूर्ण होरही है। इससे प्रत्यक्ष प्रकट होता है कि जिन पुराणों में मथुरापुरी को विष्णु के मन्दिरों से परिपूर्ण लिखा है वह सब पुराण ख्रीष्टाब्द की पांचवीं शताब्दि के पश्चात् बनाये गये हैं।

इसके अनन्तर दो भागवत होने के कारण आपस में झगड़ा बना रहता है यदि दोनों को पुराणों में गिना जाय तो १८ के स्थान पर १९ पुराण होते हैं वह सम्भव नहीं। वैष्णव लोग श्रीमद्भागवत को; शाक्त लोग देवी भागवत को महापुराण मानते हैं इस विषय में अपने २ पक्ष के प्रमाण भी देते हैं जैसा कि पद्मपुराण में लिखा है।

शैवमादि पुराणं च देवीभागवतं तथा,

और भी लिखते हैं।

भगवत्याः कालिकायास्तु माहात्म्यं यत्र वर्ण्यते।
नानादैत्यवधोपेतं तद्वै भागवतं विदुः ॥८॥
कलौ केचिद् दुरात्मानो धूर्त्ता वैष्णवमानिनः।
अन्यद्भागवतं नाम कल्पयिष्यन्ति मानवः ॥८॥

अर्थात् भगवती कालिका का जिसमें माहात्म्य लिखा हो वह भागवत है कलियुग में बहुत से धूर्त्त जो अपने को वैष्णव मानते हैं दूसरी भागवत बनावेंगे। देवी भागवत स्कन्द ३ में लिखा है।

वेदशाखाः पुराणानि वेदान्तभारतं तथा।
कृत्वा संमोहसं मूढोऽभवं राजन्मनस्यपि ॥

वेदों की शाखा और पुराण तथा वेदान्तसूत्र और भारत बनाकर व्यासजी मोह से मूढ़ होगये तब देवीभागवत बनाई देवी या मलतन्त्र में लिखा है।

श्रीमद्भागवतं नाम पुराणं वेदसंमतम्।
पारीक्षितायोपदिष्टं सत्यवत्यङ्ग जन्मना ॥ १ ॥
यत्र देव्यवतारास्च बहवः प्रतिपादिताः।

श्रीमद्भागवत नामक पुराण वेदसम्मत परीक्षित के पुत्र जनमेजय को व्यासजी ने उपदेश किया जिसमें देवी के बहुत अवतार प्रतिपादन किये।

श्रीमान् अब इसका न्याय सनातनी भाइयों के सिर है हमारे विचार में दोनों और अन्य सब पुराण व्यास महाराज के बनाये नहीं हैं।

अब आपको यह भी विचारना उचित है कि व्यास महाराज बड़े विद्वान्, धर्मात्मा और योगिराज थे जिन्होंने वेदान्तसूत्र और मीमांसाकी व्याख्या और योग पर भाष्य किया है जिसमें बड़े २ गम्भीर विषय भरे पड़े हैं जिनके समझने वाले वर्त्तमान समय में बहुत ही कम दृष्टि आते हैं जो सब प्रकारसे वेद, बुद्धि और सृष्टिक्रमके अनुकूल हैं। देखिये वह कहते हैं "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" अर्थात् बिना ज्ञानके मुक्ति नहीं होती और योगदर्शनमें मुक्तिके प्रकरणमें यम, नियमादि सेवन की आज्ञा की है परन्तु पुराणों में जिनको वह व्यासकृत मानते हैं इस लेख के विपरीत मुक्ति के साधन बतलाये हैं फिर भला वह पुराण क्योंकर महर्षिव्यासकृत हो सकते हैं। इन सब बातों के अतिरिक्त इन पुराणों में अनेक बातें वेद, बुद्धि और सृष्टिक्रम के विपरीत भरी पड़ी हैं फिर मैं नहीं जानता कि व्यास से बुद्धिमान पुरुष ने इन पुराणों को बनाया जिनपर तुच्छबुद्धि के मनुष्य शंका करते हैं श्रीमान् पण्डित जी संक्षेप से आप भी सुन लीजिये देखिये राजा वेन के मरने पर उसकी भुजाओं को मथ निषाद और पृथु का उत्पन्न करना, प्रम्लोचामें गर्भ का रहना, फिर मुनि के शाप से गर्भ का पसीना की राह निकल वृक्षों पर से पोंछ उससे मरीषा का जन्म होना, वैवस्वत मुनि की छींक से इक्ष्वाकु और हरिणी के गर्भ से ऋष्यश्रृङ्ग—राजा युवनाश्व की कोख से पुत्र राजा सगर की रानी के साठ हज़ार पुत्रों का होना, अष्टावक्रका गर्भ के भीतर बोलना, राजा प्रियव्रत के रथ के पहिये से सात समुद्रों का होना, राजा ययाति

का अपने पुत्रों को बुढ़ापा देकर यौवन का लेना, गौतममुनि का वीर्य एक सरकण्डे पर गिर पुत्र और पुत्री का उत्पन्न होना, राजा वसु के वीर्य को बाज का लेजाना, मार्ग में यमुना में गिर मछली का निगलना फिर उसके पुत्र, पुत्री का होना, वनतासे अरुण और गरुड़का उत्पन्न होना राजा भोगाश्वनका एक जलाशय में स्नान करते ही स्त्री होजाना फिर मुनि की पुत्री का वशिष्ट की स्तुति करने पर उसका पुरुष होजाना, शुक्र के शिष्य कच का राक्षसों को टुकड़े २ कर कुत्ते सियारों को खिलाना और अपनी पुत्री के अधिक अनुरोध करने पर उसको उनके पेट से जीवित निकालना, देवताओं से वृक्षों की उत्पत्ति, राजा बलाश्व के क्रोध करने पर उसके शरीर से हाथी, घोड़े और सेना का उत्पन्न होना, बल के शरीर करने पर धातुओं का उत्पन्न होना, ज्वर की अद्भुत उत्पत्ति और उसका अनोखा इलाज, शुक्र महाराज के फूटे नेत्र की अपूर्व औषधि, राजा सोमक का पुत्रों के गर्भ जन्तु नाम पुत्र की चर्बी से हवन करना और उसकी गन्ध से रानियों के गर्भ का रहना फिर सन्तान का होना, नारद मुनि और अर्जुन महाराज का स्त्री हो सन्तान उत्पन्न करना फिर पुरुष होजाना. एक वेद से व्यास महाराज का चार वेद करना, ब्रह्मा जी के शरीर छोड़ने से दिनका होना, समुद्र मथने पर कामधेनु गाय, कल्पवृक्ष, मदिरा, अमृत, विष, उच्चैश्श्रवा नाम अश्व व ऐरावत नाम गज और लक्ष्मी का निकलना इत्यादि बातें भरी पड़ी हैं इसके उपरान्त इन पुराणों में पूर्वापर विरोध भी पाया जाता है इससे यह भी प्रकट होता है कि उपरोक्त अठारह पुराण किसी एक विद्वान् के भी बनाये हुए नहीं हैं क्योंकि साधारण मनुष्य भी अपने वचनों को आप खण्डन करना अच्छा नहीं समझता फिर विद्वान् तो कभी भी ऐसा नहीं कर सकते न कि व्यास से विद्वान् और ज्ञानी जिनको सनातनधर्मी परमेश्वर का अवतार मानते हैं। देखिये एक स्थान पर पुराणों में श्रीकृष्ण महाराज को साक्षात् ईश्वर दूसरे स्थान पर नारायण के बार का अंशावतार लिखा है। पद्म पुराण में विष्णु की महिमा गाते हुये लिखा है कि जो मोहवश होकर विष्णु को त्याग कर अन्य देवता की पूजा करता है वह पाखण्डी है और विष्णु के सिवाय और देवताओं पर चढ़ा हुआ पदार्थ जो ब्राह्मण एकबार भी खाता है वह अवश्य चाण्डाल हो जाता है।

शिवपुराण में शिव की महिमा करते हुए कहा है कि त्रिलोकी के स्वामी, नाथ ब्रह्मा और विष्णु के मालिक यही हैं, जो कोई इनको छोड़कर अन्य देवता की उपासना करता है वह चाण्डाल के समान पतित होजाता है। भविष्यपुराण में सूर्यनारायण की पूजा की महिमा गाई है। देवी भागवत में देवी के प्रताप के सन्मुख ब्रह्मा, विष्णु और शिव को तुच्छ ठहराया है वरन् देवी के सन्मुख वह तीनों स्त्री होगये फिर स्तुति करने पर उसीके प्रसाद से स्त्रीत्व उनसे गया और फिर अपने स्वरूप में हुए इसके उपरान्त एकही विषय को पृथक् २ पुराणों में जुदा २ रीति से वर्णन किया है जैसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश और गंगा आदि की उत्पत्ति।

इन सब बातों को छोड़कर पौराणिकजन परमेश्वर को सर्वव्यापक, सर्व सामर्थ्य, सर्वान्तर्यामी, निराकार और अजन्मा कहते हैं फिर उसी परमेश्वर के ब्रह्म, विष्णु, शिव, यह शरीरधारी मान उनमें अनेकान दोषारोपण कर निर्दोष को दोषी बना उसकी पवित्रता में धब्बा लगाते हैं इसी प्रकार उसके अवतारों को मान उनकी पूर्णरूप से निन्दा लिख डाली है फिर अन्य देवताओं की और ऋषियों की निन्दा का क्या ठीक ! ब्रह्मा का अपनी पुत्री पर आसक्त होना और प्रसंग करना, महादेव के विवाह में पार्वती के अंगुष्ठ को देखकर वीर्यपात करना, एक स्त्री के होते एक गोप की स्त्री से विवाह करना, श्रीकृष्ण महाराज, की गायों को चुराना, अपने पुत्र नारद को वृथा शाप देना कि तुम दासी पुत्र हो, शिव के सन्मुख मिथ्या बोलना, ब्रह्मा के सिर को काल भैरव को नख से काटना, पार्वती के शाप से ढाक का वृक्ष होना उसकी डाल से और नाक से वाराह का निकलना, जांघ से एक स्त्री का उत्पन्न होना, केश से सर्प और गान से गन्धर्व का उत्पन्न होना सावित्री के शाप से पूजा का संसार से उठना।

विष्णु महाराज का जालन्धर की पतिव्रता स्त्री वृन्दा का सतीत्व नष्ट करना, राक्षसों को, स्त्री का रूप धर उनको मोहित करना, नारद मुनि को स्त्री बना सन्तान उत्पन्न कर फिर पुरुष बना देना, शंखचूड़ की स्त्री के साथ प्रसंग करना, राजा अम्बरीष की कन्या के अर्थ नारद और पर्वत मुनि को धोका देकर आप ले आना और पूंछने पर उनसे मिथ्या बोलना, सिरका कटना और घोड़े का सिर लगाना भृगु ऋषि की स्त्री का सिर काटना, महादेवजी..................

बढ़ाकर ऋषियों की स्त्रियों का मोहित करना पार्वती के विरह में सप्तऋषियों का स्मरण करना, अतिविषयी होना, अतिथि बनकर सुदर्शन की स्त्री से अनुचित व्यवहार कर परीक्षा लेना, अपने पुत्र गणेश का शिर लड़ाई में काटना, फिर हाथी का सिर जोड़ना, विष्णु महाराज के कहने से राक्षसों के परास्त करने के लिये उनको धर्म से च्युत करने के लिये तामस पुराणों का बनाना, बायें अंगूठे के नख से ब्रह्माजी का पांचवां सिर काटना, फिर कपाली होना, ब्रह्महत्या दूर करने के अर्थ विष्णु महाराज की स्तुति कर उपाय पूछना, तीर्थों में जा अविमुक्त तीर्थ जा हत्यामोचन होना, पुष्कर तीर्थ में यज्ञ के समय नग्न जाना और फिर वहाँ उनको ब्राह्मणों का मारना फिर उनको शाप देना कि कलियुग में तुम वेद से विमुख होजाओगे।

विष्णु महाराज के मोहिनीरूप को देखने की इच्छा प्रकट करना, फिर उनकी माया से मोहित हो विष्णुरूपी स्त्री के पीछे दौड़ना और आलिंगन करने से वीर्यपात होने और धरती पर गिरने से सोने की खानि का होना, भयंकर रूप का धारण कर रहना, विष का पीना, राजा इलाका एक मास स्त्री और एक मास पुरुष का होना।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश का एक होना फिर उनका एक दूसरे से बड़प्पन दिखलाना, बलदेवजी महाराज का शराब पीना, देवी पर मांस चढ़ाना, श्रीकृष्ण महाराज का राधा पर मोहित होकर अवतार पाना, श्री रामचन्द्रजी का सीता के विरह में दुःखित होना, समुद्र पर पुल बांधने और रावण के मारने के लिये व्रत आदि का करना।

इसी प्रकार इन्द्र ने जो देवताओंके राजा थे अपने कार्यकी सिद्धि के लिये अपनी पुत्री जयन्ती को शुक्र के पास भेजा, गौतममुनि की स्त्री अहल्या का पतिव्रत भ्रष्ट करना, कुबेर की स्त्री का सतीत्व नाश मारना, और अपनी सौतेली माता दिति के उदर में सूक्ष्मरूप से घुस के गर्भ के उञ्चास टुकड़े करना।

एक मुनि के पास जाकर बूढ़े पक्षी का रूप धारण कर मनुष्यमाँस भक्षण की इच्छा प्रकट करना, चन्द्रमाजी का अपने गुरु बृहस्पति की स्त्री के साथ समागम कर बुध को उत्पन्न करना, बृहस्पति जी का अपने बड़े भाई उतथ्य की स्त्री से प्रसंग करना, शुक्र का रूप धारण कर राक्षसों से मिथ्या बोल उनको

धर्म मार्ग से हटाना, सूर्य महाराज का घोड़ा बन अपनी स्त्री संज्ञा से घोड़ी के रूप में प्रसंग कर पुत्र उत्पन्न करना, कुन्ती से बाल्यअवस्था में रमण कर गर्भ स्थापन करना, श्रीकृष्ण महाराज की सोलह सहस्र एकसौ आठ स्त्रियों का अपने पुत्र सांब पर मोहित हो प्रसंग की इच्छा का उत्पन्न होना, इत्यादि दोष लगाये हैं परन्तु बुद्ध महाराज पर कोई कलंक नहीं लगाया जिन्होंने संसार में नास्तिकताको फैला दिया इससे प्रत्यक्ष प्रकट होता है कि इन पुराणों को व्यास महाराज ने नहीं बनाया वरन् बौद्ध लोगों ने बनाया है।

श्रीमान् पण्डितजी ! मैं पुराणों की लीलाओं को कहां तक वर्णन करूं, हां पुराणों के रहस्य को वही पुरुष अच्छे प्रकार से जान सकते हैं जो अठारह पुराणों अथवा दश पांच पुराणों को विचारपूर्वक पढ़ते हैं, उनका ही मन पुराणों से उपराम होजाता है और वेदों का महत्त्व उनके हृदय में जमजाता है। ज़रा और भी सुन लीजिये कि इस बात को तो समस्त हिंदू, आर्य्य एकस्वर होकर मान रहे हैं कि सृष्टि की आदि में परमात्मा ने अपना ज्ञान वेद द्वारा दिया फिर सनातनधर्मियों के कथनानुसार व्यास महाराज ने वेदानुकूल १८ पुराण बनाये जो हमारी सम्मति में अत्यन्त ही निर्मूल हैं परन्तु इस स्थान पर यह मान भी लिया जावे तो भी तो ठिकाना नहीं लगता देखिये ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के ब्रह्मखंड अ० १ के आदि में लिखा है कि यह पुराण सब पुराणों में बड़ा वरन् वेद की भूलचूक सुधारने वाला है जैसा कि—

भगवानयतत्वया पृष्टं ज्ञानं सर्वमभीप्सितम् ।

सारभूतं पुराणेषु ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम् ।

पुराणोपपुराणानां वेदानां भ्रमभञ्जनम् ॥

यदि आप यह मानें कि यह पुराण वेदके भ्रमको सुधारने वाला है तो यह पुराण निर्भ्रान्त रहा और वेद जो ईश्वरीय ज्ञान है भ्रान्त वाला रहा तो फिर परमात्मा का पूर्णज्ञानी होना भी नहीं बनता, इधर यह लेख कि पुराण वेदानुकूल बनाये गये हैं तो फिर यदि वेदों में भ्रम है तो क्या फिर पुराण भ्रमरहित हो सकते हैं। हां यह दावा केवल इसी पुराण का है तो फिर १७ पुराण ही वेदानुकूल रहे न कि अठारह; परन्तु तुर्रा तो यह है कि इस पुराण

को भी तो व्यासोक्त माना है पण्डितजी क्या कहें क्या यह बातें व्यासजी से ज्ञानी महात्माओं की होसकती हैं ? कदापि नहीं, अब आप और भी सुनिये इस पृथ्वी पर चारलाख श्लोक व्यास महाराज के कहे हुए प्रकट रहते हैं उन्हींसे अठारह पुराण बनाये गये हैं देखिये मत्स्यपुराण अध्याय ५३ में लिखा है।

तदर्थोऽत्र चतुर्लक्षं संक्षेपेण विशेषताम्।

पुराणानि दशाष्टौ च साम्प्रतं तदिहोच्यते॥

चतुर्लक्षमिदं प्रोक्तं व्यासेनाद्भुतकर्मणा।

श्रीमद्भागवत स्कंद १२ अध्याय १३ श्लोक ८ में लिखा है—

एवं पुराणसंदोहश्चतुर्लक्षउदाहृतः

पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय १ में लिखा है—

तदेवात्र चतुर्लक्षं संक्षेपेण निवेशितम्।

इन पुराण में श्लोकों की गणना निम्नलिखित है उसको भी देख लीजिये किसी में चार लाख नहीं अर्थात् न्यूनाधिक हैं।



मत्स्य			भागवत	देवी भागवत	अग्नि
१ ब्रह्म	...	१३०००	१००००	१००००	५००००
२ पद्म	...	५५०००	५५०००	५००००	१२०००
३ विष्णु	...	२३०००	२३०००	२३०००	२३०००
४ वायु	...	२४०००	२४०००	२४६००	१४०००
५ भागवत	...	१८०००	१८०००	१८०००	१८०००
६ नारदीय	...	२५०००	२५०००	२५०००	२५०००
७ मार्कण्डेय	...	९०००	९०००	९०००	९०००
८ आग्नेय	...	१६०००	१५०००	१६०००	१२०००
९ भविष्य	...	१४०००	१४०००	१४५००	१४०००
१० ब्रह्मवैवर्त्त	...	१८०००	१८०००	१८०००	१८०००
११ लिंग	...	११०००	११०००	११०००	११०००
१२ स्कन्द	...	८१०००	८१०००	८१०००	८४०००
१३ वामन	...	१००००	१००००	१००००	१००००
१४ कूर्म	...	१८०००	१७०००	१७०००	८०००
१५ मत्स्य	...	१४०००	१४०००	१४०००	१३०००
१६ गरुड़	...	१८०००	१९०००	१९०००	८०००
१७ ब्रह्माण्ड	...	१२२००	१२०००	१२१००	१२०००
१८ वाराह	...	२४०००	२४०००	२४०००	१४०००
		४०३२००	३९९०००	३९६२००	३५५०००

इसके अतिरिक्त लिङ्गपुराण अध्याय ६४ में विष्णुपुराण के विषय में लिखा है कि उसमें ६ अंश और छः हज़ार श्लोक हैं। जैसा कि—

षट् प्रकारं समस्तार्थं साधकं ज्ञानसञ्चयम्।
षट्साहस्रमितं सर्व्वं वेदार्थेन च संयुतम्॥

और मार्कण्डेय पुराणमें लिखा है कि पूर्वकालमें ज्ञानी मार्कण्डेय मुनिने छः हज़ार नौसौ श्लोक नियत किये हैं जैसा कि महात्म्य में लिखा है।

श्लोकानां षट्सहस्राणि तथा चाष्टशतानि च।
श्लोकास्तत्र नवाशीति एकादश समाहिताः॥

अब आप ही बतलाइये यह क्या तमाशा है। क्या यह भूलें महात्मा व्याससे ज्ञानियोंके काममें हो सकती है यदि आप ऐसा ही मानलें तो फ़िर उनके अन्य लेखोंके प्रमाण होनेका क्या प्रमाण है। श्रीमान् यह सब बनावटी बातें हैं यथार्थमें यह पुराण किसी प्रकार से व्यास महाराज के बनाये हुए नहीं हैं और यह सब पुराण महाभारत के पीछे बने। जैसा कि मत्स्य अ० ५३ में लिखा है।

अष्टादशपुराणानि कृत्वा सत्यवतीसुतः।
भारताख्यानमखिलं चक्रे तदुपबृंहितम्॥

इसके उपरांत पुराणोंमें महाभारतकी चर्चा है परन्तु महाभारत में पुराणोंकी कुछ भी व्याख्या नहीं। अब श्रीमान् पण्डितजी यदि मैं एक २ पुराण की समीक्षा करूं तो बहुत काल चाहिये इसलिये मैं सब पुराणों से आवश्यक २ विषयोंको सुनाता हूं जिससे आप और अन्य सब पाठकगणों पर भले प्रकार प्रकट हो जावेगा कि उपरोक्त अठारह पुराण महर्षि व्यासकृत नहीं हैं और उनके प्रचलित होनेके निम्नलिखित कारण जान पड़ते हैं।

(१) महाभारतके बड़े भारी संग्राममें बड़े २ ज्ञानी, विद्वान् और महात्माओं का मारा जाना।

(२) माण्डलिक राज्य होनेसे धर्मकी ओरसे राज्यभय न रहना, धार्मिकावस्था का नष्ट होना।

(३) ब्राह्मणोंका लोभादिमें फंस मदोन्मत्त क्षत्री राजाओं की शुश्रूषा के कारण उनकी इच्छानुसार धार्मिक व्यवस्था देना।

(४) ब्रह्मचर्याश्रमकी उत्तम प्रणाली को उठा गुरुकुलकी शिक्षाको दूर कर बाल्यावस्थामें विवाह का आर्डर जारी करा विषय भोगमें लगा बुद्धिहीन कर देना।

(५) स्त्रियों को शूद्र बता, शिक्षासे विमुख रख, चेली बना अपने कार्यकी पूर्त्ति करना।

(६) पाप निवृत्तिके लिये राम, कृष्ण, गङ्गा आदिके नाम काशी, प्रयाग इत्यादि तीर्थोंके दर्शन और नाना प्रकारके व्रत बना उनके बड़े २ माहात्म्य सुना २ निर्भयता प्रदान कर सत्यधर्म अर्थात् वेदमार्ग से विमुख कर देना।

(७) सच्चे साधु-महात्मा-विद्वानों के "ब्रह्मवाक्य जनार्दन" इस वाक्यके स्थान पर अविद्वानों, मूर्खों और अज्ञानियों के वाक्यको सर्वोपरि मानना।

(८) निराकार, अद्वितीय, अजन्मा, परमात्माका जन्म बता कर मिट्टी, पत्थर, काष्ठ, पीतलादि की देवताओंकी कपोलकल्पित मूर्त्तियां नियत कर, उनके पूजनकी नानाविधि बता मुक्ति करा देना।

(९) श्रीमहाराज इनके प्रचलित होनेके उपरोक्त कारणों के सिवाय सबसे बड़ा कारण यह भी हुआ कि इन पुराणों में यह अच्छे प्रकार लिख दिया कि इनके सुनने से ही बड़े २ महापाप नष्ट होजाते हैं, इस नुसखे ने भारत पर ऐसा प्रभाव डाला कि भारतवासी वेदों का नाम तक भूल गये कृपाकर आप भी कुछ सुन लीजिये। देखिए! आपका मन कैसा पसीजता है।

पद्म पुराण-षष्ठउत्तरखंड अ० १९७ में लिखा है कि जो पुराणोंको सुनते हैं वह पुत्रहीन पुत्रको, धनकी इच्छा करने वाला धनको, विद्याकी इच्छा वाला विद्याको और मोक्षकी इच्छा वाला मोक्षको पाते हैं और उनके निश्चय करोड़ जन्मोंके इकट्ठे किये हुए पापसमूहोंको नाशकर भगवान्‌के लोकको जाते हैं।

ये श्रृण्वन्ति पुराणानि कोटि जन्मार्जितं खलु।
पापजालं तु ते हत्वा गच्छन्ति हरिमन्दिरम्॥

पद्म चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अ० २५।

पंचम पातालखण्ड अध्याय ११५ श्लोक ४२ में लिखा है कि वेदाध्ययन, तप, मन्त्र, हवन इतना फल नहीं देते जितना पुराणों का सुनना फल देता है।

न स्वाध्यायस्तपो वापि न मन्त्रो न जुहोतयः।

फलन्ति न तथा तिष्ये पुराणश्रवणं तथा॥

पञ्चम पातालखण्ड अध्याय १२ श्लोक ३८में कहा है कि जो क्रमपूर्वक पुराणों को सुनता है वह ब्रह्महत्या के बन्धन से छूट जाता है। हे रामचन्द्रजी! मदिरापान करने और सुवर्ण चुराने, गुरु की स्त्री के सङ्ग भोग करने के पाप से विमुक्त होजाता है।

एवं पुराणश्रृणुयाच्चयस्तु स ब्रह्महत्याकृतपापबंधात्।

सुरापीतिः स्वर्णहरश्च राम गुर्वंगनागश्च विमुक्तमेति॥

और इसी अध्याय में यह भी लिखा है कि जो कोई सब पुराणों के नामको लेता और सुनता है उसके धन का कभी नाश न हो वृद्धि होती तथा वेद के सुनने से अधिक और पुष्कर तीर्थ में दान करने के समान फल मिलता है।

यश्च सर्वपुराणानि षट्त्रिंशत्तु प्रकीर्त्तयेत्।

श्रृणोतिवानतस्यास्ति वित्तच्छेदः कदाचन॥ ८॥

पुष्करे दानपुण्यं श्रवणादस्य जायते।

सर्ववेदाधिकफलं समाप्त्यां चाधिगच्छति॥

शिवपुराण—धर्मसंहिता अध्याय ४६ में लिखा है कि अर्थ, काम, मोक्ष के निमित्त यज्ञ, दान और तीर्थ सेवा से जो फल मिलता है वह फल मनुष्यों को पुराण श्रवण करने से प्राप्त होता है।

धर्मार्थकामलाभाय मोक्षमार्गाप्तये तथा।

यज्ञैर्दानैस्तपोभिस्तु यत्फलं तीर्थसेवया॥

वामन—पुराण अध्याय ६२ में लिखा है जिस प्रकार गङ्गाजी में स्नान करने से पाप दूर होजाते हैं उसी भांति पुराण सुनने से भी पाप नाश होते हैं।

यथा पापानि पूयंते गंगावारि विगाहनात्।

तथापुराण श्रवणाद्दुरितानां विनाशनम्॥

मार्कण्डेय-पुराण के महात्म्य में लिखा है कि जो कोई अठारह पुराणों के नाम तीनों संध्याओं में जपता है उसको अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है और ब्रह्महत्यादिक जो पाप हैं उन पापों का ऐसा नाश होजाता है जिस प्रकार हवा के लगने से तृण उड़ जाता है

अष्टादशपुराणानां नामधेयानि यः पठेत् ।
त्रिसन्ध्यं जपेत् नित्यमश्वमेधफलं लभेत् ।
ब्रह्महत्यादि पापानि यान्यन्यान्यशुभानि च ।
तानि सर्व्वाणि नश्यन्ति तृणं वातहतं तथा ॥

शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय २१ श्लोक ६२ में लिखा है कि जिस प्रकार मुझको पुराण प्रिय हैं ऐसे अंगो सहित चारों वेद प्रिय नहीं हैं।

यथैतानि ममेष्टानि पुराणानि सदा मुने ।
न तथा चतुरो वेदान् चाँगानि महामते ॥

पद्मपुराण पंचम पातालखण्ड-उत्तरार्द्ध अध्याय १ में लिखा है जो सब वेदों के भीतर प्रविष्ट होता है व सब शास्त्रों को जानता है परंतु पुराण नहीं सुनता उसकी अच्छी तरह से गति नहीं देखते—

अतं गतस्य वेदानां सर्वशास्त्रार्थवेदिनः ।
पुँसोऽश्रुत पुराणस्य नसम्यग्याति दर्शनम् ॥

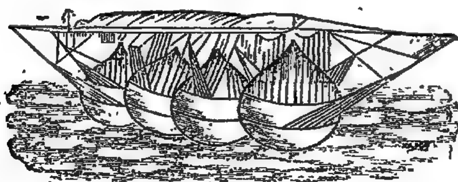
श्रीमान् पंडित जी देखा-कैसे २ कार्य रचकर वेदों के मान को घटाया। और पुरानों की प्रतिष्ठा को बढ़ाया तब ही तो भारतवासी तन, मन, धनसे पुराणों की आज्ञा पालन में लग गये इसके उपरांत पद्म पुराण सृष्टिखंड अध्याय १०४ में यह भी लिख दिया कि ब्रह्माजी ने सब शास्त्रों से प्रथम पुराणों को कहा जो धर्म, अर्थ और काम के देने वाले हैं।

सर्वज्ञात्सर्वलोकेषु पूजितादीप्ततेजसः ।
पुराणं सर्व शास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणास्मृतम् ॥

उत्तम सर्वलोकानां सर्वज्ञानोपपादकम् ।
त्रिवर्ग साधनं पुण्यं शतकोटि प्रविस्तरम् ॥

श्रीमान् समय होगया इसलिये विश्राम देता हूँ, पंडितजी ने कहा कि अच्छा सेठजी अब हम जाते हैं सुयोग्य पंडितजी-आयुष्मान कह कर चल दिये तब अन्य महाशयों ने यथा योग्य किया और पंडितजी ने आशीर्वाद दिया सब अपने गृह को गये ।

॥ इति प्रथम परिच्छेद ॥



द्वितीय परिच्छेदः

पूर्ववत् पंडितजी का आगमन देख,सेठजी ने नमस्ते की।

परिडतजी–आयुष्मान् कह कर बैठ गये और घरकी बातचीत होने लगी, इतने में अन्य महाशयगण आगये सब यथायोग्य कर बैठ गये।

आर्यसेठ–पंडितजी आज मेरा पूथम कहना यह है कि जब परमात्मा ने अपना ज्ञान सृष्टि की आदि में वेद द्वारा दे दिया था जिसको सम्पूर्ण पुराण भी स्वीकार करते हैं तो फिर पुराणों के बनाने की क्या आवश्यकता हुई ? यद्यपि इसका उत्तर श्रीभागवत स्कन्ध १ अध्याय ४ में इस प्रकार दिया है कि "स्त्री और शूद्र और इनसे जो अधम हैं उनको वेदत्रय सुनने का अधिकार नहीं है" इसलिये उन सबके कल्याण के अर्थ व्यासजी महाराज ने वेदों के अर्थ लेकर महाभारत आदि पुराण रचे। यदि हम इसको थोड़ी देर के लिये प्रमाणकोटि में मान भी लें तो इसमें दो बातें उत्पन्न होती हैं। प्रथम यदि यह वेदों के अर्थों को लेकर ही बनाये गये हैं तो वेदों के अनुकूल क्यों नहीं और उनमें आपस में विरोध क्यों है द्वितीय जब यह स्त्री तथा शूद्र, अधम जातियों ही के लिये बनाये गये तो फिर ब्राह्मण, क्षत्री,वैश्यों को इनके श्रवण से क्या लाभ। देखिये–

स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा
कर्मश्रेयसि मूढानां श्रेय एवं भवेदिहि ॥ २५ ॥
इति भारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतम् ।
वेदार्थं च समुद्धृत्य भारते प्रोक्तवान् मुनिः ॥ २६ ।

देवीभागवत स्कन्ध १ अध्याय ३ के २१ श्लोक में भी लिखा है।

स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां न वेदश्रवणं मतम् ।
तेषामेव हितार्थाय पुराणानि कृतानिच ॥२१॥

परन्तु परिडतजी यजुर्वेद अध्याय २६ मन्त्र २ में परमेश्वर आज्ञा देता है कि जैसा मैं सब मनुष्यों के लिये इस कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के देनेहारी चारों वेदोंकी वाणी का उपदेश करता हूँ वैसे तुम भी किया करो।

यथेमां वाचं कल्याणी मा वदानि जनेभ्यः ब्रह्म राजन्या भ्याᳬ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ॥१॥

पण्डितजी ! अब आप इस बात पर विचार कीजिये कि परमेश्वर सब का पिता है वह सबका पालन पुत्रवत् करता है, उसके बनाये हुये पदार्थ सम्पूर्ण प्राणियोंको एकसा लाभ देते हैं और उनमें सबका भाग बराबर है, जो जितना चाहे बुद्धि, बल अनुसार ग्रहण करे। जैसा वायु, जल, पृथिवी, सूर्य्य, चन्द्र आदि में सबको एकसा ही अधिकार है, दसों इन्द्रियां भी स्त्री, शूद्र एवं मनुष्य मात्र के एक समान हैं। सबकी उत्पत्ति और मरण एक ही प्रकार है फिर क्या ईश्वरीय ज्ञान प्राणीमात्र के लिये नहीं है? इसके अतिरिक्त स्त्रियाँ पुरुष की अर्द्धाङ्गिनी कहाती हैं। पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय ३ से विदित होता है कि ब्रह्माजी के कहने पर जब उनके पुत्रों ने सृष्टि नहीं रची तब उनको अति क्रोध उत्पन्न हुआ जिससे तीनों लोक जलने लगे और हाहाकार मचगया तब उनकी भौंहें कुटिल होगईं, मस्तक में सुकड़न पड़गई उससे रुद्र का अवतार हुआ जिसमें आधे अङ्ग स्त्री और आधे पुरुष के थे तब ब्रह्मा के कहने से उन्होंने स्त्री और पुरुष रूप को पृथक् २ कर दिया।

ब्रह्मणोभून्महान्क्रोधस्त्रैलोक्यदहनक्षमः।
यस्यक्रोधात्समुद्भूतं ज्वालामालावदीपितम् ॥१७१॥
ब्रह्मणस्तुतदा ज्योतिस्त्रैलोक्यमखिलं दहत्।
भृकुटी कुटिलात्तस्य ललाटात्क्रोधदीपितात् ॥१७२॥
समुत्पन्नस्तदा रुद्रो मध्याह्नार्कसमप्रभः।
अर्द्धनारी नरवपुः प्रचण्डोतिशरीरवान् ॥१७३॥
विभजात्मानमित्युक्त्वातब्रह्मांतर्दधे ततः।
तथोक्तोसौद्विधास्त्रीत्वं पुरुषत्वं तथाकरोत् ॥१७४॥

पद्म उत्तरखण्ड अध्याय २४३ में महादेवजी ने श्रीरामचन्द्र जी से कहा है कि तीनों लोकों में जो स्त्रीलिंग हैं वह सब जानकी जी हैं और हे प्रभो पुल्लिङ्ग में जो हैं वह सब आप हैं ॥३६॥

स्त्रीलिङ्गेषु त्रिलोकेषु यत्तत्सर्वं हि जानकी।
पुन्नाम लांछितं यत्तु तत्सर्वं हि भवान्प्रभो ॥३६॥

सृष्टिखण्ड अध्याय ३ में लिखा है कि ब्रह्माजी के कहने पर महादेव जी ने अपना शरीर पृथक् करलिया, स्त्री का अलग फिर जो पुरुष रूप था उसमें ग्यारह होगये।

शिवपुराण वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय १४ में लिखा है कि ब्रह्मा जी ने सृष्टि रचने की इच्छा की तो अपने आधे शरीर से नारी और आधे से पुरुष हो गये; जो नारीरूप था उससे शतरूपा प्रकट हुई।

स्वयमप्यर्द्धतोनारी चार्द्धेन पुरुषोऽभवत्।
याऽर्द्धेन नारी सा तस्माच्छतरूपा व्यजायत॥२॥

वायुपुराण अध्याय १० श्लोक ८ में भी कहा है॥

स्वां तनुं स ततो ब्रह्मा तामपोहद्भास्वराम्।
द्विधा करोत्सतं देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत्॥
अर्द्धेन नारी सा तस्य शतरूपा व्यजायत॥

ऐसा ही मार्कण्डेय पुराण अध्याय ५० में लिखा है कि जब ब्रह्मा के पुत्रों ने सृष्टि न की तब ब्रह्मा जी को कोप उत्पन्न हुआ और वह सूर्य के समान महातेजवान् हो आधा अङ्ग स्त्री आधा पुरुष का प्रकट हुआ और कहा कि आत्मा का विभाग करो यह सुन कर ब्रह्मा ने पृथक् २ कर दिया॥

तेष्वेवं निरपेक्षेषुलोकसृष्टौमहात्मनः।
ब्रह्मणोऽभून्महाक्रोधस्तत्रोत्पन्नोर्कसन्निभः॥ ९॥
अर्द्धनारीनरवपुः पुरुषोऽतिशरीरवान्।
विभजात्मानमित्युक्त्वासतदान्तर्दधेततः॥१०॥
सचोक्तोवैपृथक् स्त्रीत्वंपुरुषत्वं तथाकरोत्॥११॥

लिङ्गपुराण अध्याय ५ में लिखा है कि सृष्टि के आदि में ब्रह्माजी ने शिवजी को अर्द्धनारीश्वर देखकर कहा कि आप स्त्री पुरुष विभाग करें तब

शिवजी के देह से सतीजी पृथक् हो गई जगत् में जितनी स्त्री जाति हैं वह सब सती का अंश हैं और सम्पूर्ण पुरुष जाति तथा ग्यारह रुद्र शिवजी का अंश हैं।

एकादशविधारुद्रास्तस्य चांशोद्भवास्तथा ॥२९॥

स्त्रीलिङ्गमखिलं सा वै पुल्लिङ्ग नीललोहिता ॥३०॥

और अध्याय ३३ में महादेव ने मुनियों से कहा है कि जगत् में जितने स्त्रीलिङ्ग हैं सब मेरे देह से उत्पन्न भई प्रकृति का स्वरूप हैं यह सब सृष्टि प्रकृति पुरुषरूप नारी नरों से व्याप्त है इसलिये किसी की भी निन्दा न करनी चाहिये फिर अध्याय ४१ में लिखा है कि जब ब्रह्मा के मानसी पुत्रों से सृष्टि वृद्धि न हुई तब उनके साथ तप करने लगे और जब शिवजी प्रसन्न हुए तब ब्रह्माजी का ललाट भेद कर स्त्री पुरुष रूप से उत्पन्न हुये।

ललाटमध्यंनिर्भिद्य ब्रह्मणः पुरुषस्य तु।

पुत्रस्तेऽहमिति प्रोच्यस्त्री पुंरूपोऽभवत् तदा ॥६॥

शिवपुराण वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय ५ में लिखा है।

जैसे शिव वैसी देवी जैसी देवी तैसे शिव हैं, चन्द्रमा और चांदनी के समान हैं इनमें अन्तर जानना उचित नहीं, चांदनी के बिना चन्द्रमा शोभित नहीं होता और चन्द्रमा के बिना चांदनी नहीं, ऐसे ही बिना शक्ति के शिव शोभित नहीं होते और अध्याय ५ में लिखा है कि शिवा और शिव के बिना यह चराचर जगत् उत्पन्न नहीं होता स्त्री और पुरुषों से उत्पन्न हुआ यह जगत् स्त्री पुरुषात्मक है। स्त्री और पुरुषों की विभूति स्त्री, पुरुषों से अधिष्ठित है परमात्मा शिव और वह शिवा कहलाती है और क्या कहें सब पुरुष शङ्कर हैं और सब स्त्रियें पार्वती हैं इस कारण सब स्त्री और पुरुष उनकी विभूति हैं।

शंकरः पुरुषाः सर्वे स्त्रियः सर्वा महेश्वरी।

सर्वे स्त्री पुरुषास्तस्मात्तयोरेव विभूतयः ॥५५॥

वाराहपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय २ में लिखा है कि रुद्र नाम ब्रह्माजी के क्रोध करने से जो उत्पन्न हुए वो अर्द्धनारी नर होने से अर्द्धनारीश्वर कहलाये उनको ब्रह्माजी ने आज्ञा दी कि निज देह का विभाग करो अर्थात् स्त्री और पुरुष जुदे २ होकर रहो ऐसा ही रुद्र ने किया।

योऽसौ रुद्रेति विख्यातः पुत्रःक्रोधसमुद्भवः ॥४८॥
अर्द्धनारीनरवपुः प्रचण्डोऽतिभयङ्करः ॥ ४९ ॥
विभजात्मानमित्युक्ता ब्रह्माचान्तर्दधेपुनः ।
तथोक्तो सौ द्विधास्त्रीत्वं पुरुषत्वं चकारसः ॥५०॥

इसके उपरान्त श्रीमद्भागवत स्कंद १ अ० ३ में लिखा है कि विष्णु महाराज ने मोहिनी अर्थात् स्त्री का रूप धारण कर राक्षसों को मोहित कर अपना कार्य सिद्ध किया।

अपाय यत्सुरानन्यान्मोहिन्या मोहयन् स्त्रिया ॥१७॥

पुनः स्कंद ८ अध्याय ८ में भी लिखा है कि विष्णु भगवान् ने अद्भुत स्त्री का स्वरूप धारण किया। ऐसा ही विष्णु अं० १ अ० ६ श्लोक १०७ में लिखा है।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय २ में लिखा है कि सृष्टिकर्ता श्रीकृष्ण प्रभु के प्रेरणा और अपनी इच्छा से दो प्रकार के रूप अर्थात् बायें भाग से स्त्री रूप और दक्षिण भाग से पुरुष उत्पन्न हुआ।

स कृष्णः सर्वसृष्ट्यादौ सिसृक्षु रेक एव च ।
सृष्ट्योन्मुखस्तदंशेन कालेन प्रेरितः प्रभुः ॥२८॥
स्वेच्छामयः स्वेच्छया च द्विधारूपो बभूवह ।
स्त्रीरूपा वामभागांशा दक्षिणांशः पुमान्स्मृतः ॥२९॥

अग्निपुराण अध्याय १७ में लिखा है कि ब्रह्मा ने आधे अङ्ग से पुरुष और आधे से नारी को उत्पन्न किया।

द्विधा कृत्वात्मानो देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत् ।
अर्द्धेन नारी तस्यां स ब्रह्मा वै चासृजत प्रजाः ॥१६॥

पण्डित जी! आप ही बतलाइये कि जब आपके पुराण, स्त्री और पुरुषों की उपरोक्त प्रकार से उत्पत्ति जो वेद के विपरीत है बतलाते हैं और और स्वयं विष्णुजी ने भी मोहिनी अर्थात् स्त्री का रूप धारण कर राक्षसों से अपना कार्य किया। फिर बतलाइये स्त्रियों को वेद श्रवण का अधिकार क्यों

नहीं रहा वह शूद्रा क्यों कर हो सकती हैं क्योंकि वर्ण, गुण, कर्म, स्वभाव से होते हैं। इस कारण स्त्रियों पर ही क्या जिनके गुण, कर्म, स्वभाव उत्तम होते हैं वह स्त्री और पुरुष उत्तम और जिनके मध्यम. कनिष्ठ और नीच होते हैं वह मध्यम कनिष्ठ नीच श्रेणियों में प्रगणित हो जाते हैं इसके उपरांत धर्मसंहिता अध्याय ४४ से प्रकट होता है कि सूर्य, इन्द्र, और अग्नि स्त्रियों के चरित्र जानने के लिये चले, मार्ग में अरुन्धती मिली उनसे प्रश्न किया, तब अरुन्धती ने उत्तर में कहा कि हे साधुओ! आप निस्सन्देह जानो कि स्त्रियां देव सम्मति हैं उत्तम, मध्यम और निकृष्ट तीन प्रकार की होती हैं।

स्त्रीणां हि चरितं प्रष्टुम तोयामः स्वमालयम् ।
इत्युक्त्वातानुवा चेदमुत्तमाधममध्यमाः ॥२८॥
संतिनो विस्मयः कार्यः स्त्रियोः हि देवसंमताः ॥२९॥

गीता के अध्याय ११ में श्रीकृष्ण महाराज ने सम्पूर्ण सृष्टि के प्राणियों को दैवी और आसुरी सम्पत्ति में विभाग किया है दैवी सम्पत्ति में वह प्राणी गिने जाते हैं जो शुद्ध रह कर प्रसन्नचित्त हो आपत्ति विचार कर दानशील वाह्य इन्द्रियों को रोकने के लिये अग्निहोत्रादि यज्ञों का अनुष्ठान, ब्रह्मयज्ञ अर्थात् संध्योपासनादि करते हैं। फिर भला स्त्रियों को वेदश्रवणादि का अधिकार क्यों नहीं रहा, जब कि वह शिवपुराण के लेखानुसार दैवी सम्पत्ति हैं इसके उपरांत विष्णुपुराण अंश ६ अध्याय २ में देवता लोग जब व्यासजी के समीप गये तो व्यासजी ने स्त्रियों को साधु कहा इस पर उन्होंने पूंछा यह साधु क्योंकर हैं तब व्यास ने उत्तर दिया कि स्त्रियां मनसा, वाचा, कर्मणा से पति की सेवा करने से पति लोक को चली जाती हैं। देखिये पण्डित जी पति सेवा में बहुधा कार्य सम्मिलित हैं जिनका उपदेश श्रीमद्भागवत स्कंद ७ अध्याय ११ में नारद मुनि ने किया है उसमें लिखा है स्त्रियों का पति देवता है उनकी सेवा करे अनुकूल रहे देवर जेठ की भी सेवा कर आज्ञा का पालन करती रहे घर के सब पदार्थों को और आप भी सब प्रकार से शुद्ध रहे। साध्वी स्त्री गृह के छोटे बड़े सब कार्यों को करे इन्द्रियों को जीते प्रिय सत्य वाक्यों से पति की सेवा करे जो लाभ हो उसमें संतोष कर भोगों में लोलुप न हो आलस्य न करे धर्म

को जानती रहे प्रिय सत्य बोले मदान्ध न हो पवित्र होकर अयोग्य पति की भी सेवा करे।

स्त्रीणां च पति देवानां तच्छुश्रूषाऽनुकूलता।
तद्‌ बंधुष्वनुवृत्तिश्च नित्यं तद्व्रतधारणम् ॥२५॥
संमार्जनोपलेपाभ्यांगृहमण्डल वर्तनैः ॥
स्वयं च मण्डिता नित्यं परिमृष्टपरिच्छदा ॥२६॥
कामैरुच्चावचैः साध्वीप्रश्रयेण दमेनच।
वाक्यैः सत्यैः प्रिये प्रेम्णा काले काले भजेत पतिम् ॥२७॥
सन्तुष्टाऽलोलुपादक्षा धर्मज्ञा प्रियसत्यवाक्।
अप्रमत्ता शुचिःस्निग्धा पतित्वं पतितं भजेत् ॥२८॥
या पतिंहरिभावेन भजेच्छ्रीरिवतत्परा।
हर्यात्मना हरेर्लोके पत्या श्रीरिवमोदयेत् ॥२९॥

कहिये पण्डितजी क्या इस समय नारदमुनि के उपदेश अनुकूल स्त्रियां उपरोक्त धर्म का पालन कर रही हैं कदापि नहीं क्योंकि इन्द्रियों का निग्रह करना और विषयों को मिथ्या आनन्द विषवत् त्यागना विना पूर्ण ब्रह्मचर्य और पूर्णविद्या और ज्ञान के नहीं हो सकता और सन्तोषरूपी महान् सुख जितेन्द्रियों को ही मिलता है अन्यथा अजितेन्द्रियों को नहीं—पदार्थों का संग्रह कर यथावत् रखना और उपयोग में लाना, भोजन बनाना विना पदार्थ और वैद्यकविद्या के नहीं हो सकता और विना इसके आरोग्यता नहीं मिलती जो सब आनन्दों को जड़ है इसलिये नियमानुकूल चलना अभीष्ट है जो विना ब्रह्मचर्य आश्रम पालन किये दुस्तर है इसके उपरांत पति आदि से सत्यप्रिय और यथावत् बोलना क्या विना विद्या और उत्तम शिक्षा के हो सकता है कदापि नहीं स्वच्छता को आनन्द भी उन्हीं स्त्रियों को मिलता है जो विदुषी होती हैं इन सब बातों के उपरांत मदान्ध न होना और अयोग्य पति की सेवा करना क्या अनपढ़ स्त्रियां कर सकती हैं कदापि नहीं कर सकतीं इसलिये नारदमुनि का

उपदेश अर्थात् स्त्री धर्म से प्रत्यक्ष प्रकट हो रहा है कि विद्यावती स्त्रियां ही उपरोक्त धर्म का पालन कर सकती हैं इस हेतु स्त्रियों को यथावत् शिक्षा करनी चाहिये और प्रथम ऐसा ही होता था इसके उपरांत सम्पूर्ण पुराण स्त्रियों के लिये नाना व्रतों के रहने का उपदेश कर रहे हैं जिनमें अनेकान मन्त्र बोलने और जप करने की आज्ञा है देखिये शिव पुराण धर्म संहिता अध्याय ३७ में लिखा है—

(अघोरे श्री हीं हुं फट्) मन्त्र १७।

इस मन्त्र का भक्ति से जप करने से सम्पूर्ण वर्ण, आश्रम, बाल, वृद्ध, स्त्रियां कोई हो आस्तिक श्रद्धावाला प्रतिदिन भक्ति करने से शिव के प्रसाद से सिद्ध हो जाते हैं।

सर्वाश्रमाणां वर्णानां बालवृद्धस्त्रियामपि ।
आस्तिकः श्रद्दधानश्च अहन्यहनि भावतः ॥५६॥
सिद्ध्यते हि किमाश्चर्यं प्रसादाच्छंकरस्य वै ॥६०॥

शिवपुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय १७ में लिखा है कि (नमःशिवाय) स्त्रियां इस मन्त्र को पाँच लाख जप कर पुरुष रूप को प्राप्त हो क्रम से मुक्ति को पाती हैं।

स्त्रीत्वापनयनार्थं तु पंचलक्षं जपेत्पुनः ।
मन्त्रेण पुरुषो भूत्वा क्रमान्मुक्तो भवेद्बुधः ॥

इसके उपरांत विवाह में प्रतिज्ञा ये करनी पड़ती है।

ओं अन्नपाशेन मणिना प्राण सूत्रेण पृश्नना बध्नामि ।

जिस प्रकार अन्न के साथ प्राण और प्राण के साथ अन्न तथा अन्न और प्राण का अन्तरिक्ष के साथ सम्बन्ध है उसी भांति सत्यता की गांठ से तुमको बांधती हूँ वा बांधता हूँ। इसी प्रकार अनेक प्रतिज्ञायें करने की आज्ञा है।

लीजिये पण्डितजी अब तो मन्त्र जपने की आज्ञा पुराण दे रहे हैं फिर आप ही बतलाइये मन्त्र का शुद्ध शुद्ध उच्चारण बिना व्याकरण पढ़े कभी हो सकता है कदापि नहीं इससे जान पड़ता है कि स्त्रियां प्राचीन काल में व्याकरण

पढ़ती थीं। इसके उपरांत पारमार्थिक कामों को स्त्री, पुरुष मिल कर किया करते थे देखिये पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय १६ में लिखा है।

ब्रह्माजी ने पुष्कर क्षेत्र में यज्ञ किया और उनकी पत्नी के आने में देर हुई तब ब्रह्माजी ने इन्द्र से कहा कि हमारे लिये कोई स्त्री लाओ जिससे यज्ञ हो जावे। तब एक अहीर की पुत्री जिसकी शोभा सब स्त्रियों से उत्तम थी जिसके रूप आदि का वर्णन वहां विस्तारपूर्वक लिखा है इन्द्र पकड़ कर ले चले तब वह रो रो कर कहती थी कि यदि मुझ से आपका कार्य चले तो आप मेरे माता पिता से मांगिये। इन्द्र ने ले जाकर ब्रह्माजी के समीप खड़ा कर दिया जिसको ब्रह्माजी ने दूसरी लक्ष्मी समझ उससे कहा कि तुमको सब अपना प्रभुत्व देंगे यदि तुम प्रसन्नतापूर्व हमारे साथ रहना पसन्द करो। इतने में अग्नि प्रज्वलित होने का समय हो गया। तब महाराज से कहा कि इस देवी का नाम जो अभी आई है गायत्री है इतना कह तुरन्त गांधर्व विवाह कर लिया, फिर अध्वर्यु ने उत्तम वस्त्र पहनाकर यज्ञशाला में बिठलाकर, देवताओं के साथ सहस्र वर्ष तक यज्ञ किया।

एवमुक्तस्तदा ब्रह्मा किंचित्कोपसमन्वितः।
पत्नीं चान्यां मदर्थं वै शीघ्रं शक्रइहानय ॥१२८॥
एवमुक्तस्तदा शक्रो गत्वा सर्वं धरातलम्।
आभीरकन्या रूपाढ्या सुना सा चारुलोचना।
तां दृष्ट्वा चिंतयामास यद्य षा कन्यका भवेत् ॥१३५॥
इत्थं सा भाष्यमाणस्तु तदा शक्रो नयच्चताम्।
गांधर्वेण विवाहेन विकल्पं माकृथाश्चिरम् ॥१८६॥
तामवाप्य तदा ब्रह्मा जगादाध्वर्युं सत्तम।
कृता पत्नी मया ह्येषा सदने मे निवेशय ॥१८८॥
मृगश्रृंगधरा बाला क्षौमवस्त्रावगुंठिता।
पत्नीशालां तदानीता ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः ॥१८६॥
तथा युगसहस्रं तु सयज्ञः पुष्करेऽभवत् ॥ १६१ ॥

और पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय ६७ में लिखा है कि रामचन्द्रजी ने राजसूय यज्ञ किया और सीता के न होने पर सुवर्ण की स्त्री बना ग्रन्थबन्धन किया और जब लक्ष्मणजी के जाने पर सीता स्वयं आ गई तो राम का उनके साथ ग्रन्थीबन्धन कराया गया।

समागतां वीक्ष्य पत्नीं रामचन्द्रस्य कुम्भजः।
सुवर्णपत्नीं धिक्कृत्यतामथाद्धर्मचारिणीम् ॥१६॥

इसलिये जो कोई स्त्री को त्याग कर कार्य करता है उसका विशेष धर्म छूट जाता है और अपने कर्म के योग्य नहीं रहता।

अपत्नीको नरो भूप न योग्यो निजकर्मणां।
ब्राह्मणः क्षत्रियोवापि वैश्यः शूद्रोऽपिवानृप ॥१०॥

इसी पुराण के अध्याय २० में मन्दालसा की सखी ने शत्रुजित के पुत्र ऋतुध्वज से विवाह होने पर कहा है कि स्त्री, अर्थ, धर्म और काम में अपनी स्वामी की सहायक है इसलिये स्वामी को स्त्री की सदा रक्षा और पालन करना चाहिये क्योंकि दोनों की प्रसन्नता से कार्य्य सिद्ध होते हैं स्त्री को त्याग पुरुष उपरोक्त तीनों कार्य पूर्ण नहीं कर सकता इसी भांति पुरुष को छोड़ कर अकेली स्त्री नहीं कर सकती। यदि पुरुष धन पैदा कर लावे तो बिना उसकी रक्षा के उसका नाश होजाता है जिस प्रकार पुत्र से पिता, अन्नादि से अभ्यागत, पूजासे विद्वान् लोग तृप्त होते हैं उसी भाँति अच्छी स्त्री से पुरुष संतुष्ट होता है। पद्म पुराण द्वितीय भूमिखंड अध्याय ६० श्लोक ६ में लिखा है कि जब गृहस्थ अपनी स्त्री के साथ यज्ञ करता है तब उसके सब यज्ञ सिद्ध होते हैं अकेले करने से नहीं प्रथम खण्ड अध्याय १९ श्लोक ५१ में लिखा है कि जो गृहस्थ अकेला पुष्कर स्नान को आये तो उसको चाहिये कि कमल के पत्ते की स्त्री बना कर उसके संग ग्रन्थि बन्धन करके स्नानादि करे।

एकाकिनाशते नापि सन्ध्या वन्द्यायथाक्रमम्।
पौष्करेण्यतो येन भृङ्गारेनिहितेन तु ॥ ५१ ॥

इन्हीं लेखों के कारण वर्त्तमान समय में पण्डितगण जिस पुरुष को स्त्री नहीं होती उसके समीप कुशको स्त्री बना कर रख यज्ञादि किया कराते हैं–हमारी

समक्ष में सुवर्ण-कमल और कुशकी स्त्री वना कर रखने से कुछ लाभ नहीं हाँ वेदानुकूल जहां तक होसके स्त्री और पुरुष एक साथ रह कर परस्पर प्रीति से सांसारिक और पारलौकिक कार्यों को करें। न कि पुरुष ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, और स्त्री, शूद्र इनका जोड़ा गृहस्थाश्रम में वना जीवन की गाड़ी को खिंचा कर सुखकी आशा करना अत्यन्त ही भूल की वात है। पण्डितजी ! विद्वान् का विद्वान् और मूर्ख से मूर्ख का मेल होता है न कि इस प्रकार का जैसा कि पौराणिक जन वताते हैं अर्थात् पुरुष को वेद पढ़ने सुनने का अधिकार स्त्री को पढ़ने और सुनने का स्वत्व नहीं फिर भला आनन्द कैसा--इसके उपरान्त तुर्रा यह है कि व्यासजी महाराज ने यह सव पुराण वेदों के अर्थ लेकर अर्थात् वेदानुकूल वनाये जिनके सुनने आदि का अधिकार स्त्री इत्यादि को है परन्तु वेदों के पढ़ने का नहीं इसके अतिरिक्त पुराणों में यह भी लिखा है कि जब ब्रह्मचारी गुरुकुल से आवे तव अपने समान तुल्य, गुण, कर्म, स्वभाववाली, सुलक्षणा युवती से विवाह करे क्या विना विद्या के सुलक्षणा होसकती है ? कदापि नहीं इसीलिये तो वेदों में लिखा है कि कुमारी कन्यायें ब्रह्मचर्य धारण कर गृहस्थाश्रम तथा धर्म की शिक्षा को सीख श्रेष्ठ बनें। य० अ० ३ मं० ५३ में कहा है स्त्रियाँ पदार्थ विद्या पढ़ें और अध्याय २३ मन्त्र ४२ में आज्ञा है कि वैद्यकविद्या को पढ़ स्त्रियों की औषधी करें और अ० १६ मन्त्र १५ में व्याकरण पढ़ने की आज्ञा है इसी भाँति युद्ध में जाने का भी उपदेश है अर्थात् सम्पूर्ण विद्याओं के सीखने की आज्ञा है इसी हेतु माता को परम गुरु कहा है क्योंकि जिसकी माता विद्यानिधि होती है वही संतान सुयोग्य होसकती है अन्यथा नहीं इसीलिये मातृवान् कह कर पितृवान् कहा है प्राचीन कालमें पुरुषों के समान स्त्रियाँ अधिकार रखती थीं अर्थात् जिस प्रकार गुणों से पुरुष ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र होते थे उसी प्रकार विद्या आदि गुणों के कारण स्त्रियाँ भी ब्राह्मणी, क्षत्राणी, वैश्याणी, तथा शूद्राणी होती थीं जब ही तो भारत स्वर्गधाम बना हुआ था इतिहासों के देखने और पुराणों के पाठ करने से विदित होता है कि प्राचीन काल में अनेकान स्त्रियां विद्यावती हुई उनमें से कुछ के संकेतमात्र वृतांत सुनाता हूँ

सुलभा ने राजा जनक को योग विद्या की अनेक सूक्ष्म बातें बतलाई थीं और अपने समान वर न मिलने के कारण ब्रह्मचर्य ही से संन्यास ग्रहण कर देश का

उपकार किया था। **विद्योत्तमा** ने अपने मूर्ख पति कालिदास को कविशिरोमणि बना दिया। **वसुन्धरा** ने अपने पति बुद्धदेव के संन्यास धारण करने पर स्वयं संन्यास लेकर जगत् का उपकार किया इसी प्रकार अत्रि के साथ **अनुसुइया** वशिष्ठ के साथ अरुन्धती और महर्षि पतञ्जलि के साथ उनकी स्त्री, राजा करन्ध राज के साथ उनकी वीर रानी वानप्रस्थाश्रम गई थी। राजा नरिष्यन्त के साथ **इन्द्रसेना** तथा राजा अलर्क के साथ **मंदालसा** तप करने गई थी। श्रीमद्भागवत स्कन्द ५ में लिखा है राजा नाभि अपनी स्त्री **मरुदेवी** के साथ बद्रिकाश्रम पर तप करने को गई थी। महारानी **द्रौपदी** ने सत्यभामा को पतिव्रतधर्म का उपदेश किया था और अश्वत्थामा ने जब इनके पुत्रों को मार डाला और अर्जुन उनको पकड़ द्रौपदी के सम्मुख लाये उस समय धैर्य को धारण कर अश्वत्थामा को नहीं मारने दिया और कहा कि जिस प्रकार मैं अपने पुत्रों के मारेजाने से व्याकुल होरही हूँ उसी भाँति इसके मारेजाने पर इसकी माता कृपि दुःखी होगी कहिये पंडित जो इतना धैर्य और आत्मप्रिय विना विद्या और ज्ञान के कभी हो सकता है महारानी कुन्ती ने वीर रस से भरा हुआ पत्र अर्जुन को लिखाथा **गान्धारी** ने राजसभा में दुर्योधन को पाण्डवों से न लड़ने के लिये कैसा उपदेश दिया था। **शकुन्तला** ने राजा दुष्यन्त के त्यागने पर कैसा धीरज धारण किया था इसी प्रकार महारानी **दमयन्ती** ने अपने पति के वियोग में कैसे २ कष्ट सहन किये श्रीमान् प्राचीन भारत और वर्त्तमान समय की स्त्रियों की योग्यता का वृतांत जानना हो तो आप मेरी बनाई **नारायणी शिक्षा** अर्थात् गृहस्थाश्रम को देख लीजिये जिसमें गृहस्थ संबंधी सब ही विषयों पर आन्दोलन किया गया है. आम पबलिक ने उसको इतना पसन्द किया है जो अब पंद्रहवींवार छपकर आई है जिसमें बड़े साइज के ६०० सफे होने पर भी मूल्य १॥) मात्र है आशा है कि भारतवर्ष में इसके सिवाय इतनी सस्तीऔर ऐसी उपयोगी पुस्तक आपको दूसरी न मिलेगी श्रीमान् पंडित जी क्या आप कह सकते हैं कि रानी **सुतारा** जो हरिश्चन्द्र की रानी थी उसने अपने पति के साथ कैसा धर्म पर बलिदान किया था। महारानी **सीता** ने

लब्धसंस्कारदेहाश्च महापातकिनो नराः ।
यस्मान्निवर्त्तते ब्रह्म तस्मात्सांकेतिकं विदुः ॥ ३२ ॥

इसके उपरान्त अध्याय ३६ में लिखा है कि शुक्र व विष्ठा से उत्पन्न हुई कीट के तुल्य यह देह अति मलीन क्योंकर शुद्ध होती है मन में तो दुष्टता भरी रही है और बाहर से सब संस्कार होते हैं कोई २ वैदिक संस्कारों से तो युक्त है परन्तु आचरणों में शूद्रों से भी अधिक मलीन हो जाते हैं क्रूर कर्म करने द्वारा, ब्रह्मघ्नी, गुरुदारागामी, नास्तिक, मायाजाल कलि आदि में आसक्त इत्यादि दोषों से युक्त निषिद्ध आचरण करने द्वारा, धूर्त्त, शठ, पापी, सर्वभक्षी, सर्वविक्रमी ऐसे जो ब्राह्मण हों तो उनके चाहे सब संस्कार क्यों न हों वे सब वेद वेदाङ्ग पढ़े हों परन्तु कभी उनकी निष्कृति नहीं होती। जो इष्ट अनिष्ट ब्राह्मण को होते हैं वे शूद्र को भी होते हैं इस लिये वेदपाठ अग्निहोत्र आदि कोई कर्म भी ब्राह्मण के हेतु नहीं, वैधव्य वियोग मरणादि सबको होती है, वात, पित्त, कफ़, लोभ, धनकी तृष्णा सबको होती है दयाहीन, हिंसक, परमदांभिक, कपटी, लोभी, पिशुन, अति दुष्ट ऐसे पुरुष वेद पढ़ संस्कार को ठगते हैं। वेद विक्रय कर अपना पोषण करते हैं अनेक प्रकार के छल छिद्र कर प्रजा की हिंसा करते हैं केवल अपना सांसारिक सुख साधते हैं ऐसे ब्राह्मण, शूद्र से भी अधम होते हैं इस लिये जाति वृथा है, सकामा शूद्राके ब्राह्मण, संग करके गर्भ स्थापन कर देता है और ब्राह्मणीको शूद्र से गर्भ हो जाता है फिर जातिभेद कहां ठहरा, जातिभेद तो गौ, घोड़ा, हाथी आदि पशुओं में है जो अपनी जातिकी स्त्री विना दूसरी जाति की स्त्रीसे संग नहीं करते न दूसरी जातिसे गर्भ रख सकते हैं पशु जातिकी स्त्रीसे मनुष्य संग करे तो सुख नहीं होता और न गर्भ रहता है इसी प्रकार मनुष्य स्त्री पशु से मैथुन करे तो न गर्भ धारे और न उसके आनन्द होय परन्तु मनुष्य जाति में किसी वर्ण के साथ संग करे तब ही आनन्द मिले और गर्भ धारे इससे जाति भेद नहीं बन सकता। जो मनुष्यों में जाति कल्पना है केवल व्यवहार के लिये संकेत है वास्तव में सत्य नहीं। जो और चालीसवें अध्याय मे लिखा है कि जो ग्राह्य अग्राह्य के तत्त्व को जान अन्याय और कुमार्ग को त्याग करे जितेन्द्रिय स्थिर रहे, सबके हित में तत्पर हो, भली भाँति वेदवेदांग शास्त्र जानता हो, समाधि में स्थित हो, क्रोधहीन हो, मत्सर, मद, शोक आदि करके वर्जित हो, वेद के पठन पाठन में आसक्त हो, विशेष करके किसी का संग

न करे एकान्त और पवित्र स्थान में रहे, सुख, दुःख में समान हो, धर्मनिष्ठ हो, पाप से डरे, निर्भय, निरहंकार, दानशूर ब्रह्मवेत्ता, शान्तस्वभाव और तपस्वी हों वे ब्राह्मण कहाते हैं। इसी प्रकार के ब्राह्मण जगत् के हित के लिये उत्पन्न किये गये हैं। ब्रह्म के भक्त होने से ब्राह्मण, क्षत्र के रक्षा करने हारे क्षत्रिय, वार्त्ता का सेवन से वैश्य और श्रुति से द्रुति होने से शूद्र कहाये। क्षमा, दम, शम, दान सत्य, शौच, धृति, दया, मृदुता, संतोष, तप, निरहंकार, अक्रोधता, अनुसूयता, अशठता, अस्तेय, अमात्सर्य्य, धर्म ज्ञान, ब्रह्मचर्य्य, ध्यान, आस्तिक्य, वैराग, पापभीरु, अद्वेष, गुरुसुश्रुषा इत्यादि गुण जिनमें देखा उनको सृष्टि के समय ब्राह्मण ठहराया जो बलवान् और दूसरों की रक्षा करने में समर्थ देखे वे मनुष्य क्षत्री कहलाये। जो वृत्ति और धन के उपार्जन करने में तत्पर हुए उनकी वैश्य संज्ञा हुई और जो निस्तेज, अल्प बल, शोचते और दबते हुए इन तीनों की सेवा में तत्पर हुए वे शूद्र कहलाये। इसी भांति अपने २ स्वभाव के अनुसार वर्ण कल्पित हुए और शम, तप, दम, शौच, शान्ति, सीधापन, ज्ञान, विज्ञान आस्तिक्य ये ब्राह्मणों के स्वाभाविक कर्म हैं। शौर्य्य, तेज, धृति, दाक्ष्य युद्ध में अपलायन अर्थात् पीछे न फिरना, दान और ईश्वर भाव ये क्षत्रियों का स्वाभाविक कर्म है जिसके ज्ञानरूपी शिखा और तपोरूपी सूत्र अर्थात् यज्ञोपवीत हो उनको स्वायम्भुव मनु ने ब्राह्मण कहा है चाहे जिस वर्ण में उत्पन्न हुआ हो और पाप कर्म्मों से निवृत्ति होकर उत्तम आचरण रक्खे वह ब्राह्मण के समान ही है शील करके युक्त ब्राह्मण से अधिक होता है आचार से रहित ब्राह्मण शूद्र से भी निकृष्ट माना जाता है और जो अपने घर में मद्य न बनावे और बाज़ार आदि में बेचे भी नहीं वही शूद्र उत्तम होता है। प्रथम तो जीवमात्र एक जाति है फिर मनुष्यादि जाति पृथक् २ हैं उनमें स्त्री पुरुष आदि भेद हैं उनमें भी बालक तरुण वृद्ध ये जाति हैं इसके बिना और जाति की कल्पना संकेत मात्र है जिस प्रकार देव और पुरुष मिलकर कार्य्य सिद्ध होते हैं इसी प्रकार उत्तम जाति और सत्कर्म का योग होने से पूर्णसिद्धि होती है।

किंदेहस्योतपेनासौ निसर्गमलिनः स्थितिः।
शुक्रशोणितसंभूतः शमलोद्भव कीटवत् ॥

भविष्यत पुराण ब्राह्म अ० ४३ व ४४ में लिखा है—

निषेकादिश्मशानानां तैर्विविधैर्विधि विस्तरैः ।
देहिनोऽतिशयं कश्चिदुपगच्छंति मानवाः ॥३॥
वैदिकाखिलसंस्कार सारभूता द्विजातयः ।
सर्वकार्य्यकरान् सर्वान् वृषलानतिशेरते॥४॥
चण्डकर्माविकर्मस्थो ब्रह्महागुरुतल्पगः ।
स्तेनो गोघ्नः सुरापानः परस्त्रीरमणप्रियः ॥६॥
शमस्तपो दमः शौचं क्षांतिरार्जवमेव च ॥२५॥
ज्ञानंविज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्मस्वभावजम् ॥२६॥
शौर्यंतजोधृतिदाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ॥२६॥
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रंकर्मस्वभावजम् ॥ २७ ॥
निवृत्तः पापकर्मभ्यो ब्राह्मणः सविधीयते ।
शूद्रोऽपिशीलसम्पन्ना ब्राह्मणादधिको भवेत् ॥ ३१ ॥
ब्राह्मणो विगताचारः शूद्राद्धीनतरोभवेत् ।
न सुरां संचयेद्यस्तु आपणेषु गृहेषु च ॥ ३२ ॥

इस लिये प्रथम सबको शिक्षा होनी चाहिये फिर वर्णव्यवस्था नियत करना अभीष्ट है देखो प्राचीनकाल में भी इसी के अनुसार बहुधा शूद्र पढ़े लिखे तपस्वी, ज्ञानी होते थे। रामायण से विदित होता है कि जब महात्मा रामचन्द्रजी वनोवास को गये और शबरी के स्थान पर पहुंचे जो सकल धर्मों के अनुष्ठान करनेवाली तपस्विनी थी जैसा कि—

शबरींधर्म्मचारिणीमश्रमणं धर्म्मनिपुणमभिगच्छेति राघवः ॥

अब आपको यह भी ज्ञात होना चाहिये कि शबरी किस जाति की थी देखिये अमरकोष—

भेदाः किरात, शबरपुलिन्दाम्लेच्छजातयः ॥

अर्थात् किरात और शबर, पुलिन्द और म्लेच्छ जाति यह सब चाँडाल के भेद हैं इससे प्रकट है कि शबरी एक अधम शूद्रा थी।

जब श्रीराम आदि शबरी के स्थान पर पहुंचे तो उसने उठकर दोनों के चरण पकड़ कर प्रणाम किया फिर विधिपूर्वक पैर धोने और आचमन के लिये जल दिया जैसा कि वाल्मीकि रामायण आरण्यकांड सर्ग ७४ में लिखा है।

तौदृष्ट्वातुतदासिद्धासमुत्थायकृतांजलिः।

पदौजग्राहरामस्य लक्ष्मणस्य च धीमतः ॥ ६ ॥

पाद्यमाचमनीयं च सर्वं प्रादाद्यथाविधि।

इससे यह भी प्रकट होता है कि श्रीरामजी ने शबरी के हाथ से जल लेकर आचमन किया। राजा दशरथ को शब्दभेदी तीर मारने का बड़ा अभ्यास था। एक दिन रात्रि को घूमते हुए राजा ने सरयू की ओर जाना कि हाथी पानी पी रहा है तुरन्त तीर मारा जो एक मनुष्य के लगा अब यह विचारना चाहिये कि वह कौन था और उसके माता पिता कौन थे, वाल्मीक रामायण अयोध्याकाँड सर्ग ६३ से विदित होता है कि उसकी माता शूद्रा थी और पिता वैश्य थे शास्त्र में ऐसे को करण नाम शूद्र कहा है। मरते समय दशरथजी से उसने कहा कि राजन् आपको ब्रह्महत्या का भय न हो क्योंकि मैं ब्राह्मण नहीं हूं।

शूद्रायामस्मि वैश्येन जातो नरवराधिप ॥ ५१ ॥

इसके उपरान्त वह तपस्वी का भेष धारण किये हुए शास्त्र का अध्ययन करता था।

जटाभारधरस्यैव वल्कलाजिनवाससः ॥ २८ ॥

इसके पश्चात् उसके अन्ध पिता विलाप कर कह रहे थ कि मधुर स्वर से शास्त्रों और पुराणों को पढ़ता हुआ अब मैं किसका शब्द सुनूंगा।

कस्य वा पररात्रेऽहं श्रोष्यामि हृदयं गमम्।

अधियानस्य मधुरं शास्त्रं वान्यद्विशेषतः ॥ ३२ ॥

कौन मनुष्य मुझको स्नान, सन्ध्या, होम करावेगा जैसा कि—

कोमां सन्ध्यामुपास्यैव स्नात्वा हुत हुताशनं ॥ ३३ ॥

मार्कण्डेय पुराण अध्याय १३४ से विदित होता है कि वपुष्मान् के पिता इन्द्रसेना के साथ वानप्रस्थ में गये थे। राजा वपुष्मान् ने पुरानी शत्रुता के

कारण वन में जाकर मार डाला तव रानी इन्द्रसेना ने उसके मारे जाने के समाचार एक शूद्र तापस के द्वारा भेजे थे जैसा कि लिखा है—

प्रेषयामास पुत्रस्य समीपं शूद्रतापसं ॥२०॥

जब वह तपस्वी शूद्र राजा के समीप आया और सब वृत्तान्त कहा तब राजा ने अपने पुरोहित और स्त्रियों को बुलाकर उनसे कहा कि वयुष्मान् ने मेरे पिता को मार डाला है वह स्वर्गवासी होगये यह बात एक शूद्र तपस्वी आकर कह गया है देखो—

यद्त्र कृत्यंतदत्रतं ताते प्रासे सुरालयं श्रुतं भवद्भिर्यत्प्रोक्तं तेन शूद्रतपस्विना। अध्याय १३६ श्लोक ३॥

देखो छान्दोग्योपनिषद् के प्रपाठक ४ खं० २ में हारित्वाशद्र० इत्यादि वाक्य देखो। जानश्रुति शूद्र को रायंक महर्षि ने विद्या पढ़ाई तथा छान्दोग्य प्र० ४ खंड ४में जाबाल अज्ञात कुलको गौतम ऋषिने विद्या पढ़ाई थी इसी भाँति ऋग्वेद मण्डल १० अनुवाक ३ सूक्त ३० से ३४ तक देखिये।

इन चार सूक्तों का ऋषि कवष, ऐलूप हुआ है इन सूक्तों को कवष, ऐलूष ने बहुत से ऋषियों को पढ़ाया और ऋग्वेद मन्त्र १ अनुवाक १७ सूक्त ११६ १२६ तकका फैलाने वाले कक्षीवान् हुआ है जो बंग देशके राजाकी दासीका पुत्र था फिर कैसे आश्चर्य की बात है कि आज वह वेद सुनने के अधिकारी नहीं रहे। पंडितजी महाराज ! आप ही विचार करें देखिये शतपथ कां०१ प्र०१अ०१ ब्रा०४ कं १२ में स्पष्ट आज्ञा है कि चारों वर्ण वेदमन्त्रों से यज्ञ की हवि को शुद्ध करें देखिये महाभारत शांतिपर्व अध्याय ३२७ में कि वेदव्यासजी शुक्राचार्य्य इत्यादि अपने शिष्यों को उपदेश करते हैं कि हे शिष्यो ! तुम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को क्रमशः वेदका उपदेश करो क्योंकि वेद अध्ययन करना मनुष्य का मुख्य कार्य है।

वेदस्याध्ययनं हीदं तच्चकार्यं महत्स्मृतम्। ४८॥

शुक्रनीति में लिखा है कि विद्या पढ़ने के लिये चारों वर्णों के मनुष्यों को ब्रह्मचारी होना चाहिये।

विद्यार्थं ब्रह्मचारीस्यात् सर्वेषां पालने गृही ॥४१॥

प्रियपंडितजी अब तो आपको भले प्रकार पुराणों से ही विदित होगया कि वर्ण गुण कर्म और स्वभाव ही से होते हैं इसलिये अब आपको पुराणों के उन लेखों का आदर न करना चाहिये जो जन्म से वर्ण मानने की आज्ञा देते हैं क्योंकि यह आज्ञा उनकी वेद के विपरीत है इसके अतिरिक्त पुराणों के सुनाने वाले सूतजी महाराज हुए हैं जिन्होंने अनेकान ऋषियों को पुराण सुनाये और यह ऋषि वह उनको उच्चासन पर बिठा सर्वप्रकार से उनकी पूजा अर्थात् सत्कार करते थे और सूतों की गणना वर्ण सङ्करों में की है देखो पद्मपुराण सृष्टिखंड प्रथम अध्याय श्लोक ३४ में लिखा है।

अधरोत्तर धारेण जज्ञे तद्वर्ण संकरम् ।३४॥

अर्थात् सूतजी का जन्म विलोम में हुआ परंतु वृद्धों की सेवा और महात्माओं के सतसंग से नीचे कुल में जन्म होने की मानसी पीड़ा को नाश कर उत्तम बनगये जैसा सूतजी ने स्वयं श्री मद्भागवत स्कंद १ अध्याय १८ में कहा है।

अहो वयं जन्मृतोद्यहास्मद्वृद्धानुवृत्याऽपिविलोमजाता:

दौष्कुल्यमाधिं विधुनोतिशीघ्रं महत्तमानामभिदानयोगः॥१८॥

श्रीमान् पंडितजी इससे अधिक क्या प्रमाण आपको दूं उपरोक्त पुस्तक के स्कंध ६ अध्याय २ में लिखा है कि दृष्टि का पुत्र नाभाग कर्म करके वैश्य होगया जैसा कि-

नाभागोदिष्टपुत्रोऽन्यः कर्मणा वैश्यतां गतः ।२३॥

अब आप बुद्धि से विचारिये, कि दश इन्द्रियां प्रत्येक स्त्री पुरुष को दी हैं तो क्या स्त्री और शूद्र उनसे देखने का कार्य लें न लें यदि कोई किसी की आँखों को फोड़ डाले तो वह दण्डभागी होता है। उसी भाँति परमात्माने बुद्धि, विद्या ग्रहण करके सत्, असत् के विचार करने के लिये दी है यह विद्या मनुष्य के हृदय के नेत्र हैं तो फिर जो मनुष्य चर्मचक्षु फोड़ने से दण्डभागी होते हैं तो क्या हृदयरूपी आंखें फोड़ने वाले पुरुषों को दण्ड न होना चाहिये, पंडितजी मुख्य अभिप्राय स्वार्थी जनों का मूर्ख बनाने ही से चलता है इसलिये इन्होंने—

'स्त्री शूद्रौ नाधीयातामिति श्रुते'

यह बनावटी श्रुति, सुना स्त्री और शूद्रों को निरक्षर रखने का आर्डर पास करदिया परन्तु पंडितजी अथर्ववेद कां० ५ अ० ५ व० ११ में परमेश्वर आज्ञा देता है कि हे मनुष्यो! सत्य स्वरूप महागम्भीर और सत्यवेद विद्या के प्रकट करनेमें जात वेद हूं। मैं किसी दास व आर्यका पक्षपात नहीं करता किंतु जो मेरी न्यायाचरणरूप सत्यव्रताज्ञा का पालन करेगा उसीका मैं उद्धार करूंगा।

इस हेतु पंडितजी परमात्मा का भय कर पक्षपात को त्याग सम्पूर्ण स्त्री और पुरुषों को आत्मवत् समझ शिक्षा करा फिर यथायोग्य गुण कर्म और स्व-भाव को मिलाकर वर्ण नियत कीजिये जिससे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य की सन्तानें अपने से नीच वर्ण में जाने के भय से विद्यादि गुणों के प्राप्त करने में लगी रहें और शूद्र नीच वर्ण उत्तम बनने के ख्याल उत्तम बनने के ख्याल से उत्तम गुणों की प्राप्ति करने का यत्न करते रहें यदि आप जन्मसे ही शूद्रोंको सन्तानको शूद्र मानते हैं तो फिर ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य की सन्तानों में पुत्रको ब्राह्मण, क्षत्री वैश्य और उन्हींकी पुत्रियों को शूद्र किस हिसाब से बतलाते हैं यदि वह शूद्रही हैं तो फिर उनका विवाह ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य किस हिसाब से धड़ाधड़ करते चले जाते हैं और यह भी विचार नहीं करते कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य इनके वीर्य्यसे शूद्राणी में जो सन्तान उत्पन्न होती है वह क्योंकर वर्णसङ्कर नहीं मानी जाती इसके उपरान्त पद्मपुराण पष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १४१ में लेख है कि जहां धर्मावती और साभ्रवती का संगम हुआ है वहाँके स्नान करनेसे विदुर महाराज की शूद्रता जाती रही जैसा कि—

तत्र वै कृतवान्स्नानं विदुरो धर्मरूपवान्।
त्यक्तं तत्र हि शूद्रत्वं धर्मावत्यां न संशयः ॥४३॥

परन्तु शोक है कि वर्त्तमान समय में सनातनधर्म सभा इस लेख के अनु-सार शूद्रों की शूद्रता दूर कराने के लिये क्यों वहां सबको इस संगम पर स्नान करा लेती।

सच तो यह है कि जब तक भारतवर्ष में गुण कर्म और स्वभाव से वर्ण नियत होने की प्रणाली प्रचलित रही भारत के सौभाग्य की उन्नति होती रही

और जबसे स्वार्थी पुरुषों ने नाना लीला रच विद्या के प्रचार को रोका तबही से जन्म से वर्ण नियत कर देशका चौपट कर दिया। क्या विदुर महाराज की शूद्रता स्नान से जाती रही थी नहीं २ वरन् उनके गुण कर्म और स्वभाव से जिनके विषय में महाभारत में बड़ी प्रशंसा लिखी है इन्हीं महात्मा की बनाई हुई विदुरनीति इस समय भी संसार का उपकार कर रही है, इसलिये पण्डितजी अब सनातनी भाइयों को योग्य है कि पक्षपात को त्याग प्रेमपूर्वक वेदानुकूल वर्णव्यवस्था के स्थापित करने का यत्न करें वरन् वह दिन निकट आने वाला है कि भारतवासी स्वयं विद्या आदि गुणों से वर्ण नियत करने की प्रणाली को प्रचलित कर देंगे फिर आपके हाथ से यह भी कार्य जाता रहेगा। श्रीमान् पर अब अच्छे प्रकार विदित होगया होगा कि व्यासजी ने पुराणों को शूद्रों और स्त्रियों के लिये नहीं बनाया।

श्रीमान् पण्डितजी! पुराणों के बनाने का दूसरा कारण पुराणों से यह विदित होता है कि सतयुग में धर्म के चार चरण, त्रेता में तीन, द्वापर में दो, कलियुग में एक चरण रह जाता है जैसाकि वाराह पुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ३२ में लिखा है।

इत्युक्तः समवस्थोऽसौचतुष्पाद्स्यात्कृतेयुगे त्रेतायात्रिपदश्चासौ द्विपादो द्वापरेऽभवत् कलावेकेन पादेन प्रजापालयते प्रभुः। ४। ५॥

ऐसाही ब्रह्मवैवर्तपुराण प्रकृतिखंड अध्याय ७, पद्मपुराण क्रियायोगसार अ० १६ लिंगपुराण अ० ३८, कूर्म अ० २८, श्रीमद्भागवत स्कन्द १२ अ० ३ में लिखा है।

कलौ तु धर्महेतूनां तुर्यांशोऽधर्महेतुभिः।
एधमानैः क्षीयमाणो ह्यन्तेसोपि विनंक्ष्यति॥ २४॥

इसके उपरान्त कूर्म अ० २८, पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अ० ७१ श्लोक ५६-५७-५८ तथा क्रियायोगसार अ० २६, श्रीमद्भागवत स्कन्द १ अ० १ श्लोक १० तथा स्कन्द १२ अध्याय ३। मत्स्यपुराण अ० १४२ वा ४३। ब्रह्मवैवर्त्त प्रकृतिखंड अ० ७ श्लोक १८-५५ में लिखा है कि घोर कलियुग में मनुष्य नाना

अपने पति के साथ किस प्रकार वनों के दुःखों को सहन कर फिर आकर किस प्रकार साधुओं आदि की सेवा की थी । क्या यह कार्य विना पढ़ी स्त्री कर सकती है ।यदि कर सकती है तो आपही बतलाइये कि किस मूर्खा स्त्री ने लीलावती के समान गणित में पुस्तक लिखी। बतलाइये लक्ष्मीदेवी की भाँति किसने मिताक्षरा का टीका किया। सुनाइये किसने उपरोक्त स्त्रियों की भाँति उत्तम अनोखे कार्य किये, भला बतलाइये मन्दालसा की भांति कौन अनपढ़ स्त्री ने अपने पुत्रों को ब्रह्मज्ञानी बनाया। सुमित्रादेवी की भांति किसने अपने पुत्र को बड़े भाई की सेवा के लिये वनमें उनके वनोवास होने पर भेजा भला जबकि वैदिकधर्मकी अवनति होती जाती है, काशीराजकी कन्याके समान आज कौन पुकार मचाने वाली है इसके अतिरिक्त गार्गीने याज्ञवल्क्य और सुलभा ने जनक से शास्त्रार्थ किया था क्या यह सब शूद्रा थीं ? यदि यह शूद्रा थीं तो आपके पुराणों के कथनानुसार इनको क्यों शिक्षा दी क्या उस समय आपके पुराण मौजूद न थे या कि इनकी आज्ञाओं का कोई पालन न करता था फिर भला इनका आप क्यों परमेश्वरीयज्ञान अर्थात् वेदश्रवण की अधिकारिणी नहीं बताते जिनके लिये पुराण बनाने की आवश्यकता हुई । पण्डितजी ! सन्तानसुधार की कल स्त्री है गृहप्रबन्ध की जड़ स्त्री है पति को आनन्द पहुंचाने वाली स्त्री है विपत्ति में पूर्ण साथ देने वाली स्त्री है । भला फिर आपही बतलाइये कि वर्त्तमान सन्तानें क्यों नहीं प्राचीन कालकी भाँति माता, पिता, आचार्य की आज्ञा पालन करती हैं, वे धर्म पर बलिदान होने वाली सन्तानें कहां गईं । पिता, माता आदिके सुखके लिये आज दुःख उठाने वाली संतानें कहां हैं, कौन पतिकी आज्ञा से पुत्र को वेद धर्म का पालन करने को उपस्थित है वह शूरवीर कहाँ हैं जिन्होंने पिता के दुःख के लिये अखण्ड ब्रह्मचर्य धारण कर पिता की मनोकामना पूर्ण की । पण्डितजी ! मैं कहां तक आपको सुनाऊं पौराणिक पण्डितों ने अपने प्रयोजन साधनार्थ सर्वोन्नति की जड़ स्त्रियों को शूद्रा कह कर उनको वेदादि विद्या से विमुख रख ब्रह्मचर्य को उठा अष्टवर्षा भवेतगौरी सुना अल्पावस्था में विवाह कराकर बल, बुद्धि साहसहीन कर अपनी चेली बना तन, मन, धन स्वामी जी के अर्पण करने का आर्डर पास कर भारत का चौपट कर दिया । पण्डितजी ! प्रथम सबको वेदश्रवणका अधिकार था हां फिर

जब अपने प्रयोजन सिद्ध करने के अर्थ शूद्र बनाया तबही पुराणों को व्यासजी के नाम से बनाना आरम्भ कर दिया।

पण्डितजी—सेठजी ! आपका यह सब कथन मेरे पसन्द है क्योंकि स्त्री, पुरुष का जोड़ा है यदि पुरुष शिक्षा से योग्य बनता है स्त्रियाँ भी योग्य बनती हैं। यदि वेदका ज्ञान पुरुषों को शांति देने वाला है तो स्त्रियों को भी उसी भांति लाभदायक है इसलिये पुत्रियों को अवश्य ही पढ़ाना चाहिये। हमने यह आज ही सुना कि पुराण स्त्री, शूद्र और वर्णशङ्करों के लिये ही बनाये गये। अच्छा अब समय होगया समाप्त कीजिये।

आर्य्यसेठ—बहुत अच्छा—सेठ।

आर्य्यसेठ—श्री महाराज नमस्ते।

अन्य भद्रपुरुषोंने यथायोग्य की, सुयोग्य पण्डितजी ने आशीर्वाद दिया और सब चल दिये।

॥ इति द्वितीय परिच्छेदः ॥



तीसरा परिच्छेद ।

आर्य्यसेठ—श्रीमान् पंडितजी को आते देख प्रेमपूर्वक नमस्ते कर कहा कि आइये पधारिये इसके पश्चात् अन्य महाशयगणों ने यथायोग्य की।

पण्डितजी—आयुष्मान् कह कर बैठ गये।

आर्यसेठ—श्रीमान् पुराणों का यह दावा है कि पुराण स्त्रियों और शूद्रों के लिये बनाये गये स्त्रियों की शिक्षा आदि के विषय में तो मैं आपको सुना चुका आज में यह निवेदन करूंगा कि शूद्र किसको कहते हैं और उनका कर्तव्य क्या है।

पंडितजी—बहुत अच्छा- सनातनधर्मी तो वीर्य से अर्थात् जन्म से ही शूद्र मानते हैं और उनको वेद पढ़ाना पाप समझते हैं।

आर्यसेठ—संसार में सम्पूर्ण मनुष्य एक जाति हैं जिनमें से गुण कर्म और स्वभाव से वर्णव्यवस्था नियत होती है देखो यजुर्वेद अध्याय ३१ मन्त्र ११ में परमेश्वर आज्ञा देते हैं कि सृष्टि के बीच जो मुख के सदृश अर्थात् जो गुण, कर्म और स्वभावमें सबसे उत्तम हो वह ब्राह्मण और जिसमें बाहु के समान बल अधिक हो वह क्षत्री और जो ऊरू के बल से सब पदार्थों को देशदेशांतरों में ले जावे वह वैश्य और जो पग अर्थात् नीचे के अङ्गके समान विद्या आदि गुणों में न्यून हों वा मूर्खादि गुणों से युक्त हों उनको शूद्र कहते हैं जैसा कि-

ब्राह्मणोस्यमुखमासीद्बाहूराजन्यकृतः ।
ऊरूतदस्ययद्वैश्यःपद्भ्याᳬशूद्रोअजायत ॥

इस विषय में महाभारत वनपर्व अध्याय ३१२ श्लोक १०५ से १०८ तक देखिये जिसमें यक्ष और युधिष्ठर का संवाद है और युधिष्ठर ने स्पष्ट कह दिया है कि कुल और वेदपाठ से ब्राह्मण नहीं होता किंतु आचरणों का नाम ब्राह्मण है ॥ जैसा कि-

श्रृणु यक्षकुलं जात न स्वाध्यायो न च श्रुतम् ।
कारणं हि द्विजत्वे च वृत्तमेव न संशयः ॥ १०६ ॥

इसी पर्व के अध्याय १८० में सर्प और युधिष्ठर का संवाद है उससे भी स्पष्ट प्रकट है कि जिसमें सत्य-दान-क्षमा-शील-लज्जा और घृणा हो उसको ही ब्राह्मण कहते हैं।

सत्यदानं क्षमाशीलमानृशंस्य तपो घृणा ।
दृश्यन्ते यत्र नागेन्द्र सब्राह्मण इति स्मृतिः ॥ २१ ॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द ५ अध्याय ५ में लिखा है कि ब्राह्मण वेद के पूर्ण ज्ञाता होने के पश्चात् उनमें सत्वगुण शम-दम-सत्य-अनुग्रह-तप सहनशीलता अनुभवजन्यज्ञान यह आठ लक्षण भी रहते हैं।

धृतातनूरुशतीमेपुराणीयेनेह सत्वं परमं पवित्रम् ।
शमोदमःसत्यमनुग्रहश्चतपस्तितिक्षाऽनुभवश्चयत्र॥२५॥

शांतिपर्व अध्याय ६३ में लिखा है कि ब्राह्मणों को उचित है कि राजा की सेवकाई, कृषि से प्राप्त, वाणिज्य से जीविका (निर्वाह) कुटिलता, व्यभिचार, व्याज लेना इन सब कार्यों को परित्याग करे । अधम ब्राह्मण दुश्चरित्री; निज धर्म को त्यागने वाला, वृषलीपति, धूर्त, नाचने वाला, ग्रामप्रेष्य कुकर्मों में रत रहने वाला शूद्र के समान है।

राजप्रेष्यं कृषिधनं जीवनश्च वणिज्यया ।
कौटिल्यं कौलटेयञ्च कुसीदञ्च विवर्ज्जयेत् ॥ ३ ॥
शूद्रो राजन् भवति ब्रह्मबन्धुर्दुश्चारित्रो यश्च धर्मादपेतः ।
वृषलीपतिः पिशुनोनर्त्तनश्च ग्रामप्रेष्योयश्च भवेद्विकर्मा ॥४॥

इसलिये जो धार्मिक, सुशील, दयालु, सहनशील, ममतारहित, सरल, कोमलतायुक्त, अनृशंस, क्षमावान् पुरुष यज्ञादिकों का अनुष्ठान करके सोमपान करते हैं वे ही ब्राह्मण हैं, इसके अतिरिक्त पाप कर्म करने वाले ब्राह्मण नहीं गिने जाते ॥ ८ ॥

भविष्य पुराण ब्रह्मपर्व अध्याय २ में लिखा है जो ब्राह्मण यज्ञ करते हैं और उनमें अनुसूया, दया, क्षांति, अनायास, मङ्गल, शौच और स्पृहा यह आठ गुण भी हैं और संस्कारों से युक्त हैं वे ही ब्रह्मत्व को प्राप्त होकर ब्रह्मलोक को जाते हैं ॥ १५६ ॥ १५७ ॥ १६६ ॥

शिवपुराण—विद्येश्वरी संहिता अ० १३ में लिखा है कि सदाचार युक्त विद्वान् ब्राह्मण वेदाचार युक्त होने से आगे कहे हुये एक एक गुणों से भी द्विज कहलाता है। अल्पाचार थोड़ा वेद पढ़ा हुआ राजा सेवक, ब्राह्मण, क्षत्रिय, ब्राह्मण है और कुछ आचार वाला, खेती, वाणिज्य करने वाला वैश्य ब्राह्मण कहाता है और स्वयं हल जोते वह शूद्र ब्राह्मण है, निन्दा करने वाला पराया द्रोह करने वाला चांडाल ब्राह्मण है। १। २। ३। ४॥

शिवधर्म संहिता—अध्याय २ में सनत्कुमारन व्यासजी के पूछने पर कहा है कि विद्या और जन्म से ही ब्राह्मण श्रेष्ठ नहीं होता किन्तु सदाचार ब्राह्मण में रहता है इस कारण वह सबसे श्रेष्ठ है।

विद्यया जन्मना वापि न श्रेयान्ब्राह्मणो भवेत् ।
आचारो ब्राह्मणस्येह तस्माच्छ्रेष्ठतरः सदा ॥ ६४ ॥

और अध्याय ४१ में कहा है कि मनुष्य अपने कर्मों से ऊपर और नीचे जाता है और सनत्कुमार संहिता में लिखा है कि जो जाति से ब्राह्मण हो सर्व-शास्त्र का पंडित हो तप शौच से युक्त अर्थात् इन तीन बातों से पूर्ण होने पर यथार्थ ब्राह्मण होते हैं और अग्निहोत्र, तप, योग, शौच, आर्जव, सत्य, वेदपाठ करना यह ब्राह्मण के कर्म हैं।

जात्याचयोभवेद्विप्रः सर्व्वागमविशारदः ।
तपःशौचसमायुक्तस्त्वथवोनाम्नासउच्यते ॥ १५ ॥
अग्निहोत्रंतपोयोगः शौचमार्जवमेवच ।
सत्यंवेदप्रसंगश्चद्विजकर्म्मपरंस्मृतम् ॥ १६ ॥
नानृतं ब्राह्मणो ब्रूते न हन्तिप्राणिनं द्विजः ।
न सेवां कुरुते विप्रो न द्विजः पापकृद्भवेत् ॥२०॥

ब्राह्मण झूंठ नहीं बोलते और न हिंसा करते हैं और वह पापकारी भी नहीं होते।

भविष्यपुराण पूर्वार्द्ध अ० ३६ में राजा शतानीक ने सुमन्त मुनि से पूंछा कि महाराज जाति उत्तम है या कर्म? तब मुनि ने कहा कि यही प्रश्न मुनियों ने ब्रह्माजी से पूछा था तब उन्होंने कहा था कि यदि जीव ही ब्राह्मण है तो वह संसार में ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र चांडाल शूकर आदि योनियो में घूमता है फिर क्योंकर ब्राह्मण हो जिस प्रकार गौ में अश्व पृथक् जाना जाता है इस भांति मनुष्यों में ब्राह्मण नहीं जाना जाता, जिस प्रकार नीलगाय का गला, कम्बल करके होता है ऐसा भी कोई चिन्ह नहीं जो और मनुष्यों से ब्राह्मण को जान ले इसलिये जाति भी ब्राह्मण नहीं, गौ, बकरी, भेड़, ऊंट, गधे, खच्चर, घोड़े, हाथी आदि की नौकरी, बनिया लुहार आदि कारीगर नट आदि का काम करें मांस, लहसुन; प्याज, आदि खाये, मद्य पीने, मांस, लवण आदि रस दूध बेचने आदि कारणों से वेद वेदांग का पठन पाठन भी करने हारा, उत्तम कुल में उत्पन्न ब्राह्मणत्व से हीन होते हैं। इसलिये ब्राह्मणत्व एक शरीर में स्थिर नहीं हो सकता मनुजी ने भी यह कहा है कि मांस, लवण, लाक्षा, दूध आदि पदार्थ बेचने से ब्राह्मण शूद्र हो जाता है और गौ, खेती, नौकरी नट वैश्य आदि का कर्म करे वह ब्राह्मण शूद्र के तुल्य होता है इस प्रकार ब्राह्मण से शूद्र और शूद्र से ब्राह्मण बन जाता है।

और अ० ३७ में लिखा है कि वेद पढ़ने से भी ब्राह्मण नहीं होते क्योंकि रावण आदि राक्षसों ने भी तो वेद पढ़े थे और भी शूद्र, चांडाल, धीवर आदि कोई कोई छल से वेद पढ़ लेते हैं परन्तु ब्राह्मण नहीं हो सकते। कई शूद्र दूसरे देश जाय ब्राह्मण बन वेद पढ़ लेते हैं और उत्तम ब्राह्मण की कन्या से विवाह कर लेते हैं अथवा बिना वेद पढ़े भी पञ्चगौड़ पंचद्राविड़ आदिकों में किसी प्रकार के ब्राह्मण बन सत्कुल में विवाह कर लेते हैं इस कारण वेद पढ़ने से भी ब्राह्मण की पहिचान नहीं हो सकती।

शास्त्रकार यह कहते हैं कि आचारहीन को वेद पवित्र नहीं कर सकते। सर्वाङ्गसहित भली भांति वेद क्यों न पढ़े हों, क्योंकि वेद पढ़ना तो ब्राह्मण का एक शिल्प है आचरण ही मुख्य है, कई शूद्र सन्ध्योपासनादि करते हैं, दण्ड

मृग चर्म, मेखला, यज्ञोपवीत आदि धारण कर लेते हैं उनको कोई निषेध नहीं कर सकता। अभिचार आदि कर्म शूद्र भी कर सकते हैं, तप सत्य आदिके प्रभाव से देवता का अनुग्रह और मन्त्रसिद्धि शूद्रों को भी होती है शाप अनुग्रह का सामर्थ्य भी तप करने से शूद्रों में हो जाता है वह सब बातें ब्राह्मण और शूद्रों में तुल्य हो सकती हैं, संस्कार भी तो ब्राह्मणत्व के हेतु नहीं क्योंकि व्यासादिकों के गर्भाधान, सीमन्त आदि किसी ने नहीं किये। शरीर भी सब मनुष्यों के तुल्य ही है इसके उपरांत म्लेच्छ आदि शरीर से पुष्ट और बलवान् होते हैं देह आत्मा वचन, सुख, ऐश्वर्य, रोग, आज्ञा, वीर्य, आकृति, इन्द्रियां, व्यापार, आयु, दुर्बलता, पुष्टता, चंचलता, स्थिरता, बुद्धि, वैराग्य, धर्म, पराक्रम, रूप, औषधि धर्म देह की मलीनता, उज्वलता आदि अस्थि, रोम, माँस त्वचा त्रिवर्गमें रुचि इत्यादि पदार्थ ब्राह्मण और शूद्र में तुल्य ही होते हैं इन बातोंसे शूद्र और ब्राह्मणका भेद देवता भी नहीं कर सकते और ब्राह्मण चन्द्र किरणोंके समान श्वेत वर्ण नहीं है। क्षत्रिय टेसू वर्ण के समान रक्तवर्ण नहीं वैश्य हरितालसे पीले नहीं और शूद्र कोयलेसे काले नहीं होते कि सबको पृथक् २ पहिचान लेते, चलना, फिरना, बैठना, उठना, सोना, सुख, दुःख सबको समान है फिर मनुष्य चार प्रकार के क्योंकर हुए, एक पिता के एक ही जाति के होते हैं इसी प्रकार इस जगत् का पिता एक परमेश्वर है। फिर उसकी सन्तान में क्योंकर जाति भेद हो सकता है जैसे एक वृक्ष के फल रूप, स्वादु आदि करके तुल्य होते हैं इसी विधि परमेश्वर रूपी वृक्ष से उत्पन्न हुए मनुष्य रूपी फल सब समान हैं। कौशिक, काश्यप, गौतम, कौडिन्य, माण्डव्य, वसिष्ठ, आत्रेय, कौत्स अंगिरा, गर्ग, मौद्गल्य, कात्यायन, भार्गव, भारद्वाज आदि गोत्र भी ब्राह्मणत्व का हेतु नहीं क्योंकि यह गोत्र और वर्णों में भी होते हैं। शरीर के अङ्गों को ब्राह्मण कहो तो अङ्ग कट जाने से ब्राह्मणत्व जाता रहेगा।

यदि सम्पूर्ण शरीर को ब्राह्मण कहो तो मरने के अनन्तर उस शरीर का जो दाह करेगा वह ब्रह्महत्या का भागी होगा, और जो कहो कि ब्राह्मण की कन्या के साथ जो विवाह करे वह ब्राह्मण होता है और वही ब्राह्मण जब क्षत्री की कन्या से विवाह करेगा तब क्षत्री हो जायगा क्योंकि ब्राह्मणों को चारों

वर्णों की कन्या से विवाह करना लिखा है इसलिये जाति देह कर्म वेदाध्ययन आदि कोई भी ब्राह्मणत्व के हेतु नहीं हो सकते।

अध्याय ३८में कहा है कि रूप,ऐश्वर्य विद्या और जातिका अभिमान वृथा है क्योंकि यह जीवन वनस्पति, शंख, चींटी, भ्रमर, हाथी आदि अनेक योनियों में जाय नट की भांति नानाप्रकार की देह धारता है फिर जाति का अभिमान कहां रहा ? इसलिये बुद्धिमान् मनुष्य कभी जाति का गर्व न करे क्योंकि जाति स्थिर नहीं रहती। जो कहे कि संस्कारों से ब्राह्मण होता है तो गर्भाधान आदि जिनके संस्कार होते हैं उनकी कुछ आयु नहीं बढ़ जाती और संस्कार हीन अल्पायु नहीं होते सुख दुःख दोनों को होता है इसके उपरांत उत्तम संस्कार जिनके हुए हों वे दुराचरण करके पतित होजाते हैं और नरक में पड़ते हैं और संस्कार हीन उत्तम चाल चलन से भले कहाते हैं और स्वर्ग पाते हैं। संस्कार युक्त पुरुष भी द्यूत वेश्यासंग आदि कुकर्मों में आसक्त होजाते हैं और संस्कार हीन जप, तप, दान आदि सुकर्म करते हैं। ऋषि व्यासादि संस्कारहीन भी होकर उत्तम आचरण करने से सब ब्राह्मणों में श्रेष्ठ ठहरे इससे संस्कार भी ब्राह्मणत्व का निमित्त नहीं, जो कहो कि जन्म से ब्राह्मण होते हैं तो देखो कि व्यासजी कैवर्त्ती से, पराशर चांडाली के गर्भ से उत्पन्न हुए जैसा कि

जातो व्यासस्त कैवर्त्याः श्वपाक्याश्च पराशरः।
शुक्याःशुकः कणादाख्यस्तथोलूक्याः सुतोऽभवत् ॥२२॥

भविष्य ब्रह्मपर्व अध्याय ४२ ॥

श्वपाकीगर्भसंभूतः पिता व्यासस्य पार्थिव।
तपसा ब्राह्मणो जातः संस्कारस्तेनकारणम् ॥ २३ ॥

इसी प्रकार हज़ारों अधम योनियों से जन्मे और उत्तम ब्राह्मण गिने गये। सब संस्कार हीन और जन्म भी उत्तम नहीं परंतु प्रबल तप करके सब ब्राह्मण हुये। संस्कार भी होय और विद्या, तप आदि भी हों तो उत्तमोत्तम ब्राह्मण होजाता है। सब संस्कारों से संस्कृत होकर भी महापातक करने से ब्राह्मणपना खो बैठता है इसलिये ब्राह्मणत्व नियत नहीं सांकेतिक है अर्थात् ब्राह्मणत्व एक संकेत है।

पापों से युक्त न्यूनावस्था वाले, अधर्म में रत, मलीन, अत्यन्त कामी, क्रूर, वेदकी निन्दा करनेवाले, जुआ-चोरी करने वाले, मन्दमति, रोगी, निर्दयी, लड़ाई लड़नेवाले, लालची, मिथ्यावादी, लोभी, हिंसक, अभिमानी, क्रोधी, निन्दा करनेवाले तथा छली होते हैं।

शिवपुराण विधेश्वरी संहिता अध्याय २ में लिखा है कि कलियुग में दुराचारी पुरुष होंगे जिनके मन पराई बुराई में रत, पराई द्रव्य की इच्छा रखनेवाले, पराई स्त्रियों में मन लगानेवाले, पराई हिंसा में लवलीन, नास्तिक बुद्धिवाले, माता पिता से द्वेष रखनेवाले इत्यादि होंगे—जिन सब पापियों को तारने के लिये व्यासजी महाराज ने पुराण नाम सुधारस को बनाया जिसको बिना प्यास के पीने से देवता हो जाते हैं। परन्तु पंडितजी पुराणों के यह लेख भी ठीक नहीं जान पड़ते क्योंकि वेद में ऐसी कोई आज्ञा नहीं है कि सतयुगमें धर्म के चार चरण, त्रेता में तीन, द्वापर में दो और कलिमें एक चरण रह जायगा फिर हम इस बातको क्योंकर ठीक मानें। इसके उपरान्त पुराणों का यह लेख कि जब २ संसार में अधिक पाप होता है तब २ परमेश्वर अवतार लेकर दुष्टों का नाश करता है। यदि हम इस असत्य बातको भी मानलें तो भी तो यह बात ठीक नहीं होती, देखिये सतयुग जो १७२८००० वर्ष का और कलि ४३२००० का अर्थात् सतयुग की आयु से कलियुग की आयु चौथाई होती है और सतयुग में **मच्छ, कच्छ, वाराह और नरसिंह**, यह चार अवतार हुये अर्थात् **मच्छ** का अवतार, हयग्रीव के मारने के लिये जो वेदको चुरा ले गया था। **कच्छ** पृथ्वी के स्थिर करने के लिये जब दैत्य उसको डगमगाते थे। **वाराह** अवतार हिरण्याक्ष के मार डालने के लिये हुआ क्योंकि यह पृथ्वी को बटोर के समुद्र में लेगया था। **नरसिंह**, का अवतार हिरण्यकशिपु के मार डालने के लिये हुआ और कलियुग में एक अवतार होने की पुराण सूचना देते हैं तो फिर श्रीमान् पंडितजी कलियुग क्योंकर पापी ठहरा जिसके लिये पुराण बनाये गये। देखिये पूर्व विद्वानों ने सृष्टि की आयु को १४ मन्वन्तरों में बांटा है। एक मन्वन्तर में ७१ चतुर्युगी होती हैं प्रत्येक संख्या इस प्रकार है। सतयुग १७२८०००। त्रेता १२९६०००। द्वापर ८६४०००। कलियुग ४३२०००

कुल ४३२०००० । इससे प्रकट है कि हर चतुर्युगी की आयु ४३२००० वर्ष की होती है यदि इसको ७१ से गुणा कर दिया जावे तो एक मन्वन्तर हो जाता है जिसके ३०६७२०८०० वर्ष हुए इसी प्रकार से १४ मन्वन्तर व्यतीत हों तो संसार की आयु पूर्ण हो जाती है इसी को ब्रह्मदिन और जिस समय तक अन्धकार रहता है उसको ब्रह्मरात्रि कहते हैं।

अर्थात् कालकी संख्या ब्राह्मदिन और ब्राह्मरात्रि है और छोटे पल, विपल और निमिष । अब यहाँ यह विचार करना भी उचित है कि काल क्या वस्तु है देखिये वैशेषिक दर्शन अ० २ में लिखा है—

अपरस्मिन्नपरं युगपत् चिरं क्षिप्रमिति काललिङ्गानि ॥ ६ ॥

पहिले, पीछे, एक साथ और शीघ्र यह काल के चिन्ह हैं अब यह बात कि सत्युगादि में धर्म ही होता रहा और कलियुग में अधर्म ही होगा। नहीं इतिहासों के देखने से यह भी विदित होता है कि सब युगों में पापी और पुण्यात्मा देव और असुर होते चले आये हैं यदि कालका ही कर्त्तव्य है तो फिर कोई पापी सतयुग में नहीं होना चाहिये सो ऐसा प्रतीत नहीं होता, वरन प्रत्येक समय में कर्त्तव्य का फल होता है। ईश्वरीय नियम सदा एकसे रहते हैं देखिये सृष्टि के आरम्भ से पृथ्वी ईश्वरीय कीली पर सूर्य्य की परिक्रमा देती है। सूर्य पूर्व से निकलता और चन्द्रमा रात्रि में दिखलाई देता है। मनुष्य के दश इन्द्रियां होती हैं, पृथ्वी में बीज उगते हैं, आंखें देखती हैं, कान सुनते हैं, इसी भांति ईश्वरीय नियम सदा एकसे ही बने रहते हैं इस कारण कलि धर्म में बाधा नहीं डालता वरन् मनुष्य अपने कर्त्तव्य से प्रत्येक समय अर्थात् सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग में धर्म का साधन कर धर्मात्मा और अधर्म का काम कर अधर्मी बन सकता है और बनते रहे और आगे भी बनेंगे नकि युग। देखिये हमारे इस कथन की पुष्टि में श्रीमद्भागवत स्कन्द १२ अध्याय ३ में लिखा है कि जब मन, बुद्धि, इन्द्रियां सतोगुण में स्थित होयं तब सतयुग जानो उस समय में सतोगुण करके ज्ञान और तप में रुचि होती है।

प्रभवन्ति यदा सत्त्वे मनो बुद्धीन्द्रियाणि च ।
तदा कृतयुगं विद्याज्ज्ञाने तपसि यद्रुचिः ॥ २७ ॥

और जब सकाम में श्रद्धा होय तब रजोगुण युक्त त्रेता युग जानिये।

यदा कर्मसु काम्येषु भक्तिर्भवति देहिनाम्।
तदा त्रेता रजोवृत्तिरिति जानी हि बुद्धिमान्॥ २८॥

और जब लोभ, तृष्णा, गर्व, दंभ, मत्सरता, सकाम कर्म न विषे प्रीति होय तब रजोगुण, तमोगुण मुख्य ऐसो द्वापर जानिये।

यदा लोभस्त्वसंतोषो मानोदंभोऽथमत्सरः।
कर्मणां चापि काम्यानां द्वापरं तद्रजस्तमः॥

श्री० भा० द्वा० अ० ३ श्लो० २९

जब कपट, झूंठ, आलस, निंदा, हिंसा, दुःख, शोक, मोह, भय, दीनता यह होयं तब तमोगुण मुख्य कलियुग जानिये।

यदा मायानृतं तन्द्रानिद्राहिंसाविषादनम्।
शोकमोहोभयं दैन्यं स कलिस्तामसः स्मृतः॥ ३०॥

इसके उपरांत श्रीमद्भागवत स्कन्द १ अध्याय १७ में जब राजा परीक्षित भ्रमण करने गये तो उनको सरस्वती के तट (एक स्थान) पर धर्म और पृथ्वी वार्त्तालाप करते हुए मिले वह कह रहे थे कि तप करना, पवित्र रहना, सत्य बोलना, दया करना यह धर्म के चार चरण हैं और विस्मय-स्त्री-प्रसंग और मद यह अधर्म के तीन अंश हैं इनमें धर्म के तीन पाद टूट गये एक रह गया है जैसा कि—

तपःशौचंदयासत्यमितिपादाःप्रकीर्तिताः।
अधर्मांशास्त्रयोभग्नःस्मयसंगमदैस्तव॥ २४॥

यह सुन राजा ने कलि के मारने के लिये खड्ग हाथ में उठाया उस समय वह भयभीत हो राजा के पैरों पर गिर पड़ा। राजाने शरणागत आया हुआ जान मारा नहीं और कहा कि हे अधर्म के मित्र तू मेरे राज्यसे निकल जा वरन् तेरे रहने से लोभ, चोरी, अनारीपन, क्लेश और दम्भ इन सबकी बढ़ती होगी तब कलिने प्रार्थना की कि जहां आपकी आज्ञा हो वहां जाकर मैं रहूँ उस समय राजा ने कहा कि जुआ-मदिरा-वेश्या और जहां कसाई जीवों को मारते हैं तुम इन चार जगहों में रहो। जैसाकि—

अभ्यर्थितस्तदा तस्मै स्थानानि कलये ददौ ।
द्यूतं पानं स्त्रियस्सूना यत्राधर्मश्चतुर्विधः ॥ ३८ ॥

इस पर कलिने कहा कि मेरा कुटुम्ब बहुत है इतने स्थान में मेरी गुजर न होगी तब राजाने कहा कि सुवर्ण-झूंठ-मद-काम और वैर इन पांच में और जाओ—यह सुन कलि उपरोक्त स्थानमें रहने लगा ॥

पुनश्चयाचमानाय जातरूपमदात् प्रभुः ।
ततोऽनृतं मदं कामं रजो वैरं च पंचमम् ॥ ३९ ॥
अमूनि पंचस्थानानि ह्यधर्म प्रभवः कलिः ।
औत्तरेयेण दत्तानिन्यवसत् तन्निदेशकृत् ॥ ४० ॥

पंडितजी ! अब मैं आपसे पूंछता हूँ क्या सतयुग, त्रेता और द्वापर युगों में उपरोक्त स्थानों में अधर्म नहीं रहता था अर्थात् जो लोग इन व्यसनों में फंसते थे क्या अधर्मी नहीं कहलाते थे फिर कलिने क्या किया-यदि पुराणों के लेखानुसार किया था तो फिर यह लेख भी उसी स्थान पर क्यों लिखा गया कि जो मनुष्य इस संसार में अपनी उन्नति चाहे वह इन पांचोंका सेवन न करे विशेषकर गुरु और राजा जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अ० १७ में लिखा है।

अथैतानि न सेवेत बुभूषुः पुरुषः क्वचित् ।
विशेषतो धर्मशीलो राजा लोकपतिर्गुरु ॥ ४१ ॥

श्रीमान् यदि हमारे गुरुजन कलिको पापी न बनाते और श्रीमद्भागवत के उपरोक्त लेख पर ध्यान देकर लोभ, चोरी, अनारीपन, क्लेश, दम्भ, झूंठ, मद, काम में न फंसते तो क्योंकर भारत के सिर का मुकुट गिर जाता ।

इसके अतिरिक्त श्रीमद्भागवत स्कन्द १ अ० १८ श्लोक ८ में स्पष्ट लिखा है कि धीरता से धर्म करनेवाले शूर पुरुषों का कलियुग कुछ नहीं कर सकता । हां मदांध पुरुषों में कलि शीघ्र घुस जाता है जिस प्रकार बालकों में भेड़िया जैसा कि—

किंनु बालेषु शूरेण कलिना धीर भीरुणा ।
अप्रमत्त प्रमत्तेषु यो वृकोनुषु वर्त्तते ॥

पद्मपुराण स्वर्ग तृतीय खंड अ० ६७ में कहा है कि कलियुग में विशेष करके पुराण श्रवण को छोड़कर अन्य धर्म आलस्य से शिथिल पुरुषों को नहीं।

अबतो श्रीमान् को पूरा निश्चय होगया कि मदांध और आलस्य से शिथिल पुरुषों को कलि हानि पहुंचाता है। तो क्या सतयुग, त्रेता और द्वापरमें मदांध और शिथिल पुरुष धर्म कार्य कर सकते थे कदापि नहीं सत्य तो यही है। ऐसे २ लेखों ने मनुष्यों को और भी निकम्मा बना देशका चौपट कर दिया।

श्रीमान् पंडितजी ! युग कुछ नहीं करता वरन् सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग में जो जैसा करता है वैसा फल पाता है इस पर तुर्रा यह है कि जिस प्रकार पुराणों के कर्त्ताओं ने कलिको पापी बनाया उससे विशेष उसकी प्रशंसा भी करदी देखिये पद्मपुराण सप्तम क्रियायोगसार खंड के अध्याय २६ में लिखा है कि गुणवानों में श्रेष्ठ तथापि कलियुग में बड़ा गुण यह है कि सतयुग में बारह वर्षों में जो पुण्य का साधन होता है, त्रेता में ६ वर्ष, द्वापर में एक महीने में, वह कलियुग में एक ही दिन रात्रि में होता है।

तदर्द्धेन च त्रेतायां मासेन द्वापरेभवेत्।
अहोरात्रेणैव विप्रभवेत्तच कलौयुगे॥ ४१॥

तिससे कलियुग में मनुष्यों की मृत्युलोक में उत्तम गति होती है और युग में बारह वर्षों में भगवान् की पूजन कर जो फल होता है वह फल कलियुग में मनुष्य को हरिजी का एक बार नाम लेने से होता है और उसको सत्य २ निस्सन्देह कलियुग कुछ बाधा नहीं करता जैसा कि—

हरेर्नामैकमप्यत्र कलौ वदति यो नरः।
कलिर्नबाधते तंच सत्यं सत्यं न संशयः॥ ४२॥

विष्णुपुराण अंश ६ अध्याय २ श्लोक १५-१६ में व्यास महाराज ने कलियुग को साधु कहा है और लिखा है कि जो जप, तप ब्रह्मचर्यादि करने से सतयुग में १० वर्ष में फल मिलता है वह त्रेता में १ वर्ष, द्वापर में एक मास, वही फल कलियुग में रात्रि दिन में मिलता है इसी कारण सब युगों से कलियुग को हमने साधु कहा है।

यत्कृते दशभिः वर्षैस्त्रेतायां हायनेन तत् ।
द्वापरे तत्र मासेन अहोरात्रेण तत्कलौ ॥ १५ ॥
तपसो ब्रह्मचर्यस्य जपादेश्चफलंद्विजः ।
प्राप्नोतिपुरुषस्तेम कलि साध्विततिभाषितम् । १६ ।'

और श्लोक ३४-३६ में लिखा है कि सतयुगादि में द्विजातियों को जप तपस्या आदि में बड़ा क्लेश होता था अब कलियुग में भगवत्कीर्त्तन से सब काम सिद्ध होते हैं।

ततस्तृतीयमध्ये तन्ममधन्यतमंमतम् ।
धर्मसंसाधनेक्लेशो द्विजातीनां कृतादिषु ॥३६॥

लिङ्गपुराण अध्याय ४० में लिखा है कि त्रेता में जो सिद्धि एक वर्ष में होती है वही द्वापर में एक महीने में और कलियुग में एक दिन रात में होती है।

त्रेतायां वार्षिको धर्मो द्वापरे मासिकः स्मृतः ।
यथाक्लेशं चरन्प्राज्ञस्तदह्ना प्राप्नुते कलौ ॥४७॥

पद्मपुराण में श्रीमद्भागवत माहात्म्य के अध्याय २ में लिखा है नारदजी शुकि से कहते हैं कि कलियुग के समान और कोई युग नहीं है जैसा कि—

कलिना सदृशः कोपि युगो नास्ति वरानने ॥ १३ ॥

पद्मपुराम षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १६२ में लिखा है कि राजा परीक्षत ने सार से सार फल देने वाले कलियुग को कलियुगी मनुष्यों के कल्याण के लिये स्थापित किया और श्रीमद्भागवत स्कन्द ११ अध्याय ५ उत्तरार्द्ध में लिखा कि जो मनुष्य श्रेष्ठ गुणज्ञ सारग्राही हैं वह चारों युगों में कलियुग की स्तुति करते हैं क्योंकि और युगों में ध्यान ज्ञान पूजा करके जो फल होता है सो सब स्वार्थ कलियुग में भगवान् के भजन कीर्त्तन मात्र से होता है।

कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः ।
यत्र संकीर्त्तनेनैव सर्वः स्वार्थोऽभिलभ्यते ।३६।

स्कन्द १२ अध्याय ३ में भी लिखा है कि कलि दोषों की खानि है परन्तु तो भी उसमें एक बड़ा गुण यह है कि श्रीकृष्ण को कीर्तन करते ही सम्पूर्ण बन्धन से छूट श्रीकृष्ण को आय के प्राप्त होता है जैसा कि:—

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्त्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसंगः परं व्रजेत् ॥५१॥

इसके उपरांत जो फल तप, योग, समाधि से नहीं होता वह फल कलियुग में केशव के कहने से होता है जैसा कि श्रीमद्भागवत के माहात्म्य अध्याय १ में लिखा है।

यत्फलं नास्ति तपसा नयोगेन समाधिना।
तत्फलं लभते सम्यक्कलौ केशवकीर्त्तनात् ॥६७॥

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय ८० में महादेवजी ने कहा कि हरि का नाम ३ ही केवल व हरे राम हरे कृष्ण कृष्ण २ यह मङ्गलरूप मन्त्र है जो लोग इसको नित्य पढ़ते हैं उनको कलियुग बाधा नहीं करता। ३

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ॥२॥
हरेराम हरेकृष्ण कृष्ण कृष्णेति मङ्गलम्।
एवं वदन्ति ये नित्यं नहि तान्बाधते कलिः॥३॥

चाहे अपवित्र हो वा पवित्र सब कालों में व सब प्रकार से जैसे बने तसे नाम के स्मरण करने से क्षणमात्र में प्राणी संसार से छूट जाता है।

अशुचिर्वाशुचिर्वापि सर्वकालेषु सर्वदा।
नामसंस्मरणादेव संसारान्मुच्यते क्षणात् ॥८॥

नाना प्रकार के अपराधों से युक्त भी प्राणी हो तो उसको चाहिये कि राम कृष्णादि नामों का स्मरण करता रहे क्योंकि कलियुग में अङ्गों सहित यज्ञ, व्रत, दान नहीं हो सकते।

नानापराधयुक्तस्य नामापि च हरत्यघम्।
यज्ञव्रततपोदानं सांगं नैव कलौयुगे।६।

इसलिये कलियुग में तरने के दो उपाय मुख्य हैं एक गङ्गा स्नान दूसरा हरि का नाम लेना क्योंकि हज़ारों हत्यायों सहस्रों उग्रपाप व कोटि गुरु स्त्रियों के सङ्ग सम्भोग चोरी करना ऐसे ही और भी बड़े और छोटे पाप श्रीहरि के प्रिय गोविन्द इस नाम से दूर हो जाते हैं। १२

गङ्गास्नानं हरेर्नामनिरपायमिदंद्वयम् ॥ १० ॥

हत्यायुतंपाप सहस्रमुग्रं गुर्वंगना कोटि निषेवणंच ।
स्तेयान्यथान्यानिहरेः प्रियेण गोविंदनाम्ना न च संति भद्रे ॥११॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द ६ अध्याय २ में लिखा है। मित्रद्रोही, ब्रह्म हत्यारा, गुरुस्त्रीगामी-स्त्री, राजा और गौओं का मारने वाला तथा जो अन्य भाँति के जो पाप हैं, उन सबका प्रायश्चित विष्णु का नामोच्चार है। जैसे—

स्तेनः सुरापी मित्रध्रुग ब्रह्महा गुरुतल्पगः ।
स्त्रीराजपितृ गोहंता ये च पातकिनो परे ॥६॥
सर्वेषामप्यघवत्तामिदमेव सुनिष्कृतम् ।
नामव्याहरणं विष्णोर्यतस्तद्विषयामतिः ॥१०॥

अब कहिये पण्डितजी प्रथम तो कलि को पापी बताया और नाना दोष गिनाये फिर उसकी प्रशंसा इतनी की कि सतयुग की प्रजा कलियुग में उत्पन्न होने की इच्छा करती है क्योंकि कलियुग के सर्व जीव नारायण परायण होते हैं जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कन्द ११ अध्याय ५ श्लोक ३८ में लिखा है।

कृतादिषु प्रजा राजन् कला विच्छन्ति संभवम् ।
कलौ खलु भविष्यन्ति नारायणपरायणाः ॥३८॥

इतना नहीं वरन द्रव्य, देश, और शरीर से जो दोष कलियुग में होते हैं वह सब पुरुषोत्तम भगवान् पुरुष के चित्त में स्थित होकर हर लेते हैं जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कन्द १२ अध्याय ३ में लिखा है।

“ पुंसां कलिकृतान्दोषान्द्रव्यदेशात्मसंभवान् ।
सर्वान्हरति चित्तस्थो भगवान्पुरुषोत्तम ॥४५॥

कलि के प्रभाव दूर करने के लिये पद्मपुराण षष्ठ खण्ड अध्याय ११८ में लिखा है कि जो मनुष्य भगवान् की चढ़ी हुई तुलसी को मुंह शिर और देह में धारण करता है उसको कलियुग स्पर्श नहीं करता। परन्तु शोक इस बात का है कि ऐसे २ सहल नुसखे होते हुए भारत में कलि का प्रभाव मौजूद है। इसके उपरांत अध्याय १९८ में लिखा है कि व्यास महाराज १७ पुराण और महाभारत को रच कर प्रसन्न मन न हुये तब नारदजी ने इस बात को जान उनके समीप गये और पूजा पाय उन्होंने व्यासजी से कहा कि आप मन में क्लेशित क्यों रहते हैं तब व्यासजी ने कहा कि मुझे मालूम नहीं कि मेरा मन क्योंकर मोह-युक्त रहता है आप विज्ञान में कुशल हैं कृपा कर आप ही वर्णन कीजिये जैसा कि—

ब्रह्मन्किं कारणं चेतो मोहेजानेन तत्वहम्।
भवान्विज्ञानकुशलो ज्ञात्वा तत्प्रब्रवीतु मे ॥६६॥

यह सुन अध्यात्मविद्या में निपुण नारदजी ने जो परमतत्व उनसे ब्रह्माजी ने कहा था कहने लगे कि हे पापरहित आपने इस लोक में अवतार लेकर वेदों के विभाग किये, इतिहास सहित पुराण रचे, जहां वर्णाश्रम निवासियों का सब त्रयीधर्म कहा है कलियुग में मनुष्यों की अल्पायु देख के जिनको सबके सुख लेने का अधिकार है स्त्री, शूद्र, ब्राह्मण, बन्धु और साधुओं का सूक्ष्म धर्म आदिक आपने उनमें वर्णन किये हैं परन्तु प्रधानता से भगवान् की महिमा वर्णन नहीं की। हे मुनिजी! सब धर्मक्रिया से शून्य दोषनिधि कलियुग में पाप करने वालों को विना कृष्णजी की कथा रूप अमृत के गति नहीं है यही इस घोर कलियुग में गुण है कृष्णजी के कीर्तन ही से कर्म बन्धन से छूट जाते हैं यज्ञ, दान, तपस्या, कर्म, ज्ञान और ध्यान सतयुगादिमें सिद्धि देने वाले होते हैं कलियुग में नाम कीर्तन ही सिद्धि देने वाला है इस लिये कलियुग के मनुष्यों के उद्धार के लिये आप श्रीमद्भागवत नामक पुराण को वर्णन कीजिये जिसमें प्रवृत्त होने से आपका मन निश्चय प्रसन्न हो जावे और लोक कृतकृत्यता को प्राप्त हो।

श्रीमद्भागवतंनाम पुराणं वर्णयत्वलम् ।
येनप्रवर्तितेनांग भवतोमानसंभ्रुवम् ॥१०९॥

महादेवजी बोले कि हे पार्वती इस प्रकार नारद मुनि अमित तेजस्वी व्यासजी को आज्ञा देकर भगवान् के गुण गाते हुये इच्छापूर्वक चले गये फिर व्यासजी ने श्रेष्ठ भगवान् को बनाया।

नारदे तु गते पश्चाद्व्यासस्सर्वार्थदर्शिनः ।
चकारसंहितामेतां श्रीमद्भाग्वतीं पराम् ॥

जिसको सूतजी ने कहा कि उन्होंने शुकदेवजी से और जिन्होंने राजा परीक्षित को सुनाई इसीसे यह सब पुराणों के ऊपर विराजमान है जो भक्ति से इस माहात्म्य को सुनता वा पढ़ता है वह परम गति पाता है ब्राह्मण पढ़कर वेदों को, क्षत्रिय जीत को, वैश्य धन को और शूद्र सुन कर ही गति को प्राप्त होते हैं।

शौनकादि ऋषिभ्यस्तु तेन प्रोक्तायथार्थतः ।
वरीवर्ति पुराणानामुपरीयेनगात्मजे ॥
यः शृणोति नरो भक्त्यामाहात्म्यं पठनेपिच ।
अनुमोदनेन वासोपि लभते परमांगतिम् ॥१२०॥
द्विजोधीत्याप्नुयाद्वेदान् क्षत्रियस्तुलभेज्जयम् ।
धनंवैश्यस्तथाशूद्रः श्रुत्वैवलभते गतिम् ॥१२१॥

श्रीमान् पण्डितजी इस स्थान पर विचार कीजिये—प्रथम तो पौराणिक लोग व्यासजी को परमेश्वर का अवतार मानते हैं द्वितीय वेद को अच्छे प्रकार जान सत्तरह पुराणों को बनाया तिस पर उनकी शांति नहीं हुई तो उन १७ पुराणों के पढ़ने वालों की शांति कैसे हुई होगी। विचार दृष्टि से तो यह वेदों की निन्दा वरन् महानिन्दा करना है—परन्तु स्मृतिकार वेदों की निंदा करने वालों को नास्तिक बतलाते हैं अब आप बतलावें कि हम इन व्यास जी को क्या कहें और पुराणों में अनेकान स्थानों पर लिखा है कि वेद सनातन पुस्तक हैं वही सनातनधर्म हैं उसके अनुसार धर्म कार्य करना चाहिये इसके अतिरिक्त जो

कोई कार्य करता है वह पाप का भागी होता है सुनिये—

लिङ्गपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय १० में लिखा है कि श्रुतिस्मृति के धर्म करने से धर्मात्मा कहाता और उन्हीं में कहा हुआ वर्णाश्रम धर्म और शिष्टाचार से विरुद्ध न हो वही धन उत्तम है।

श्रौतस्मार्त्तस्य धर्मस्य ज्ञानाद्धर्मज्ञ उच्यते ॥७॥

श्रुति स्मृतिभ्यां विहितो धर्म्मो वर्णाश्रमात्मकः।

शिष्टाचाराविरुद्धश्च सधर्म्मः साधुरुच्यते ॥२२॥

अध्याय ७८ के श्लोक २१ व २२ में लिखा है कि जो मनुष्य वेद विरुद्ध व्रत, आचार इत्यादि करते हैं वह श्रुति स्मृति से विमुख हैं उन पाखंडियों का उत्तम वर्ण वाले स्पर्श तथा सम्भाषण न करें॥

वेदबाह्यव्रताचाराः श्रौतस्मार्त्तबहिष्कृताः।

पाषण्डिन इति ख्याता न सम्भाष्याद्विजातिभिः ॥२१॥

नस्प्रष्टव्या न द्रष्टव्या दृष्ट्वा भानुं समीक्षते ॥२२॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द ६ अ० १ श्लो० ४० में लिखा है कि धर्म वही है जो वेद में लिखा है उसके अतिरिक्त अधर्म है और वेद नारायण का रूप है॥

वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः।

वेद नारायणः साक्षात् स्वयंभूरिति शुश्रुम ॥४०॥

स्कन्द ११ अ० ३ श्लो० ४६ में लिखा है कि वेदोक्त कर्म करने से मोक्ष होती है।

वेदोक्तमेवकुर्वाणेनिसंगोऽर्पितमीश्वरे।

नैष्कर्म्यांलभतेसिद्धिंरोचनार्थाफलश्रुतिः ॥४६॥

स्कन्द ५ अ० २६ श्लो० १५ में लिखा है कि जो वेदमार्ग को छोड़ कर चलते हैं वह कालसूत्र नाम नर्क में जाते हैं।

यस्त्विहवैनिजवेदपथादनापद्यप गतः। पाखण्डंचोपगतस्त-मसिपत्रवनं प्रवेश्यकशयाप्रहरन्ति ॥१५॥

विष्णुपुराण अंश २ अध्याय ६ श्लोक १३ में लिखा है कि जो वेदविरुद्ध कार्य्य करते हैं उनको सवन नाम नर्क होता है।

वेददूषयितायश्चवेदविक्रयकश्चयः।
अगम्यगामीयश्चस्यात्तेयान्तिसवनंद्विजः ॥१३॥

और अंश ३ अ० १७-१८ श्लो० ५, ६ में लिखा है जो वेदोक्त धर्म को छोड़ अन्य मार्ग में जाता है वही महापापी नंगा कहाता है इसलिये कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य के वस्त्र वेद ही हैं॥

ततोमैत्रेय उन्मार्गवर्तिनोयेऽभवञ्जनाः।
नग्नास्तेतैर्यतस्त्यक्तं त्रयी संवरणं वृथा ॥३५॥

देवी भागवत स्कन्द १ अ० १८ श्लोक ४७ में राजा जनक ने कहा है कि चारों वर्ण धर्म के नाश होजाने पर नष्ट हो जाते हैं इसलिये सबको वेद अनुसार कार्य करने से सुखकी प्राप्ति होती है।

धर्मनाशेविनष्टः स्याद्वर्णाचारोऽतिवर्तितः।
अतोवेदप्रदिष्टेन मार्गेण गच्छतां शुभम् ॥४७॥

मत्स्यपुराण अ० ५२ में लिखा है कि श्रुतिस्मृतियों के कहे हुये धर्मों को यत्नपूर्वक करना चाहिये।

कर्मयोगं विना ज्ञानं कस्यचिन्नेह दृश्यते।
श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममुपतिष्ठेत्प्रयत्नतः १२

और अध्याय २१४ में लिखा है कि राजा वेदत्रयी पढ़े हुये ब्राह्मणों को रखकर उनकी सेवा करें असत्शास्त्र के जानने वालों का संग कभी न करे क्योंकि मूढ़ लोग सब विद्वानों के कंटक हैं।

ब्राह्मणान्पर्युपासीत त्रयीशास्त्र सुनिश्चितान्।
नासच्छास्त्रवतो मूढास्ते हि लोकस्य कण्टकाः ॥५०॥

मार्कण्डेयपुराण अ० १० में लिखा है कि जो वेदों की निन्दा करता है उसको मृत्यु के समय मोह प्राप्त होता है।

तें मोह मृत्यवः सर्वे तथा वेदविनिन्दकाः ॥५८॥

भविष्यत् पुराण ब्राह्म पर्व अध्याय ७ श्लोक ५७ में लिखा है कि वेद-निन्दक को सत् पुरुष अपने समीप न रहने देवे।

योवमन्येततेचोभे हेतुशास्त्राश्रयो द्विजः।

स साधुभिर्वहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः ॥५७॥

पद्मपुराण द्वितीय भूमिखंड अध्याय ६७ श्लोक ४ में लिखा है कि जो कोई वेदों की निन्दा करते हैं वा वेदविहित आचार की निंदा करते हैं ज्ञानी पंडितों ने इसको महापापों में बताया है।

वेदनिन्दां प्रकुर्वन्ति ब्रह्माचारस्य कुत्सनम्।

महापातकमेवापि ज्ञातव्य ज्ञानपंडितैः ॥४॥

षष्ठ उत्तर खंड अध्याय २५३ में लिखा है नित्य अच्छे प्रकार से वेद और स्मृति के कहे हुए कर्म करने चाहियें बुद्धिमान मनुष्य वेद और स्मृति के कहे हुये कर्म को न छोड़े ॥ ३५ ॥

श्रुतिस्मृत्युदितं सम्यङ् नित्यमत्र समाचरेत्।

श्रुतिस्मृत्युक्तकर्माणि नातिक्रामेत् बुद्धिमान् ॥३५॥

जो वैष्णव वेद और स्मृति के कहे हुए आचार को नहीं सेवता वह पाखंडयुक्त मनुष्य रौरव नरक में बसता है।

श्रुतिस्मृत्युक्तमाचारं योन सेवेत वैष्णव।

स च पाखंडमापन्नो रौरवे नरके वसेत् ॥३६॥

शिवपुराण कैलाससंहिता अध्याय ८ में लिखा है कि अपने आश्रम में रत सब तीनों वर्णों को श्रुति, स्मृति का धर्मही का अनुष्ठान करना चाहिये दूसरा नहीं ॥ २१ ॥

त्रैवर्णिकानां सर्वेषां स्वस्वाश्रमरतात्मताम्।

श्रुतिस्मृत्युदितो धर्मोऽनुष्ठेयो नापरः क्वचित् ॥२१॥

वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय २८ में लिखा है कि धर्म में वेद ही हमको प्रमाण है। "प्रमाणंश्च तिरेवनः" ॥ ५ ॥

वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय १२ में लिखा है कि जिसको वेद शास्त्र में जो कर्म विधान कर दिया है उसको वही कर्म करना चाहिये दूसरा नहीं।

यस्य यद्विहितं कर्म्म वेदेशास्त्रे च वैदिकैः।
तस्य तेन समाचारः सदाचारो न चेतरः॥ १५७॥

सनत्कुमारसंहिता अध्याय ४ में कहा है कि जो श्रुतिस्मृति के धर्म को नष्ट करता है वह भयङ्कर रूप वाले प्राणियोंसे युक्त घोररूप परम दारुण घोरनरक में नीचे मुख कर हज़ार वर्ष तक डाला जाता है।

मलापहस्य मूलानि हिंस्यमानो हि मानवः।
भैरवाणि च रूपाणि घोरं परमदारुणम्॥ ६१॥
अधोमुखेन पतति वर्षाणां च सहस्रशः॥ ६२॥

इस पर भी स्त्री और शूद्रों के अर्थ अथवा कलियुगी पापियों के उद्धारके अर्थ व्यास महाराज ने १७ पुराण बनाये परन्तु शोक इस बात का है कि इतने पर भी स्वयं व्यास महाराजको आनन्द नहीं आया तो फिर नारदमुनि की आज्ञानुसार भगवत्कीर्तन अर्थात् श्रीकृष्ण महाराज के चरित्रों का कथन किया तब शांति हुई। पंडितजी आप यहां पर ध्यान दें, कि पौराणिक लोग कृष्ण महाराज को विष्णु का अवतार मानते हैं और विष्णु परमात्मा का नाम है, तो क्या वेद में उस निराकार सर्वव्यापक के महत्त्व का वर्णन नहीं है और यदि है तो फिर उसके विचार से व्यासजी को शांति क्यों नहीं हुई। इसके उपरांत सत्युग में यज्ञ, दान, तप, कर्म और ज्ञान से सिद्धि होती थी और इनसे कलियुग में नहीं रही तो फिर मैं पूछता हूँ कि इन पुराणों में यज्ञ, दान, तप, कर्म और ध्यान, ज्ञान के क्यों गुण गाये गये? इसके अतिरिक्त वेदों का ज्ञान सृष्टि के आदि में दिया गया जो प्रलय तक रहता है फिर संसार के प्रकट होते हीं प्रकट होजाता है अर्थात् सत्युग, त्रेता, द्वापर और कलियुग के लिये होता है क्या पंडितजी वेद में कोई ऐसी ऋचा मौजूद है कि वेद का ज्ञान कलियुग के लिये नहीं यदि नहीं तो कलियुगी मनुष्यों के लिये पुराण क्यों बनाने की ज़रूरत हुई। देखिये ईश्वर सर्वज्ञानवाला है तो फिर वेद अधूरे ज्ञानका पुस्तक क्योंकर हो सकता है। इसके उपरांत शिवपुराण के माहात्म्य अध्याय २ में लिखा है कि इस पुराण के सुनने से

मुक्तिकी प्राप्ति-लालची-मिथ्यावादी-दम्भीहिंसक-मत्सरी-व्यभिचारी-देवताओं के द्रव्य खाने वाले और अभिमानी, वर्णाश्रम से पतित तथा महापातक आदि पाप करने वाले पुरुषों की शुद्धि होजाती है।

येमानवाः पापकृतो दुराचाररताः खलाः।
कामादिनिरतानित्यं तेऽपिशुद्ध्यन्त्यनेनवै ॥ ५ ॥
पुराणस्यास्यपुण्यं सन्महापातकनाशनम्।
भक्तिमुक्तिप्रदं चैव शिवसन्तोषहेतुकम् ॥ १३ ॥

इसी प्रकार अन्य पुराणों में भी लिखा है। तो फिर यह लेख भी क्या माननीय नहीं यदि है तो व्यास महाराज को पुराणों के पाठ से शांति क्यों नहीं हुई-जबकि इसमें यह लेख भी उपस्थित है कि विशेषकर कलियुग में शिवपुराण के सिवाय दूसरा धर्म मनुष्यों को मुक्तिसाधन करने वाला नहीं है। जैसाकि अध्याय १ में लिखा है।

विशेतयः कलौ शैव पुराणश्रवणदृते।
परोधर्मो न पुंसां हि मुक्तिसाधनकृन्मुने ॥२५॥

इसके उपरांत आप यह भी विचारिये कि जबतक व्यासजी का अवतार नहीं हुआ तब तक जो ऋषि, मुनि, महात्मा, योगीराज इत्यादि सज्जन पुरुष जो वेदानुकूल कार्य्य करते रहे उनकी आत्मा की शांतिं हुई वा नहीं यदि हुई तो यह कहना कि वेदों के ज्ञान से व्यासजी की शांति नहीं हुई मिथ्या है।

इसलिये भागवतपुराण का व्यासजी का बनाना किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता हां जिस प्रकार मुसलमान साहिबान मानते हैं कि आख़ीर पैग़म्बर जनाब मुहम्मदसाहब के उत्पन्न होने से पहले की धर्मपुस्तकें इंजील और तोरेतादि सब मंसूख़ होगईं और क़ुरानशरीफ़ ही आगे को ख़ुदा की किताब क़ाबिल मानने के रह गई जो हज़रत मुहम्मदसाहब पर उतरी यदि पंडितजी हमारे सनातनी भाई ऐसा ही मानते हैं तो फिर सनातनधर्मियों को श्रीमद्भागवत के लेखानुसार शिव, देवी, गणपति, सूर्य, रामादि को छोड़कर श्रीकृष्ण व विष्णु भगवान्के ही गुण गाना चाहिये क्योंकि उन्हीं के गुणकीर्त्तन से उनके चित्त की शांति हुई; फिर अन्य पुराणों की क्या आवश्यकता रही परन्तु यहां तो जब सनातनी भाई

परस्पर मिलते हैं तो वह अपने २ पुराण और उपासक की प्रशंसा करते हैं जिसके कारण नाना मत भारत में फैल गये अब इस माहात्म्य को भी संक्षेप से सुन लीजिये-देखिये प्रत्येक पुराण अपनी ही तानता है।

देवी भागवत

स्कंद १२ अध्याय १४ में लिखा है कि इसके समान पुण्य पवित्र पाप नाशक अन्य कोई नहीं इसके पद २ में मनुष्य अश्वमेध का फल पाता है।

नानेन सदृशं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।
पदे पदेऽश्वमेधस्य फलमाप्नोति मानवः ॥५॥

मत्स्य।

अध्याय २८६ में सूतजी ने कहा है कि हे ऋषियो! यह धर्म, अर्थ और काम का सिद्ध करने वाला महापुण्य पवित्र मत्स्यपुराण मैंने तुम्हारे आगे कह दिया यह पुराण सब शास्त्रों का मुकुट रूप महापवित्र, आयु, कीर्त्ति और कल्याण का बढ़ाने वाला महापातकों का हर्त्ता होकर महाशुभ है जो इस पुराण के एक पद का भी पाठ करता है वह सब पापों से छूट कर विष्णुलोक में अनेक सुखों को भोगता है।

अस्मात् पुराणादपि पादमेकं पठेत्तु यः सोऽपि विमुक्त पापः।
नारायणाख्यं पदमेति नूनमनङ्गवद्दिव्य सुखानि भुंक्ते ॥३०॥

वामन।

अध्याय ९५ में लिखा है सूर्य चन्द्रमा के ग्रहण में रत्न के दान का और अग्निहोत्री श्रेष्ठ भूखे विप्र को अन्न के दान का जो फल है वह इस पुराण के पाठ से होता है, इसके सुनने से पाप नाश हो जाते हैं॥ ३६॥

चतुर्दशं वामनमाहुरग्र्यं श्रुते च यस्याघ चयाश्चिनाशम्॥३६॥

वाराह

उत्तरार्द्ध अध्याय १४२ में लिखा है जो उत्तमों से रहित अभक्ष भोजन करते हैं वह महा अधम हैं उन भाग्यहीनोंके लिये यह सुमार्ग हमने बड़े परिश्रम और यत्न से प्रकाश किया है हे धरणि! जो अनेक भांति के पुण्य देवे हारे

पदार्थ हैं उनके सेवन से बहुत काल में चित्त शुद्ध होता है इस वाराहपुराण के श्रवणमात्र से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो हमारा समीपवर्त्ती होता है।

एवमेतन्महाशास्त्रं देवि संसार मोक्षणम्।
ममभक्तव्यवस्थायै प्रयुक्तं परमं प्रियम्॥
अ० १४८। २७॥

ब्रह्मवैवर्त्त

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण ब्रह्मखंड अ० १ के आदि में लिखा है यह पुराण सारे पुराणों में बड़ा वरन् वेदकी भूल चूक को भी सुधारने वाला है।

भगवन् यत्त्वया पृष्टं ज्ञानं सर्वमभीप्सितम्।
सारभूतं पुराणेषु ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम् ॥४२॥
पुराणोपपुराणानां वेदानां भ्रमभंजनम् ॥४३॥

भागवत।

स्कंद १ अ० ३ श्लोक ४४ में लिखा है कि भागवत ही एक ऐसा पुराण है जो नष्ट दृष्टि वालों के लिये सूर्य के समान है। स्कंद १२ अ० १३ में लिखा है कि जिस प्रकार नदी में गङ्गा, देवताओं में अच्युत, वैष्णवों में शंभु, क्षेत्रों में काशी, श्रेष्ठ है उसी प्रकार सब पुराणों में श्रीमद्भागवत श्रेष्ठ है जैसा कि—

कलौ नष्टदृशामेष पुराणार्कोऽधुनोदितः।
तत्र कीर्तयतो विप्रा विप्रर्षेर्भूरितेजसा ॥४४॥
निम्नगानां यथा गङ्गा देवानामच्युतोयथा।
वैष्णवानांयथा शंभुर्पुराणानामिदं तथा ॥१६॥
क्षेत्राणां चैव सर्वेषां यथा काशी ह्यनुत्तमा।
तथा पुराणव्रातानां श्रीमद्भागवतं द्विजाः ॥१७॥

लिंग

उत्तरार्द्ध अध्याय ५५ में लिखा है कि इस लिङ्गपुराण को जो पुरुष आदि से अन्त तक पढ़े, श्रवण करे अथवा ब्राह्मणों को सुनाये वह परम गतिको पाता

है। तप, यज्ञ, दान, अध्ययन, कर्म, विद्या आदि से जो फल प्राप्त होता है, वही इस पुराण के सुनाने से होता है और मोक्ष की प्राप्ति होती है और उसके वंश में कोई विद्याहीन, प्रमादी नहीं होता।

लैङ्गमाद्यन्तमखिलं यः पठेच्छृणुयादपि ॥ ३६ ॥
द्विजेभ्यः श्रावयेद्वापि सयाति परमां गतिम् ॥४०॥
भयिनारायणे देवे श्रद्धा चास्तु महात्मनः ॥४२॥
वंशस्य चाक्षयाविद्या ह्यप्रमादश्च सर्वतः ॥४३॥

गरुड़

अध्याय १७ में लिखा है कि सब प्रकार के यत्नों से गरुड़ पुराण सुनने योग्य है जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का देने वाला है। यह सुनने वालों को पवित्र करने वाला, सब पापों का नाशक सकल कामनाओं का देने वाला है। ब्राह्मण को विद्या, क्षत्री को राज्य, वैश्य को धन और शूद्र को पातक से शुद्ध करता है।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्रोतव्यं गारुडंकिल।
धर्मार्थकाममोक्षाणां दायकं दुःखनाशनम् ॥१०॥
पुराणं गारुडं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।
शृण्वतां कामनापूरं श्रोतव्यं सर्वदैव हि ॥११॥
ब्राह्मणो लभते विद्यां क्षत्रियः पृथिवीं लभेत्।
वैश्यो धनिकतामेति शूद्रः शुद्ध्यति पातकात् ॥१२॥

मार्कण्डेय

माहात्म्य में लिखा है कि जो कोई इस पुराण को अच्छे ब्राह्मणों से पढ़वा कर सुन, उसकी पूजा करता है वह मनुष्य सब पापों से छूटकर अपने कुल को पवित्र करता है और आप भी पवित्र हो सनातन विष्णु लोक को जाता है। जिल्द २ अ० ४५ में लिखा है कि यह कलियुग के पापों को नष्ट करता है सो मैं आपसे कहता हूं।

पठ्यमानेत्ववज्ञाते साधुभिः शास्त्रसत्तमे ।
श्रुत्वा तत्पूजयेद्यस्तु पुराणं सप्तमं पुनः ॥१२॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः पुनात्येव निजकुलम् ।
पूतोयाति न सन्देहो विष्णुलोकं सनातनम् ॥१३॥
दक्षेण चापि कथितामि दमासीत्तदामम ।
तत्तुभ्यं कथयाम्यद्य कलिकल्मषनाशनम् ॥२५॥

शिवपुराण

शिवपुराण माहात्म्य में लिखा है कि हे मुने ! इस शिवपुराण से अधिक कलियुगी मनुष्यों के मन का शुद्ध करनेवाला दूसरा पुराण नहीं ।

एतस्माद् परं किञ्चित्पुराणाच्छैवतो मुने ।
न विद्यते मनः शुद्ध्यै कलिजानां विशेषतः ॥

विशेषकर कलियुग में शिवपुराणके सिवाय दूसरा धर्म मनुष्यों को मुक्ति-साधन करने वाला नहीं ।

विशेषतः कलौ शैव पुराणश्रवणादृते ।
परोधर्मो न पुंसां हि मुक्तिसाधनकृन्मुने ॥१५॥

सनत्कुमार संहिता अध्याय १ श्लोक ६४ में लिखा है कि श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास अनेक शास्त्रादि इस शिवपुराण की अल्पकला को भी प्राप्त नहीं होता ।

श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासागम शतानि च ।
एतच्छिवपुराणस्य नार्हन्त्यल्पां कलामपि ॥

विष्णु

अंश ६ अ० ८ श्लोक ५० में लिखा है कि जो कोई कलि पापनाशन यह पुराण सुनेगा वह सब पापों से छूट जायगा ।

इत्येत्परमं गुह्यं कलिकल्मषनाशनम् ।
यः शृणोति नरः पापैः ससर्वैं र्विमुच्यते ॥५०॥

तथा-इसमें कुछ सन्देह नहीं जिस विष्णु पुराण में चराचर के गुरु ब्रह्मज्ञानमय सकल संसार के आदि, मध्य, अन्त में रहने वाले श्रीभगवान् विष्णु कहे गये हैं तिस परम पवित्र पुराण के सुनने व भक्ति सहित पुरुष के पढ़ने से जो फल मिलता है वह समस्त भुवन में नहीं क्योंकि इसके सुनने से एकान्त सिद्धरूप हरि ही फल मिलते हैं जिस अच्युत में बुद्धि लगाने से नरक को नहीं जाता व जिसके चिन्तवन मात्र से स्वर्ग भी मिलता है व जिसमें मन लगाने से ब्रह्मलोक को भी जाता है।

यस्मिन्नयस्त मतिर्नयाति नरकं स्वर्गोपि यच्चिंतने ।
विघ्नो यत्र निवेशितात्ममनसो ब्राह्मोपिलोकोल्पकः ॥५५॥

अग्निपुराण

अध्याय २७० में लिखा है कि अग्निपुराण का कर्त्ता, श्रोता जनार्दन भगवान् है इससे अग्निपुराण सर्ववेद, सर्वविद्या, सर्वज्ञानमय और श्रेष्ठ है।

आग्नेयाख्य पुराणस्य कर्त्ता श्रोता जनार्दनः ।
तस्मात्पुराणमाग्नेयं सर्ववेदमयं महत् ॥१७॥
सर्वविद्यामयं पुण्यं सर्वज्ञानमयं वरम् ।

अध्याय ३८२ में लिखा है कि अग्निपुराण शास्त्र के समान कोई शास्त्र नहीं जो इसके एक श्लोक को भी पढ़ता है वह सौ कुल का उद्धार कर ब्रह्मलोक को जाता है। अग्नि ने इस अग्निपुराण को वेदसम्मत कहा (बनाया) है इससे श्रेष्ठतर कोई ग्रन्थ नहीं है न शास्त्र न इससे श्रेष्ठ कोई श्रुति है न इससे परे ज्ञान और न इससे परे कोई स्मृति है।

अग्निना प्रोक्तमाग्नेयं पुराणं वेदसम्मतम् ॥४६॥
नास्मात्परतरो ग्रन्थो नास्मात्परतरा गतिः ।
नास्मात्परतरं शास्त्रं नास्मात्परतरा श्रुतिः ॥४८॥

नास्मात्परतरं ज्ञानं नास्मात्परतरास्मृतिः ॥ ४६॥

श्रीमान् को अच्छे प्रकार से प्रकट हो गया कि यह पुराण बड़े बड़े पापियों के तारने के लिये बनाये गये हैं जैसा कि उनमें लेख है और अनेकान पाप उनके श्रवण मात्र से ही जाते रहते हैं इसके अतिरिक्त शिवपुराण वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय १२ में तो शिवजी महाराज स्वयं प्रतिज्ञा कर कहते हैं कि पृथ्वी तल पर कैसा ही पतित क्यों न हो वह मेरी पंचाक्षरा विद्या से मुक्त हो जाता है।

मम पञ्चाक्षरीविद्या संसारभयतारिणी । मयैव मसकृद्वि प्रतिज्ञातं धरातले । पतितोऽपि विमुच्ये तमद्भक्तो विधया विद्याऽनया ॥ ४६ ॥

परन्तु शोक इस बात का भी है कि पुराणों में बहुधा ऐसे वचन भी मिलते हैं कि अमुक २ कथा व प्रसंग अमुक २ पुरुषों को न सुनानी चाहिये, कुछ आप भी सुन लीजिये।

शिव।

शिवपुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय २ में कहा है कि यह मत्सरहीन विद्वानों के जानने योग्य वस्तु है और सत्पुरुषों के कृत्य से युक्त त्रिवर्ग का देने वाला है।

अमत्सरांतबुधवेद्य वस्तु सत्वत्सृसमत्रैव त्रिवर्ग युक्तम् ॥६२॥

ज्ञानसंहिता अ० ७८ और कैलाससंहिता अ० १२ में लिखा है कि इसकी कथा नास्तिक, श्रद्धाहीन, अभक्त को न सुनाना चाहिये।

नास्तिकाय न वक्तव्यं श्रद्धाहीनाय वै सदा।

अभक्ताय न वाच्यं हि न चाशुश्रुषवे तथा ॥ १४२ ॥

वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय २ में लिखा है कि वह पतित, मूढ़ और कुत्सित-दुर्जनों की दृष्टि में नहीं आता।

अदृश्यः पतितैर्मूढैर्दुर्जनैरपि कुत्सितैः ॥ ६१ ॥

अध्याय ४ में लिखा है यह श्रेष्ठज्ञान अशांत पुरुष को देना नहीं चाहिये, अपुत्र, असुवृत्त, सदाचरणहीन अशिष्य को यह ज्ञान न देना चाहिये।

न प्रशान्ताय दातव्यमेतज्ज्ञानमनुत्तमम् ।
नापुत्रायाननुवृत्ताय नाशिष्याय च सर्व्वथा ॥ ४२ ॥

वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय ५ में लिखा है कि जो शिष्य न हो-शठ हो, अभक्त हो उनके निमित्त ऐसे अर्थों का उच्चारण न करे यह वेद का अनुशासन है ।

नाशिष्येभ्यः शठेभ्यो वा नाभक्तेभ्यः कदाचन ।
व्याहरेदीदृशानर्थानिति वेदानुशासनम् ॥ ८३ ॥

अध्याय २४ में लिखा है कि नास्तिक शठ कृतघ्न तामस पाखंडी पापी यह सब मुझ से दूर रहें ।

नास्तिकाश्च शठाश्चैव कृतघ्नाश्चैव तामसाः ।
पाषण्डश्चातिपापश्च वर्त्तन्तां दूरतो मम ॥

भविष्यपुराण-उत्तरार्द्ध अध्याय २०८ श्रीकृष्ण महाराज का वचन है, कि दांभिक, शठ, नास्तिक, दुराचार आदिकों को यह प्रकाश न करना चाहिये किन्तु साधु, जितेन्द्रिय, सदाचार, देव, ब्राह्मण, भक्तपुरुष होवें वे पठन, श्रवण के अधिकारी हैं ।

नैतत्प्रकाशनीयं हि दांभिकाय शठाय वा ।
नास्तिकायान्य मनसे कुतर्कोपहतायच्च ॥ ८ ॥
साधुवृत्ताय दान्ताय सत्यार्जवरताय च ।
एतदाख्याय मार्ब हि शुभमुत्पादयेद्गतिम् ॥ ६ ॥

मार्कण्डेयपुराण माहात्म्य में लिखा है कि इस पुराण को नास्तिकों, वृद्ध, अपमानी, गुरु ब्राह्मण के निंदक और व्रतत्यागी, मात पिता, वेदशास्त्र की निन्दा जातित्यागी को कंठगत प्राण होने तक भी न दे । लोभ व मोह और डर से भी न दे, यदि कोई इन लोगों के आगे पढ़े व पढ़ावे वह नरक को जाता है । जैसा कि—

नास्तिकाय न दातव्यं वृद्धादि प्रभु विष्णवो ।
गुरुद्विजातिनिन्दाय तथा भग्नव्रताय च ॥ १६ ॥

मातापित्रोर्निन्दकाय वेदशास्त्रादि निंदिने ।

भिन्नमर्य्यादिने चैव तथा वैज्ञातिकोपिने ॥ १७ ॥

एतेषां नैव दातव्यं प्राणैः कंठगतैरपि ।

लोभाद्वायादि वा मोहाद्भयाद्वापि विशेषतः ॥ १८ ॥

पठेद्वा पाठयेद्वापि सगच्छेन्नरकं ध्रुवं ॥ १९ ॥

वामन पुराण अध्याय ६५ श्लोक ८८ में वामनजी ने नारदजी से कहा है कि इस परमरहस्य को तुम हरिभक्तिवर्जित और ब्राह्मण की निन्दा में युक्त ऐसे पापी पुरुषों से न कहना ।

इदं रहस्यं परमं तवोक्तं न वाच्यमेवं हरिभक्ति वर्जिते ।

द्विजस्य निंदारतिहीनतोरतेसहेतु वाक्याद्दतग्रापसत्त्वे ॥ ८८ ॥

वाराहपुराण अध्याय १३९ में लिखा है कि मूर्ख, चुगलखोर, श्रद्धा न रखने वाले, कुटिल और शास्त्रदूषित पुरुष को न सुनावे ।

न पठेन्मूर्खमध्ये तु पिशुनानां पुरो न च ।

अश्रद्धधाने क्रूरे वा न पठेद्देवले तथा ॥

मा पठेच्छास्त्रदूषाय अध्याय वा कदाचन ॥ १०८ ॥

अध्याय १४५ में लिखा है कि इस कथा के अधिकारी वह हैं जो शठता, पिशुन, गुरुद्रोह, पंचमहापातक आदि दुष्कर्मों से रहित हैं और हमारे भक्त हो लोभ, मोह, अनाचार आदि से वर्जित हों ।

कुशिष्याय न दातव्यं न दद्याच्छास्त्र दूषके ।

नीचाय न च दातव्यं येन जानन्ति सेवितुम् । ११९ ।

कूर्म पुराण अध्याय १ में लिखा है कि नास्तिक के लिये इस पुण्यकारी कथा को न कहे किंतु श्रद्धा रखने वाले शान्त और धार्मिक द्विजाति के लिये कहे ।

न नास्तिके कथा पुण्यामिमां ब्रूयात्कदाचन ।

श्रद्दधानाय शान्ताय धार्मिकाय द्विजातये ॥

पद्म

पद्म उत्तरखण्ड अध्याय ८५ में महादेव जी ने कहा है कि श्रद्धारहित, पापात्मा, नास्तिक, सन्देहयुक्त और हेतुनिष्ठ यह पांच पूजा के फल के भागी नहीं हैं।

अश्रद्धधानः पापात्मा नास्तिकोऽच्छिन्न संशयः।
हेतुनिष्ठश्च पंचैते न पूजाफलभागिनः। १६।

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय ३५ में लिखा है कि नास्तिक से न कहना और न श्रद्धाहीन पुरुषसे कहना निन्दक व शठ से भी न कहना न भक्ति के वैरी को देना। रामभक्त शान्तिस्वभाव तथा काम, क्रोध से रहित पुरुषों के सब दुःख नाश करने वाला यह पदार्थ कहना ४३। ४४। ४५।

नास्तिकाय न वक्तव्यं न चाऽश्रद्धालवे पुनः।
निन्दकाय शठायापि न देयं भक्ति वैरिणे। ४४।
रामभक्ताय शान्ताय कामक्रोधवियोगिने।
वक्तव्यं सर्वदुःखस्य नाशकारक मुत्तमम्॥ ४५॥

पंडितजी इन सब बातों को विचारते हुये यह भी आप जानलें कि यह सब पुराण वेदानुकूल बनाये गये हैं जैसा किः—

श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ३ श्लोक ४२ में लिखा है।

सर्व वेदेतिहासानां सारं सारं समुद्धृतं।
सतु संश्रावयामास महाराजं परीक्षितम्॥ ४२॥

स्कंद १ अध्याय ३ में लिखा है।

इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसंमतम्॥ ४०॥

वेद के समान भागवत नाम पुराण सुनाते हुये।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तर अध्याय २२५ में लिखा है।

एतत्ते सर्वमाख्यातं पुराणवेदसंमतम्।
ब्रह्मणा कथितं राजन् मनुस्वायम्भुवोतरे॥ ११८॥

वसिष्ठजी ने कहा कि हमने तुमसे ब्रह्माजी के कहे हुये वेदसम्मत सब पुराण कहे ॥ ११८ ॥

वायुपुराण अध्याय १ श्लोक ९ में लिखा है कि धर्म और न्याय की युक्तियों से सुभूषित और वेद के समान पुराण हैं।

पुराणं संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मोक्तं वेदसम्मतम्।
धर्मार्थन्यायसंयुक्तै रागमैःसुविभूषितम् ॥ ९ ॥

अध्याय ४ श्लोक ११ में कहा है कि वेदसम्मत वायुपुराण को कहता हूं।

पुराणं सम्प्रवक्ष्यामि मारुतं वेदसम्मतम् ॥ ११ ॥

शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय १ में कहा है कि यह शिवपुराण वेदसम्मत है। जैसा कि—

यदिदं शैवमाख्यातं पुराणवेदसम्मतम् ॥ ४४ ॥

ऐसाही विधेश्वरी संहिता अध्याय २ में भी कहा है।

अग्निपुराण अध्याय १ श्लोक १० में लिखा है कि अग्नि पुराण वेद के तुल्य है।

अग्निनोक्तं पुराणं यदाग्नेयं ब्रह्मसम्मतम्।
भक्तिमुक्तिप्रदं दिव्यं पठतां शृण्वतां नृणाम् ॥ १० ॥

विष्णुपुराण अंश ६ अध्याय ८ में पाराशर मुनि ने कहा कि यह वेदसम्मत पुराण तुम से कहा।

तत्तेयन्मया ख्यातं पुराणं वेदसम्मतं।

परन्तु पंडितजी यह भी ठीक नहीं इन दोनों में ज़मीन आसमान का अन्तर है देखिये।

वेद और पुराणों के अन्तर का संक्षेप ब्यौरा।

(१) वेद सनातन ईश्वरीय वाक्य है परन्तु पुराण सृष्टि उत्पन्न होने के पश्चात् मनुष्यकृत हैं।

(२) वेद, बुद्धि, सृष्टिक्रम और सत्यज्ञान के अनुकूल है पुराणों में सहस्रों वाक्य बुद्धि, सृष्टिक्रम और सत्यज्ञान के प्रतिकूल हैं।

(३) वेदों में एक ईश्वरी उपासना करने की आज्ञा है। परन्तु पुराणों में नाना देव और वृक्षादि के पूजन की आज्ञा है।

(४) वेदों के अनुकूल ज्ञान द्वारा मुक्ति होती है, परन्तु पुराणों में कृष्ण, राम, तुलसी, शालिग्राम, गंगा आदि के केवल नामोच्चारण ही से मुक्ति होजाती है।

(५) वेदों में मरने के पीछे मनुष्य का किया हुआ सत्कर्म सहायक होता है परन्तु पुराणों के लेखानुसार पुत्रादि के किये गया आदिक में श्राद्धादिक कर्म और कट्टहा-इत्यादिका (जिसकी इस समय पुराणों के अनुसार बड़ी चर्चा है) देना भी सहायक होता है।

(६) वेदों में स्त्री पुरुषों को वेदादि विद्याओं के पढ़ने की आज्ञा है परन्तु पुराणों में स्त्री को शूद्रा बता वेद पढ़ने की आज्ञा नहीं।

(७) वेदानुकूल ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ और संन्यास यह चार आश्रम लिखे हैं और पुराणों में भी इनके गुण गाये हैं तो भी अष्टवर्षा भवेद्गौरी० के अनुसार विवाह कर ब्रह्मचर्याश्रम का खोज मारा जाता है जिसके कारण अन्य आश्रमों का सत्यानाश होगया।

(८) वेदों में ब्रह्मचर्य आश्रम के पश्चात् गुण, कर्म, स्वभाव को मिला कर विवाह करने की आज्ञा है यहां पुराणों में कुंभ, मीन इत्यादि को मिलाकर विवाह करते हैं।

(९) वेदों में प्रतिदिन पंचयज्ञ करने की आज्ञा है परन्तु पुराणों में इसके अतिरिक्त नाना प्रकार के कपोलकल्पित, मन्त्रों के जप और अनेकान प्रकार की पूजा के बड़े बड़े माहात्म्य और विधान लिखे हैं।

(१०) वेदों में ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य को एक ही ब्रह्मगायत्री के उपदेश करने की आज्ञा है यहाँ पौराणिक पण्डितों ने तीन और २४ गायत्री बनालीं इसी भांति दो काल संध्या के स्थान पर तीन काल नियत कर लिये।

(११) वेदों में गुण, कर्म, स्वभाव से वर्ण नियत करने की आज्ञा है जिसको पुराण भी कहते हैं परन्तु यहां जन्म से ही पुराणों की आज्ञा बतलाते हैं और मानते हैं।

(१२) वेदों में मधु और मांस का निषेध है परन्तु पुराणों के लेखानुसार यज्ञ करके घोड़े और गाय को खाना भी लिखा है और बकरे शराब तो प्रतिदिन देवी का नाम लेकर खाते चले जाते हैं और बड़े २ देवताओं के भोग लगाने की आज्ञा है।

(१३) चोरी, जारी, हिंसा करना आदि वेद में बुरे कर्म बतलाये हैं परन्तु पुराणों के बड़े २ देवता इन कार्यों को बेधड़क करते थे।

(१४) वेदों में स्त्रियों के लिये सर्वोपरि पतिसेवा करना लिखा है परन्तु पुराणों में इसकी महिमा गाते हुए उपवास और वृक्षादि की पूजा और गंगा आदि स्नान से उनको भी मुक्ति बतलाई है।

(१५) वेदों में उत्तम सत्संगादि करने को तीर्थ माना है परन्तु पुराणों में गंगादि स्थानविशेष को तीर्थ बतलाया है और उनके बड़े २ माहात्म्यों से पुराण भरे पड़े हैं।

(१६) वेदों में सत्यादि नियमों के पालन का नाम तप कहा है पुराणों में धूनी लगा बीच में बैठने को तप कहा है।

(१७) वेदों में नियम पालन को व्रत बतलाया है वहां पुराणों में भूखे रहने को व्रत कहा है।

(१८) वेदों में स्त्रियों को एकान्त में पुरुष से सम्भाषण करने की आज्ञा नहीं परन्तु पुराणों के अनुसार उनको चेला बना आनन्द से गुरुमंत्र देते हैं।

(१९) वेदानुकूल कर्मों का फल प्रत्येक को मिलता है परन्तु पुराणों के कथनानुसार पुत्रादि के कर्मों से बड़े २ पापी तरना लिखा है।

(२०) वेदानुकूल मनुष्य की आयु अधिक से अधिक ४०० वर्ष, परन्तु पुराणों में ११ अरब तक की आयु लिखी है।

(२१) वेदोंमें परमेश्वर, सच्चिदानन्दस्वरूप, अजन्मा, सर्वसामर्थ्य, सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, निराकार, अजर, अमर, अभय, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, न्यायकारी, दयालु, अनन्त, सब जीवों का न्याय से फलदाता आदि लक्षण वाला माना है परन्तु पुराणों में ईश्वर साकार, निराकार, विकार वाला माना है जो स्वभक्तों की रक्षा के अर्थ कच्छ, मच्छ और वाराह आदि अवतार लेता है।

(२२) वेदों में ईश्वर को सर्वशक्तिमान् माना है जो अपनी सामर्थ्य से सब कार्य स्वयं कर लेता है, परन्तु पुराणों में इस पर धब्बा लगाया गया है क्योंकि उसको भक्तों की रक्षा के लिये पृथ्वी पर अवतार अर्थात् जन्म लेना पड़ता है जैसा प्रह्लाद की रक्षा के लिये नरसिंह, राजा बलि को छलने के लिये वामन, पृथ्वी को लाने के लिये वाराह, समुद्र मथन के लिये कच्छप आदि अवतार धारण करने पड़े।

(२३) वेदों में पुरुषों को एक स्त्री और एक स्त्री को एक पति के साथ विवाह करने की आज्ञा है और पुराणों की शिक्षा से एक पुरुष जितनी चाहे उतनी स्त्रियां करले, देखो श्रीकृष्ण महाराज के १६१०८ स्त्रियां लिखा है।

इसके उपरांत जब हम पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खण्ड अध्याय २३५ पर दृष्टि डालते हैं तो प्रकट होता है कि जब नमुचि आदि महादैत्यों ने जो केशव के भक्त थे उन्होंने इन्द्रादि देवताओं को भयभीत कर दिया तब देवता विष्णु महाराज के समीप गये और प्रार्थना की तब उन्होंने महादेवजी से कहा कि दैत्यों के जीतने और मोहित करने के लिये तामस पुराणों अर्थात् पाखंड धर्म को कहिये तब महादेवजी ने तामस पुराणों को बनाया अ० २३६ में लिखा है कि मत्स्य, कूर्म, लिंग, शिव, स्कन्द, आग्नेय यह छः पुराण तामस हैं।

मात्स्यं कौर्मं तथा लैङ्गं शैवं स्कांदं तथैव च।
आग्नेयं च षडेतानि तामसानि निबोध मे ॥१८॥

विष्णु, नारदीय, भागवत, गरुड़, पद्म, वाराह ये शुभ सात्विक पुराण जानने चाहियें। ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त्त, मार्कण्डेय, भविष्य, वामन, ब्राह्म ये राजस जानिये तिनमें से सात्विक मोक्ष के देने वाले, राजस सदैव शुभ और तामस नरक की प्राप्ति के हेतु हैं।

वैष्णवं नारदीयं च तथा भागवतं शुभम् ।
गारुडं च तथा पद्मं वाराहं शुभदर्शने ॥
सात्विकानि पुराणानि विज्ञेयानि शुभानि वै ।
ब्रह्मांडं ब्रह्मवैवर्त्तं मार्कंडेयं तथैव च ॥
भविष्यं वामनं ब्रह्मं राजसानिनिबोधमे ।
सात्विका मोक्षदाः प्रोक्ता राजसाः सर्वदा शुभाः ॥२१॥
तथैवतामसाद् विनिरयप्राप्ति हेतवः ॥२२॥

श्रीमान् परिडतजी यदि यह बात सत्य है तो फिर सनातनी भाइयों को अठारह पुराण मोक्ष देने वाले नहीं मानना चाहिये। वामन और ब्रह्म यह बारह स्वर्ग लेजाने वाले हैं फिर तमास पुराण जो नर्क लेजाने वाले हैं त्याग देना चाहिये और उन बारह में से केवल भागवतसे ही व्यास महाराज की शान्ति हुई इसीलिये पुराणों के लेखानुसार कलियुगमें केवल एक ही भागवत नामक पुराण तारने वाला रहा परन्तु पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खण्ड अ० १९३ में नारद महाराज कहते हैं कि कुकर्म के आचरण से सार सब आर से इस समय में जाता रहा पदार्थ भूमि में इस प्रकार स्थित है जैसे बीज हीन भूसी। ब्राह्मणों ने भागवत की वार्त्ता घर २ और जन २ में धन के लोभ से पहुंचाई इससे कथा का सार जाता रहा।

विप्रैर्भागवती वार्त्ता गेहे गेहे जने जने।
कारिता कणलोभेन कथासारस्ततो गतः ॥

भला परिडतजी जब नारदमुनि स्वयं भक्ति से कह रहे हैं कि कलियुग में तुझे घर २ जन जन में स्थापित करूंगा जैसा किः—

तस्मिंस्त्वां स्थापयिष्यामि गेहे गेहे जने ॥१३॥

तो फिर ब्राह्मणों का क्या दोष यदि उसी समय सार जाता रहा तो अब तो बिलकुल ही सार नहीं रहा तो फिर श्रीमद्भागवत का सुनना सुनाना भी व्यर्थ हुआ पण्डितजी पुराण लीला का पार पाना अत्यन्त ही कठिन है हां जिस प्रकार सोना कसौटी पर लगाने से अपने मूल्य को बता देता है इसी भांति इन पुराणों को समझ लीजिये केवल विलम्ब इतना है कि जब तक आप बुद्धि रूपी

कसौटी पर नहीं रखते उसी समय तक यह व्यास महाराज के बनाये हुए हैं फिर जहां बुद्धि से विचारा वहीं तुरन्त प्रत्यक्ष हो जाता है कि यह व्यास प्रणीत नहीं है और न यह धर्म पुस्तक है परमात्मा का बताने ,वाला केवल वेद ही है वही सनातनधर्म पुस्तक है उसीके अनुकूल आचार व्यवहार करने से प्राणियों को मुक्ति हुई आगे भी होगी-हां विद्या के अभाव होने से स्वार्थियों के हथकण्डों ने भारत का चोपट कर दिया सचतो यह है कि महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ब्रह्मचर्य के तपोबल से ईश्वरीय नियमों को यथावत् जान संसारी भय और मिथ्या प्रतिष्ठा पर लात मार पुराणों के झूंठे लेखों की चिन्ता न कर (जैसा कि पद्मपुराण चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अध्याय १ में लिखा है कि जो मनुष्य पुराणों की कथा सुन कर निन्दा करते हैं और हँसते हैं उनके हाथों में बहुत क्लेश देने वाले नरक सर्दैव स्थित रहते हैं) स्पष्ट कह दिया कि यह अठारह पुराण व्यास प्रणीत नहीं हैं, नहीं हैं, नहीं हैं-अब मैं इस विषय को समाप्त करता हूँ अब समय हो गया।

पण्डित-अच्छा अब हम जाते हैं।

आर्य्यसेठ-श्री महाराज ! नमस्ते।

पण्डितजी—ने आयुष्मान् कहा और अन्य सबने यथायोग्य की और चल दिये।

इति तृतीय परिच्छेदः।




चतुर्थः परिच्छेदः



नियत समय पर पण्डितजी का आगमन आर्य्यसेठ, उठ कर स्वागत कर श्रीमान् आइये महाराज नमस्ते।

पण्डितजी, आयुष्मान् कह कर बैठ गये और अन्य सब सज्जन महाशय भी आगये।

आर्य्यसेठ, पण्डितजी बहुधा पुराणों में लिखा है कि तीनों देवा एक ही सेवा अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और महेश में से किसी एक की सेवा करने से तीनों प्रसन्न हो जाते हैं जो तीनों में भेद बुद्धि करते हैं वह अवश्य नरक को जाते हैं वाराह पुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ७२ व १३ व १४ में लिखा है।

कर्मवेद युजांविप्र ब्रह्माविष्णुर्महेश्वरः ।
वयं त्रयोऽपि मन्त्राया नात्र कार्याविचारणा ॥१३॥

उत्तरार्द्ध अ० १३५ में लिखा है कि जो कल्याण करने हारे कैलाशवासी शङ्कर जी की सेवा करते हैं वे हमारे भी सेवक हैं और जो हमारी सेवा करते हैं वे शंकर के सेवक हैं हम और शंकर में कुछ भेद नहीं।

अहं यत्रशिवस्तत्र शिवो यत्र वसुन्धरे ।
तत्राहमपितिष्ठामि आवयोर्नान्तर कश्चित् १४५,१०२ ॥

लिंगपुराण अध्याय ३ में लिखा है कि—

आदिकर्त्ता च भूतानां संहर्त्ता परिपालकः ।
तस्मान्महेश्वरो देवी ब्राह्मणोऽधिपतिः शिवः ॥ ३७ ॥
सदाशिवोभवोविष्णु ब्रह्मासर्व्वात्मकोयतः ।
एतदण्डे तथा लोका इमेकर्त्ता पितामहः ॥ ३८ ॥

वह परमेश्वर तीन रूप धारण कर सृष्टि, स्थिति, संहार सदा किया करता है उसके ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र तीनों एकही परमेश्वर हैं।

पद्मपुराण द्वितीय भूमिखण्ड अध्याय ७१ में लिखा है।

शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णोश्चहृदयंशिवः ।
एक मूर्त्तिस्त्रयो देवा ब्रह्म विष्णु महेश्वराः ॥
त्रयोणमन्तरं नास्ति गुणभेदः प्रकीर्त्तिताः ॥ २१–२२ ॥

शिव विष्णु के रूप में वा विष्णु शिव के रूप में शिव के हृदय में और विष्णु के हृदय में शिव अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों एकही हैं और कुछ अन्तर नहीं है और ऐसा ही पद्म उत्तरखण्ड अध्याय ८१ में कहा है कि जैसे विष्णुजी हैं वैसेही महादेवजी इनमें कुछ अन्तर नहीं।

पद्मम पाताल खण्ड अ० ८७ में लिखा है कि शिव, ब्रह्मा, विष्णु इन तीनों को त्रयी कहते हैं इनमें दीपक से दीपक संयोग का सा सम्बन्ध है।

भवो ब्रह्मा च विष्णुश्च त्रयमेव त्रयीमता ।
दीपोग्निर्वर्त्तिस्नेहस्तु यथा विप्रस्तथा हरिः ॥ २८ ॥

भविष्यपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय २०५ श्लोक ११ में लिखा है जो ब्रह्मा सो विष्णु विष्णु सो शिव जो शिव सो सूर्य जो सूर्य सो अग्नि जो अग्नि सो कार्तिकेय जो कार्तिकेय सो गणपति इनमें कुछ भेद नहीं है।

यो ब्रह्मा सहरिः प्रोक्तो यो हरिः समहेश्वरः
महेश्वरः स्मृतः सूर्यः सूर्यः पावक उच्यते ॥
पावका कार्तिकेयो सौकार्तिकेयो विनायकः ।
गौरी लक्ष्मीश्च सावित्री शक्ति भेदाः प्रकीर्तिताः ॥

शिवपुराण ज्ञान संहिता अध्याय ४ में लिखा है मेरे हृदय में विष्णु और विष्णु के हृदय में मैं, जो कोई अन्तर नहीं जानता वही हमारा भक्त है।

ममैव हृदये विष्णुर्विष्णोश्च हृदयेह्यहम् ।
उभयोरंतरं यो वै न जानाति मतो मम ॥ ६४ ॥

अध्याय ५ में कहा है कि हममें और तुममें विचारदृष्टि से अणुमात्र का भी भेद नहीं है यथार्थ में तो तुम अनेक रूप से प्राप्त होने वाले हो।

आवयोरंतरं नैव ह्यणुमात्रविचारतः।

वस्तुत्वे चाप्यनेकत्व चरतोऽपि तथैव च ॥ १६ ॥

देवीभागवत स्कन्द ३ अध्याय ६ श्लोक ५५ में लिखा जो कोई मनुष्य विष्णु और शिव और ब्रह्मा में भेद करेगा वह नरक को जावेगा क्योंकि जो हरि सोई शिव और जो शिव सोई हरि इसी प्रकार ब्रह्मा भी।

यो हरिः सशिवः साक्षाद्यः शिवः सस्वयं हरिः।

एतयोर्भेदमातिष्ठन्नरकाय भवेन्नरः॥ ५५ ॥

परन्तु पण्डितजी जब हम ध्यान से पुराणों को देखते हैं तो उपरोक्त कथन के विरुद्ध बहुतायत से ऐसे लेख मिलते हैं जिनसे तीनों पृथक् २ जान पड़ते हैं कोई ब्रह्म कोई विष्णु कोई शिव और कोई २ इनके अतिरिक्त देवी इत्यादि के गुण गाता है जैसा कि विष्णुपुराणमें विष्णु महाराज को परमात्मा मान शिवादि को तुच्छ ठहराया है शिवपुराण और लिंगपुराण में शिव को परमेश्वर ठहरा कर विष्णु ब्रह्मा को सेवक और देवीभागवत में देवी महारानी को बड़ा मान कर अन्य को तुच्छ ठहराया है इसी भांति भागवत में श्रीकृष्ण और भविष्यपुराण में सूर्य्यभगवान् के गुणों का महत्त्व दिखलाया है फिर उनकी उपासना में भी न्यूनाधिक फलादिका वर्णन किया अर्थात् वह बात जो प्रथम लिख आये हैं कि एकही पूजा करने से तीनों प्रसन्न होजाते हैं ठीक नहीं रहती कृपा करके कुछ इस विषय को भी सुन लीजिये ।

शिवजी का बड़प्पन ।

महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय १५ में कहा है कि महादेव के समान देवता नहीं है न महादेव के समान गति है, दान विषय में महादेव के समान कोई नहीं है और न कोई पुरुष संग्राम में ही महादेव के समान है।

नास्ति सर्वसमो देवो नास्ति सर्व समागतिः।

नास्ति सर्वसमो दाने नास्ति सर्वसमो रणे ॥ ११ ॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द ८ अ० ७ श्लोक ३१ में कहा है।

मतोगिरित्राखिललोकपालं विरंच वैकुण्ठ सुरेन्द्रगम्यं ।
ज्योतिः परं यत्र रजस्तमश्च सत्वंनयद्ब्रह्म निरस्त भेदमिति ।३१।

तुम्हारी जो परमज्योति है सो सब लोकपाल ब्रह्मा, विष्णु, इंद्र इनको भी गम्य नहीं है।

और महाभारत अनुशासन पर्व अ० १६ में कहा है कि ब्रह्मा, विष्णु, इंद्र, विश्वदेव और महर्षि लोग तुम्हें यथार्थरूप से नहीं जानते फिर मैं तुम्हें किस प्रकार से जानूं।

ब्रह्मा शतक्रतुर्विष्णुर्विश्वेदेवा महर्षयः ।
नविदुस्त्वान्तु तत्वेनकुतो वेत्स्यामहेवयम् ॥ १५ ॥

कूर्मपुराण, अध्याय ६ में महादेव ने विष्णुजी से कहा कि आप सब कार्य के कर्ता हैं मैं आदि देव हूं तुम सोम हो मैं सूर्य हूं आप रात्रि, मैं दिन, तुम प्रकृति मैं अव्यक्तपुरुष, आप ज्ञान मैं ज्ञाता हूं आप माया, मैं ईश्वर हूं आप विद्यात्मिकाशक्ति मैं शक्तिमान् ईश्वर हूं।

तथेत्युक्तं महादेवः पुनर्विष्णुमभाषत ।
भवान्सर्वस्य कार्यस्य कर्ताहम्मधिदैवतम् ॥
भवान्सोमस्त्वहं सूर्यो भवन्रात्रिरहं दिनम् ।
भवान्प्रकृतिरव्यक्तमहं पुरुष एव च ॥
भवान् ज्ञानमहं ज्ञाता भवान्मायाहमीश्वरः ।
भवान् विद्यात्मिकाशक्ति शक्तिमानहमीश्वरः ॥

देवीभागवत पंचम स्कंद प्रथम अध्याय में लिखा है ब्रह्मा से विष्णु और विष्णुसे महादेव बड़े हैं, और लिंग पुराण अध्याय १७ में लिखा है प्रलयकाल के समय ब्रह्मा और विष्णु में घोर संग्राम हुआ वहां एक लिंग उत्पन्न हुआ उसके अन्त के पाने के अर्थ विष्णु शूकर का और ब्रह्माहंस का रूप धारण कर नीचे और ऊपर गये परंतु अन्त किसी को नहीं मिला और दोनों शम्भु की माया से भयभीत होगये।

शिव पुराण ज्ञान संहिता अध्याय २५ में विष्णुजी ने स्पष्ट कहा है कि सम्पूर्ण देवता और ऋषि, ब्रह्मा और विष्णु, सिद्धि के लिये शंकर की पूजा करते हैं।

ते पूजयन्ति सर्वे वै देवा ऋषिगणास्तथा।
ब्रह्मा चैव तथा विष्णुरन्ये देवाश्च ये पुनः॥ ४८॥
पूजयन्ति तदा देवं नित्यं सिद्धिसमीहया॥ ४९॥

कूर्मपुराण अध्याय ३४ में लिखा है कि श्रीकृष्ण महाराज ने एक वर्ष तक पाशुपतव्रत से शिव की आराधना की तब शिव ने प्रसन्न होकर उनको वर दिया कि जो गोविंद को मेरी भक्ति से विधिपूर्वक पूजेंगे वह ज्ञान को प्राप्त करेंगे।

अत्र पूर्वं हृषीकेशो विश्वात्मा देवकीसुतः।
उवास वत्सरं कृष्णः सदा पाशुपतैर्वृतः॥
ददौ कृष्णस्य भगवान्वरदो वरमुत्तमम्।
येऽर्चयिष्यन्ति गोविंदं मद्भक्त्या विधिपूर्वकम्।
तेषां तदैश्वरं ज्ञानमुत्पत्स्यति जगन्मय॥

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड उत्तरार्द्ध अध्याय ९ में लिखा है शिव की पूजा से शिवलोक मिलता है ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रादि उनके द्वार के द्वारपालक हैं लक्ष्मी, सरस्वती दोनों देहली झाड़ती हैं अन्य देवों की स्त्रियां दासी कर्म में लगी रहती हैं जैसा कि—

इष्टान्भोगानवाप्याथ शिवलोके महीयते।
ब्रह्मविष्णुमहेन्द्राद्यास्तत्पुरे द्वारपालकाः। अ. ९। ५७।
लक्ष्मीसरस्वतीदेव्यौ देहल्याघर्षनेस्थिते।
नियुक्ते देवदेवस्य देवाश्च सुरयोषितः॥ अ. ९। ५८॥

पद्मपुराण पातालखण्ड अध्याय ६ में लिखा है कि शिव यह मङ्गल नाम जिसकी वाणी पर टिकता है शीघ्र ही उसके महापापों की कोटियां भस्म होजाती हैं।

शिवेति मङ्गलनाम यस्य वाचि प्रवर्त्तते ।

भस्मी भवन्ति तस्याशु महापातककोटयः ॥अ० ६।७८॥

शिवपुराण विद्येश्वरी संहिता अ० २२ में लिखा है कि वे धन्य हैं और कृतार्थ हैं उनका देह धारण करना सफल है उन्होंने अपना कुल उद्धार कर दिया है जो शिव की उपासना करते हैं ।

ते धन्याश्च कृतार्थश्च सफलं देहधारणम् ।

उद्धृतं च कुलं तेषां ये शिवं समुपासते ॥ ५ ॥

ज्ञान संहिता अ० ८ में लिखा है कि विष्णु महाराज ने एक करोड़ छयासठ सहस्र वर्ष तक महादेवजी की आराधना कर उनको प्रसन्न किया जिन्होंने उनको अनेकान वर दिये और अध्याय २० श्लोक २४ में विष्णुजी ने कहा है शिवजी की पूजा किये विना कोई पुरुष सिद्धि को नहीं पाता है ।

महाभारत शान्तिपर्व में भीष्मजी ने कहा है ।

यं विष्णुरिन्द्रः सूर्यश्च ब्रह्मालोक पितामहः ।

स्तुवन्ति विविधैः स्तोत्रैर्देवदेवं महेश्वरं ॥

तमर्चयन्ति ये शश्वद्दुर्गाण्यति तरन्ति ते ।

जिनको ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, सूर्य स्तुति करते हैं उन शिवका जो पूजन करता है उसके सब कष्ट दूर होजाते हैं ऐसा ही अनुशासन पर्व अध्याय १५ में ब्रह्मा, विष्णु और समस्त देवता उनके लिंग की पूजा किया करते हैं उससे बढ़ कर दूसरा कौन है इस कारण वही सबका इष्टदेव है ।

लिङ्गपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय२१ श्लोक २५ व २६में लिखाहै कि जिसराजा के राज्य में शिव को छोड़ मनुष्य अन्य देवता का पूजन करते हैं वह राजा अपने राज्य सहित रौरवनरक को जाता है ।

शिवलिङ्गं समुत्सृज्य यजन्ते चान्यदेवता ।

सनृपः सहदेशेन रौरवंनरकं व्रजेत् ॥ २५ ॥

शिवको छोड़ अन्य देवताओं में भक्ति करना ऐसा है जैसा स्त्री अपने पति को त्याग कर जारपुरुष में आसक्त होती है ॥

शिवभक्तो न यो राजा भक्तोऽन्येषु सुरेषु यः।
स्वपति युवतिस्त्यक्त्वा यथा जारेषु राजते ॥ ३९ ॥

और पूर्वार्द्ध अध्याय १०७ में लिखा है कि हे पुत्र! स्वर्ग, पाताल, पृथ्वी आदि सब स्थानों में रत्नों के प्रवाह बहते हैं परन्तु भाग्यहीन पुरुषों को नहीं मिल सकते। राज्य, स्वर्ग, मोक्ष, क्षीर आदि उत्तम भोजन और भांति भांति के पदार्थ शिव के अनुग्रह के विना नहीं मिलते इसलिये अन्य देवों के आराधन करने वाले अनेक दुःख भोगते हैं केवल शिव आराधन से ही सब दुःख दूर होजाते हैं।

तटिनी रत्नपूर्णास्ते स्वर्गपातालगोचराः।
भाग्यहीना न पश्यन्ति भक्तिहीनाश्च ये शिवे ॥१२॥
राज्यं स्वर्गश्च मोक्षश्च भोजनं क्षीरसम्भवम्।
न लभन्ते प्रियाण्येषां नो तुष्यति सदा भवः ॥ १३ ॥
भव प्रसादजं सर्वं नान्यदेवप्रसादजम्।
अन्यदेवेषु निरता दुःखार्त्ता विभ्रमन्ति च ॥ १४ ॥

महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय १७ में कहा है कि संसार में मुक्त करने वाले महादेव के अतिरिक्त अन्य देवता मनुष्यों के तपोबल को नष्ट किया करते हैं।

एव मन्ये विकुर्वन्ति देवाः संसारमोचनम्।
मनुष्याणामृते देव नान्या शक्तिस्तपोबलम् ॥ १६७ ॥

और हे कृष्ण देवों के देव महादेव के विषय में असूया करते हैं वे पूर्व पुरुषों तथा पुत्रों सहित नरक में डूबते हैं।

यश्चाभ्य-सूयते देवं कारणात्मानमीश्वरम्।
सकृष्ण नरकं याति सहपूर्वैः सहात्मजैः ॥ १७ ॥

पुराणपराङ्ग में शिवपुराण से लिखा है।

तथान्यदेवता भक्ति ब्राह्मणस्य विगर्हिता।

विदूरमति विप्राणश्चाण्डालत्वं प्रयच्छति ।
तस्य सर्वाणि नश्यन्ति पितरं नरकं नयेत् ॥

जो शिव को छोड़ कर दूसरे देव की भक्ति से ब्राह्मण चाण्डाल होजाता है और उसका पिता नरक में जाता है ।

शिवपुराण विद्येश्वरी संहिता अ० २३ में लिखा है कि जिसके माथे पर विभूति नहीं, अंग में रुद्राक्ष नहीं, मुख में शिवमयी वाणी नहीं उसको अधम के समान त्याग देना चाहिये ।

विभूतिर्यस्य नो भाले नागे रुद्राक्षधारणम्
नास्येशिवमयी वाणी तं त्यजेदधमं यथा ॥ १३ ॥

अध्याय २४ में लिखा है कि भस्म रहित मस्तक शिवालय रहित ग्राम, ईश्वर के अर्चन रहित जन्म शिव आश्रयहीन विद्या को धिक्कार है ।

धिग्भस्मरहितं भालं धिग्ग्राममशिवालयम् ।
धिगनीशार्चनं जन्म धिग्विद्यामशिवाश्रयाम् ॥ ४५ ॥

जो तीनों जगत् के आधार भूत हर अर्थात् शिव की निन्दा करते हैं और जो त्रिपुण्ड् धारण करने वाले की निन्दा करते हैं उनके दर्शन में पाप है वे निश्चय वर्णशङ्कर, शूकर असुर, खर, श्वान, गीदड़ के समान पापरूप उत्पन्न हो केवल नरक ही के जाने को जन्मे ।

ये निंदंतिमहेश्वरं त्रिजगतामाधारभूतं हरं ये निन्दंति त्रिपुंड्रधारणकरं दोषस्तु तद्दर्शने ।

तेवै संकरसूकरासुरखरश्व क्रोष्टुकीटोपमा जाता एवं भवंति पाप परमास्ते नारकाः केवलम् ॥ ४६ ॥

धर्मसंहिता अध्याय १८ श्लोक ६ में लिखा है कि शिव की निंदा करने वाले को ब्रह्महत्या सुरापान और गुरुस्त्रीगमन के समान पाप लगता है ।

सुमहत्पातकान्याहुः शिवनिंदा समानि च ।
ब्रह्मघ्नश्च सुरापश्चस्तेयी च गुरुतल्पगाः ॥ ६ ॥

पद्मपुराण—पातालखण्ड उत्तरार्द्ध अध्याय ६ में लिखा है कि विना शिवकी पूजा किये जो अधम मनुष्य भोजन करता है उसका भोजन अन्नरूप पापों का भोजन कहाता ॥ ७८ ॥

अपूजयित्वा चेशानं योहि भुंक्ते नराधमः ।
पापमन्नरूपाणां तस्य भोजनमुच्यते ॥ ७८ ॥

सत्मतनिरूपण और पुराण आदर्श और—श्रीमान् पंडित सूर्य-प्रसादजी ने अपनी किताब में पद्मपुराण से लिखा है कि विष्णु के भक्त पर शिवजी क्रोध करते हैं और शिवजी के क्रोध से मनुष्य नरक को पाते हैं इसलिये विष्णु का नाम कभी न लेना चाहिये ।

विष्णुदर्शनमात्रेण शिवद्रोहः प्रजायते ।
शिवद्रोहान्न सन्देहो नरकं याति दारुणम् ।
तस्माद्वै विष्णुनामानिन वक्तव्यं कदाचन ।

इन सब बातों के अतिरिक्त शंकर की पूजा में कुछ नियम नहीं उलटी सीधी जैसी हो सबही प्रकार को पूजा शंकर की शीघ्र फल देने वाली है जैसा कि पद्मपुराण पंचम पाताकखंड उत्तरार्द्ध अध्याय ५ में कहा है ।

यादृशं तादृशं वापि नियमेनार्चनं विभोः । ७७ ॥
शंकरस्याशु फलदंयादृशस्यापि देहिनः ॥ ७८ ॥

विष्णुजी की बड़ाई ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय ७१ में महादेवजी ने कहा है विष्णुजी के बराबर श्रेष्ठ धाम श्रेष्ठ तपस्या श्रेष्ठ धर्म नहीं है और वैष्णव के समान मंत्र नहीं ॥ ३०९ ॥

नास्ति विष्णोः परं धाम नास्ति विष्णोः परं तपः ।
नास्ति विष्णोः परे धर्मो नास्ति मंत्रो ह्यवैष्णव ॥ ३०९ ॥

विष्णुजी के तुल्य श्रेष्ठ सत्य श्रेष्ठ यज्ञ, श्रेष्ठ ध्यान और श्रेष्ठ गति नहीं है ॥ ३१० ॥

नास्ति विष्णोः परं सत्यं नास्ति विष्णोः परोमखः ।

नास्ति विष्णोः परं ध्यानं नास्ति विष्णोः परागतिः ॥

विष्णु ही सर्वतीर्थमय सर्वशास्त्रमय और सर्वयज्ञमय हैं ।

सर्वतीर्थमयो विष्णुः सर्वशास्त्रमयः प्रभुः । ११२ ॥

विष्णु महाराज की बराबरी कौन देवता कर सकता है जिनके अंशांश के अवतार के बिना सब लीन होजाते हैं ।

कस्तेन तुल्यतामेति देवदेवेन विष्णुना ।

यस्यांशांशावतारेण बिना सर्वं विलीयते ॥ १२७ ॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ८५ में ब्रह्माजी ने कहा है कि गङ्गा के समान कोई तीर्थ, विष्णु के समान कोई देवता और ब्राह्मणों के समान कोई पूज्य नहीं ।

पद्मपुराणषष्ठउत्तरखंड १२३ अध्याय २५५ में भृगुजी ने ऋषियों की सभा में कहा कि ब्रह्मा और शिव जो देवों में श्रेष्ठ हैं उनमें रजोगुण और तमोगुण अधिक है मैंने हे श्रेष्ठ ऋषियो उनको शाप दे दिया है कि ब्राह्मणों से पूजा पानेके योग्य नहीं हैं परन्तु विष्णु शुद्ध और सत्वगुणी और मङ्गल का समुद्र है यह नारायण परब्रह्मरूप है इस कारण हरि (विष्णु) ही ब्राह्मणों का देवता है ।

रजस्तमो गुणोद्रिक्तौ विधीशानौ सुरोत्तमौ ॥ ८६ ॥

यसौ मया न पूज्यौ तौ विप्राणामृषिसत्तमाः ॥ ९० ॥

शुद्धसत्वमयो विष्णुः कल्याणगुणसागरः ॥ ९१ ॥

नारायणः परंब्रह्म विप्राणां देवतं हरिः ॥ ९२ ॥

विष्णुपुराण अं० ३ अध्याय ८ में लिखा है कि विष्णु की आराधना करने से प्राणी पृथ्वी स्वर्गादि के सुख व मोक्ष व सब कुछ पाता है कहां तक गिनावें जो २ व जितना २ फल विष्णु के आराधन से होता व जितना वह चाहता है सब फल पाता है ।

पद्मपुराण पातालखंड पूर्वार्द्ध अध्याय ९७ श्लोक २७, २८ में लिखा है यह सब पुराण शास्त्र जगत् के व्यामोह के लिये हैं ये सब कल्प पर्य्यन्त

शारीरिक विषयों को नाना प्रकार से वकते हैं परन्तु उन सबोंका सिद्धान्त एक विष्णु सब शास्त्रों में गाये गये हैं इससे यही सब व्यापारयुक्त शास्त्रों में विष्णु की प्रधानता है।

स्युर्मोहाय चराचरस्य जगतस्तेते पुराणागमाः ।
तां तामेव हि देवतां परिमिकां जल्पं तु कल्पे विधौ ॥
सिद्धान्ते पुनरेक एव भगवान्विष्णुः समस्तागम ।
व्यापारेषु विवेकिनां व्यतिकरं नीतेषु निश्चीयते ॥ २७ ॥

पञ्चम पातालखण्ड अध्याय ८१ में हरि के आराधन को छोड़कर पाप-समूहनिवारण करने वाला प्रायश्चित्त प्राणियों के लिये कोई नहीं है।

हरेराराधनं हित्वा दुरितौघ निवारणम् ॥ १७ ॥
नान्यत्पश्यामि जंतूनां प्रायश्चित्तं परं मुने ॥ १८ ॥

संस्कृत अ० ८४ ॥

वामनपुराण अध्याय ६४ श्लोक ३७ में लिखा है कि जो भक्ति से विष्णु के चरण कमलों को नहीं पूजते वह जीते हुए मरे के समान हैं।

ये नराः वासुदेवस्य सततं पूजने रताः ।
मृता अपि न शोच्यास्ते सत्यं सत्यं मयोदितम् ॥

ब्रह्मवैवर्त्त-पुराण के ब्रह्मखण्ड अध्याय ११ में सूर्य्य ने कहा है कि गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं, कृष्ण से परे कोई देवता और शंकर से परे कोई वैष्णव नहीं।

नास्ति गङ्गासमं तीर्थं न च कृष्णात्परः सुरः ।
न शंकराद्वैष्णवश्च न सहिष्णु धरापरा ॥ १६ ॥

शिव स्वयं कहते हैं कि विष्णुजी की भक्ति से मैं वैष्णव हुआ हूँ। जैसा कि पद्मउत्तरखंड अ० २६ में लिखा है—

संसारे तुच्छसारेस्मिन्कृतौ ये वैष्णवा जनाः ।
अहं हि वैष्णवो जातो विष्णोर्भक्तिप्रसादतः ॥ ३५ ॥

काश्यां निवसतां छत्र रामरामेति संजपन् ।

तेन-पुण्यादियोगेन शिवो वै नात्र संशयः ॥ ३६ ॥

अध्याय ६ में महादेवजी ने श्रीकृष्णजी से यह वर मांगा कि आप में मेरी भक्ति हो और नौ प्रकार की जो भक्ति तथा छः प्रकार की मुक्ति और १८ प्रकार की सिद्धि योग, तप और वृद्धि को दीजिये।

त्वत्सेवने पूजने च वन्दने नामकीर्त्तने ।

तदोल्लसितमेषां च विरतौ विरतिं लभेत् ॥ १४ ॥

अमरत्वं च सर्वाग्रंथ सिद्धयोऽष्टादश स्मृताः ।

योगास्तपांसि सर्वाणि ददानि च व्रतानि च ॥ २० ॥

इस पर श्रीकृष्ण महाराज ने कहा कि सतकोटि कल्प तक मेरी सेवा करो तो तुम तपस्वियों, श्रेष्ठ योगियों, सिद्धों, ज्ञानियों, वैष्णवों, देवताओं के ईश्वर-अमरत्व तुम और अमर-वेदों के ज्ञाता और मेरे समान पराक्रमी यशस्वी होगे।

मत्सेवां कुरु सर्वेश शर्व सर्वविदांवर ।

कल्पकोटि शतं यावत्पूर्णशश्वदहर्निशम् ॥ २६ ॥

वरस्तपस्विनां त्वञ्च सिद्धानां योगिनां तथा ।

ज्ञानिनां वैष्णवाणां च सुराणाञ्च सुरेश्वर ॥ २७ ॥

अमरत्वं लभ भव भवमृत्युञ्जयो महान् ।

सर्वसिद्धिश्च वेदांश्च सर्वज्ञत्वञ्च मद्वरात् ॥ २८ ॥

पद्मपुराण षष्ठउत्तरखण्ड अध्याय २५५ में कहा है कि हे पुरुषोत्तमजी जो आपके बिना अन्य देवताओं को पूजते हैं वे पाखंडभाव को प्राप्त होकर सब संसार में निन्दित होते हैं।

येऽर्चयन्ति सुरानन्यां त्वां विना पुरुषोत्तम ।

ते पाखण्डत्वमापन्नाः सर्वलोकविगर्हिताः ॥ ५८ ॥

रजोगुण से युक्त ब्रह्मा और तमोगुण से महादेव आदिक देवता पूजने योग्य नहीं हैं शुद्ध सत्त्वगुणयुक्त आपही ब्राह्मणों के सेवने योग्य हैं।

अनर्घ्यो ब्रह्मरुद्राद्या रजस्तमो विमिश्रिताः।

त्वं शुद्ध सत्वगुणवान्पूजनीयोऽग्रजन्मनाम् ॥ ९० ॥

आपके चरण का जल पितृ, देवता और सब ब्राह्मणों के सेवने योग्य, मुक्ति देने वाला और पाप नाश करने वाला है।

त्वत्पाद सलिलं सेव्यं पितॄणां च दिवौकसाम्।

सर्वेषां भूसुराणां च मुक्तिदं कल्मषापहम् ॥ ९१ ॥

आपके भोजन की जूंठन बची हुई पितृ, देवता और ब्राह्मणों के सेवन योग्य है और किसी को योग्य नहीं है।

त्वद्भ क्तोच्छिष्ट शेषं वै पितॄणां च दिवौकसाम्।

भूसुराणां च सेव्यं स्यान्नान्येषां तु कदाचन ॥ ९२ ॥

अन्य देवताओं का अन्न, फूल, जल सब निर्माल्य छूने योग्य नहीं होता है किन्तु मदिरा के समान होता है।

इतरेषां तु देवानामन्नं पुष्पं जलं तथा।

अस्पृश्यन्तु भवेत्सर्वं निर्माल्यं सुरया समम् ॥ ९३ ॥

जो ज्ञान से दुर्बल ब्राह्मण एक बार भी महादेव आदिकों के निर्माल्य को भोजन कराता है वह निश्चय चाण्डाल होता है और करोड़हज़ार कल्प नरक की अग्नि से पचता है। श्रेष्ठ ब्राह्मणों महादेव आदिक देवताओं का निर्माल्य राक्षस, यक्ष और पिशाचों का अन्न ये सब मदिरा मांस के समान हैं तिस से ब्राह्मणों को भोजन न करने चाहियें। पद्म अ० २५५॥

सकृदेव हियोऽश्नाति ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः।

निर्माल्यं शङ्करादीनां स चाण्डालो भवेद्ध्रुवम् ॥ ९९ ॥

कल्पकोटिसहस्राणि पच्यते नरकाग्निना।

निर्माल्यं भोद्विजश्रेष्ठा रुद्रादीनां दिवौकसाम् ॥ १०० ॥

रक्षोयक्षपिशाचान्नं मद्यमांससमं स्मृतम्।

तद्ब्राह्मणैर्न भोक्तव्यं देवानां भुंजितं हविः ॥ १०१ ॥

मोह के कारण जो विष्णु के उपरांत अन्य किसी देव को पूजता है वह पाखण्डी होता है कृष्ण के स्मरण से पापियों की भी मुक्ति होती है।

तस्मात्त्वमेव विप्राणां पूज्योनान्योस्ति कश्चन ॥

मोहाद्यः पूजयेदन्यान्स पाखंडी भविष्यति ॥६६॥

सब देवताओं में पवित्र पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी हैं तिनके छूने और देखने से महादेव आदिक निर्मल हो गये और सबके माता पिता जनार्दन जी हैं।

राघवः सर्वदेवानां पावनः पुरुषोत्तमः ॥ ११५ ॥

स्पृष्ट्वा दृष्ट्वाश्च तेनैव विमलाः शंकरादयः।

सर्वेषामपि देवानां पितामाताजनार्दनः ॥११६॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द ४ अध्याय २ में लिखा है।

भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः।

पाखण्डिनस्तेभवन्तु सच्छास्त्रपरिपंथिनः ॥२६॥

मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ।

नारायणकलाः शान्ताः भजन्ति ह्यनसूयवः ॥

जो शिव की सेवा करे और जो उनके मत पर चले वे पाखण्डी और सत्यशास्त्र के शत्रु हैं जो मुक्ति के अभिलाषी हैं वे भयानक रूप वाले भूतपति को छोड़ शान्त और निर्दोष नारायण की कला को भजते हैं। पुराण परीक्षा में पद्मपुराण से लिखा है।

सौरस्य गाणपत्यस्य शैवादेर्भूरिमानिनः।

शाक्तस्य वैष्णवी वारि हस्ते ह्यन्नपरित्यजेत् ॥

सङ्गं विवर्जयेच्चैव शाक्तादानान्तु वैष्णवः।

न कार्या प्रार्थना तेभ्यः तेषां द्रव्यम् मेध्यवत् ॥

सूर्य, गणेश, शिव और देवी के भक्तों का छुआ अन्न और जल वैष्णव ग्रहण न करे और जल उनके सङ्ग में रहे न इन से कुछ माँगे क्योंकि उनका धन मेध्यवत् है।

सब धर्मों से त्यागे हुये केवल विष्णु जी का नाम मात्र और कहने वाले जिस गति को सुख से प्राप्त होते हैं उसको सब धर्म करने वाले नहीं प्राप्त होते हैं ॥ ६६ ॥

सर्व धर्मोज्झितो विष्णोर्नाममात्रैक जल्पिनः

सुखेन यां गतिं यांति न तां सर्वेपि धार्मिकाः ॥

ब्रह्माजी का महत्त्व ।

इनके विषय में बहुधा पुराणों में यह लिखा है कि पुत्री के साथ अनुचित व्यवहार करने श्री कृष्ण महाराज की गायें चुराने आदि के कारण इन की पृथक् पूजा बन्द हो गई तो भी भविष्य पुराण पूर्व अध्याय १६ के श्लोक ४ से १७ तक में लिखा है कि ब्रह्मा की सदा पूजा करनी चाहिये यही जगत् को उत्पन्न करते हैं, संहार करने वाले भी यही हैं रुद्र इनके मन से उत्पन्न हुये हैं, विष्णु वक्षस्थल से और वेद इनके चारों मुखों से निकले हैं सब देवता दैत्य, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, नागादि इनकी पूजा करते हैं सम्पूर्ण जगत् ब्रह्ममय और ब्रह्मा में स्थित है इसलिये ब्रह्माजी सबके पूज्य हैं जो ब्रह्माजी को नहीं पूजता वह राज्य, स्वर्ग और मोक्ष कभी नहीं पाता इनके सेवन से तीनों पदार्थ मिलते हैं ।

इस कारण प्रसन्न चित्त होकर सदा पूजा करनी चाहिये उनका बिना पूजन किये भोजन करने से प्राण त्याग देना अथवा नरक में गिरना अच्छा है जो भक्ति से सदा ब्रह्माजी का पूजन करे वह मनुष्य रूपमें साक्षात् ब्रह्मा ही है ब्रह्माजी के पूजन से अधिक कोई पुण्य नहीं यह समझ सदा ब्रह्माजी का अर्चन करता रहे । ऐसे पुरुष के दर्शन और स्पर्श से २१ कुलों का उद्धार हो जाता है। इनकी पूजा करने वाला मनुष्य बहुत काल ब्र लोक में निवास कर मर्त्यलोक में जन्म लेवे तब चक्रवर्ती राजा अथवा वेद वेदांगका पारगामी तपोंसे और न यज्ञों से कुछ प्रयोजन है केवल ब्रह्माजी की पूजा से सब पदार्थ मिल सकते ।

ब्रह्मणार्चां प्रतिष्ठाप्य सर्वयत्नैर्विधानतः ।

यत्पुण्यं फलमाप्नोति तदेकाग्रमनाः शृणु ॥१६॥

सर्वयज्ञतपोदान तीर्थवेदेषु यत्फलम् ।

तत्फलम् कोटिगुणितं लभेद्य यः प्रतिष्ठया ॥१७॥

देवजी के गुण

देवीभागवत–स्कंद ५ अध्याय १ में लिखा है आकार ब्रह्मा का, उकार हरिका, मकार रुद्रका, अर्द्ध मात्रा भगवती का स्वरूप है इसीसे एक दूसरे को अपेक्षा उत्तरोत्तर उत्तम है अर्थात् ब्रह्मा से विष्णु, विष्णु से शिव, शिव से देवी उत्तम है, इसीसे सर्व शास्त्र में देवी सबसे उत्तम गिनी जाती है।

अकारो भगवान्ब्रह्माप्युकारः स्याद्धरिः स्वयम् ॥ २२॥
मकारो भगवान्रुद्रोप्यर्द्ध मात्रा महेश्वरी।
उत्तरोत्तर भावेनाऽप्युत्तमत्वं स्मृतं बुधैः ॥२३॥

इसके अतिरिक्त जब पांडव लोग विराट् नगर में प्रवेश करने लगे तब युधिष्ठिर महाराज ने जो देवी की स्तुतिकी उसके पाठ से विदित होता है कि वही जगत् की स्वामिनी और सबको रचने वाली है।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण – प्रकृति खण्ड अध्याय ३४ में कहा है कि दुर्गा और विष्णु की माया में सब शक्तियां लीन होजाती हैं।

दुर्गायां विष्णु मायायांविलीनाः सर्वशक्तयः ॥६१॥

देवी भागवत स्कंद १ के ४ अध्याय में लिखा है कि विष्णुजी ने कहा कि यद्यपि सब जानते हैं ब्रह्मा सृष्टिकर्त्ता और हम पालनकर्त्ता हैं और शिव संहार-कर्त्ता हैं तो भी वेदपारगामी लोग कहते हैं कि यह तीनों शक्ति के आश्रय हैं सच है कि राजसी शक्ति उस भगवती की तुम में सात्विकी हममें और तामसी रुद्र में जिसके बिना हम, तुम और शंकर अपना २ कार्य कर नहीं सके।

जगत्संजनने शक्तिस्त्वयि तिष्ठति राजसी।
सात्विकी मयिरुद्रे च तामसी परिकीर्त्तिता ॥४७॥
तया विरहितस्त्वं न तत्कर्मकरणे प्रभुः।
नाहं पालयितुं शक्ताः संहर्तुं नापि शङ्करः ॥४८॥

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय २२ में लिखा है कि तुम्हारो जन्म कभी नहीं होता और न हे जगत्पते न कभी तुम्हारा अन्त ही होता है न है विभो वृद्धि क्षय व बन्धन तुम में है।

तव जन्म तु नास्त्येव नां तस्तवजगत्पते ।

वृद्धिक्षयपरीणामास्त्वयि सत्ये वनो विभो ॥३१॥

मार्कण्डेयपुराण जिल्द २ अध्याय ८१ में लिखा है किः—

साविद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ।

संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥४४॥

वह भगवती परम विद्या का स्वरूप और मुक्ति का कारण और सनातनी है वही भगवती संसार के बन्धन का कारण और सम्पूर्ण ईश्वरों की ईश्वरी है ।

देवीभागवत् स्कंद ४ अध्याय १८ में विष्णु महाराज ने कहा है कि न मैं स्वतन्त्र हूँ न ब्रह्मा और न शिव इसी प्रकार इन्द्र, अग्नि, यम, त्वष्टा, सूर्य और वरुण भी स्वतन्त्र नहीं यह सब स्थावर, जङ्गम जगत् योगमाया के वश हैं ।

नाहं स्वतन्त्र एवात्र न ब्रह्मा न शिवस्तथा ।

नेन्द्रोग्निर्न यमस्त्वष्टा न सूर्यो वरुणस्तथा ॥३३॥

योगमायावशे सर्वमिदं स्थावरजङ्गमम् ॥३४॥

देवी भागवत स्कन्द १२ अध्याय ८ में लिखा है कि विष्णु की उपासना नित्य नहीं, न वेद ने कहीं विधान किया है न विष्णु की दीक्षा नित्य है और शिव की उपासना भी इसी प्रकार नित्य नहीं है गायत्री की उपासना नित्य है और सब वेदों ने इसकी आज्ञा दी है इस गायत्री को छोड़ कर जो विप्र विष्णु अथवा शिव की उपासना में प्रीति करते हैं वह सर्वथा नरक को जाते हैं ।

न विष्णूपासना नित्या वेदोक्ता तु कर्हिचित् ।

न विष्णुदीक्षा नित्यास्ति शिवस्यापि तथैव च ॥८८॥

गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदैः समीरिता ।

यया विनात्वधः पातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा ॥८९॥

और स्कंद १२ अध्याय ९ में लिखा है कि गौतमजी ने ब्राह्मणों को शाप दिया और कहा था कलियुग में तुम कुम्भीपाक नरक से छूट कर जन्म लोगे और वेद विमुख होगे इस कारण हे राजन् ! कृष्णजी के परमधाम जाने और

कलियुग के आरम्भ होने पर कुम्भीपाक नरक से छूटकर वह लोग जो पहिले गौतम के शाप से दग्ध थे संसार में ब्राह्मण उत्पन्न हुए। जो कभी सन्ध्या नहीं करते थे गायत्री की भक्ति नहीं, वेद से हीन और पाखण्ड मत के अनुयायी अग्निहोत्रादि जो सच्चे कर्म हैं उनको नहीं जानते। कोई २ अपने शरीरों को गरम मुद्राओं से अङ्कित कराते हैं, कोई कपाली, कोई वाममार्गी, कोई बौद्ध, कोई जैन होते हैं, पण्डित होकर भी सारे दुराचारों को फैलाते हैं, पराई स्त्रियों पर दाँ चलाते हैं और दुराचार में लगे हुए हैं ऐसे सब लोग अपने कर्मों से कुम्भीपाक में जायंगे इसलिये पूरे जी से देवी की सेवा करनी योग्य है, न विष्णु की उपासना नित्य है न शिवजी की, शक्ति की उपासना नित्य है जिसके बिना मनुष्य की अधोगति होती है।

न विष्णूपासना नित्या न शिवोपासना तथा।
नित्या चोपासना शक्त्यां विना तु पतत्यधः ॥६६॥

इसके उपरांत ब्रह्मादि सर्वदेव उस सनातनी भगवती का ध्यान करते हैं इससे सबको उचित है सब उसको ध्यावें अर्थात् पूजा करें।

अब श्रीमान् पण्डितजी ब्रह्मा और विष्णु शिव की उत्पत्ति के विषय में संक्षेप से सुन लीजिये।

देखिये शिवपुराण वायुसंहिता—उत्तरार्द्ध अध्याय ५ श्लोक २४ में लिखा है।

गुणेभ्यः क्षोभ्यमाणेभ्यो गणेशाख्यास्त्रि मूर्तयः ॥२४॥

सत, रज, तम जिनसे यह सब जगत् व्याप्त है गुणों के क्षुभित होने से गणेश की तीन मूर्त्ति हैं। मत्स्य अ० २ श्लोक १६ में लिखा है कि—

गुणेभ्य क्षोभमाणेभ्यस्त्रयो देवा विजज्ञिरे।
एक मूर्तिस्त्रयो भागा ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ॥१६॥

अर्थात् सत, रज, और तम इन तीनों गुणों के हिलने से ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर तीनों देव उत्पन्न हुए परन्तु वास्तव में इनकी एक ही मूर्त्ति है।

शिवपुराण सनत्कुमार संहिता अध्याय २ के श्लोक ३५ में लिखा है कि ब्रह्मा और विष्णु यह दोनों शंकर से उत्पन्न हो कल्प २ में मोहित हो जगत् की रचना करते हैं।

ब्रह्माविष्णुश्च द्वा वेतावुद्भूतौ शंकरात्सुतौ ।
कल्पे कल्पे तु तत्सर्व्वं सृजतो मोहयञ्जगत् ॥३५॥

और अध्याय ८ के श्लोक ५७ में लिखा है कि शिवजी ने प्रथम सृष्टि करने की इच्छा से प्रथम प्रकृति को उत्पन्न कर फिर उससे विष्णुसंहिता ब्रह्माजी उत्पन्न हुए।

सृष्टिन्तु प्रथमं कुर्व्वन्प्रकृतिर्नाम नामतः ।
तस्माद्ब्रह्मा प्रकृत्यास्तु उत्पन्नः सह विष्णुना ॥५७॥

ज्ञानसंहिता अध्याय ४ में लिखा है जिस कारण मैं सम्पूर्ण प्राणियों में तुल्यरूप हूं इसी कारण हे पिता यह तुममें इस रुद्र का सन्मान करो इस प्रकृति से ही लक्ष्मी जगत् के पालन और शोभा के निमित्त अंश से प्रकट होगी उसीके अंश से ब्राह्मणी और उसी अंश से काली होगी और कार्य के निमित्त यह अनेक रूपता को प्राप्त होगी हे विष्णु तुम लक्ष्मी का आश्रय कर, जगत् पालन है ब्रह्मन् तुम सरस्वती देवी आश्रय सृष्टिउत्पन्न करने का कार्य करो मैं काली शक्ति के आश्रित हो जगत् का संहार करूंगा।

अहं कालीं समाश्रित्य करिष्ये कार्यमुत्तमम् ॥ ६१ ॥

ज्ञानसंहिता अध्याय १७ में लिखा है मैं ब्रह्म और हर सम्पूर्ण पुरातन देवता सूर्य चन्द्रमा और सम्पूर्ण शुभदायक ग्रह पर्वत नदी वृक्ष कुबेर ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त जो कुछ दीखता यह सब शंकर से उत्पन्न हुआ है।

अहं ब्रह्माहरश्चैव देवाः सर्वे पुरातनाः ।
सूर्यश्च चन्द्रमाश्चैव ग्रहाः सर्वे शुभावहाः ॥ ६५ ॥
तत्सर्वं शिवतो जातं नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ ६७ ॥

लिङ्गपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ६ में लिखा है जो सब जीवों के स्वामी हैं तमोगुण करके कालरुद्र को, रजोगुण से ब्रह्माको, सत्वगुण करके विष्णु को उत्पन्न करते हैं और निर्गुण रहने से साक्षात् महेश्वर हैं

तमसा कालरुद्राख्यं रजसा कनकाण्डजम् ।
सत्त्वेन सर्व्वगं विष्णो निर्गुणत्वे महेश्वरम् ॥ ३० ॥

और अध्याय ७० में लिखा है कि शिव ब्रह्माण्ड से निकले उसने रुधिर के अपने वायें अङ्ग से लक्ष्मी और विष्णु और दक्षिण अङ्ग से सरस्वतीयुक्त ब्रह्मा को उत्पन्न किया ॥

तस्य वामाङ्गजो विष्णुः सर्वदेव नमस्कृतः ।
लक्ष्म्या देव्यासभूद्देव इच्छया परमेष्ठिनः ॥ ६४ ॥
दक्षिणाङ्ग भवो ब्रह्मा सारस्वत्या जगद्गुरु ।
तस्मिनण्डे इमे लोका अन्तर्विश्वमिदं जगद् ॥ ६५ ॥

महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय १४७ में शिवजी महाराज ने कहा है श्रीवत्सचिह्नधारी हृषीकेश सब देवताओं के पूज्य हैं, ब्रह्मा उनके उदर, और मैं, उनके शिरसे प्रकट हुआ हूँ, उनके केशों से अग्नि और रोमावली से समस्त सुरासुर उत्पन्न हुये । ऋषिगण समस्त शाश्वत लोकों की उनके देह से उत्पत्ति हुई है ।

श्रीवत्साङ्को हृषीकेशः सर्वदैवतपूजितः ॥ ३ ॥
ब्रह्मा तस्योदरंभवस्तथा चाहं शिरोभवः ॥ ४ ॥

और अध्याय १४ में लिखा है कि महादेव ही सर्व्वतत्त्व विधानज्ञ प्रधान परमपुरुष हैं जिसके दक्षिण अङ्ग से लोकविधाता पितामह और वाम अंग से लोकरक्षा के निमित्त विष्णु को उत्पन्न किया है ।

योऽसृजद्दक्षिणादङ्गाद् ब्रह्माणं लोकसम्भवम् ।
वामपार्श्वात्तथा विष्णुं लोकरक्षार्थमीश्वरः ॥ ३४२ ॥

पद्मपुराण पंचमपातालखण्ड उत्तरार्द्ध अध्याय ५ में लिखा है कि गुणों से पृथक् अक्षर नाशरहित जो सदाशिव है उनकी सृष्टि करने की इच्छा हुई तब उन्होंने तीनों गुणों को पृथक्कर सबों में समान शक्ति बांट अपने दक्षिण अंग से ब्रह्मा नाम पुत्रको उत्पन्न किया व वाम अंग से हरिनाम को व पीठ से महेशनाम पुत्रको इस प्रकार से उन्होंने तीन पुत्रों को उत्पन्न किया आप कौन हैं तब सदाशिव ने कहा कि तुम पुत्र हो मैं पिता हूं । पद्मसंस्कृत अ० १०८ ॥

यएकःशाश्वतोदेवोब्रह्मवद्यसदाशिवः ।
त्रिलोचनोगुणाधारोगुणातीतोक्षरोव्ययः ॥ ३ ॥

सिसृक्षातस्यजाताथवीत्यात्मस्थंगुणत्रयम् ।
वेदत्रयमिदंज्ञेयंगुणत्रयमिदंहितम् ॥ ४ ॥
पृथक्कृत्वात्मनस्तत तत्रस्थानंविभज्यच ।
दक्षिणांगेऽसृजत्पुत्रंब्रह्माणं वामतोहरिम् ॥ ५ ॥
पृष्ठदेशेमहेशानं त्रीन्पुत्रानसृजद्विभुः ।
जातमात्रास्त्रयोदेवाब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ ६ ॥
ब्रह्माण्डपुराण में लिखा है ।

ब्रह्माविष्णुवह्निशुक्रार्क जलभूमिपुरोगमः ।
सुरासुरासंप्रसूतास्ततः सर्वे महेश्वरी ॥

अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, शुक्र, सूर्य, जल, भूमि आदि सब उन्हीं शिव से उत्पन्न हुए हैं। ब्रह्मवैवर्त अ० ३ में लिखा है कि—

आविर्बभूवतत्पश्चात् स्वयं नारायणः प्रभुः ।
श्यामो युवा पीतवासा वनमाली चतुर्भुजः ॥ ६ ॥
श्रीकृष्णपुरतः स्थित्वा तुष्टावतंपुटांजलिः ॥ब्र० खं० ६॥

जब श्रीकृष्ण से त्रिगुण महत्तत्व, अहंकार पंचतन्मात्रा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द उत्पन्न होचुके तो उसके पीछे आप नारायण जो प्रभु हैं प्रकट हुये वह कैसे हैं श्यामवर्ण, जवान और पीले कपड़े वाले, वनमाली और चार भुजों वाले ऐसे विष्णु ने हाथ जोड़ कर श्रीकृष्ण के आगे खड़े होकर १० से १३ श्लोक तक स्तुत की और ११ श्लोक में लिखा है कि विष्णुजी के पीछे श्रीकृष्णजी की बाईं पाँसू से शुद्धस्फटिक जैसे प्रकाश वाला नंगे बदन पंचमुख (महादेव) प्रकट हुए ।

आविर्बभूव तत्पश्चादात्मनो वामपार्श्वतः ।
शुद्धस्फुटिकसंकाशः पञ्चवक्त्रो दिगम्बरः ॥ १८ ॥

फिर महादेव ने पुलकाँग हो और आंखों में पानी भर गदगदवाणी से श्रीकृष्ण के आगे खड़े होकर स्तुत की इसके पश्चात् श्रीकृष्ण के नाभि कमल से महातपस्वी वृद्ध कमण्डलुधारी (ब्रह्मा) प्रकट हुआ ।

पुलकाङ्कित सर्वाङ्गः साश्रुनेत्रो तिगद्गदः ।
श्रीकृष्णपुरतः स्थित्वा तुष्टवतं पुटाञ्जलि ॥ २६ ॥
आविर्बभूव तत्पश्चात् कृष्णस्य नाभिपङ्कजात् ।
महातपस्वी वृद्धश्च कमण्डलुकरोवरः ॥ ३० ॥

क्रियायोगसार अ० २ में लिखा है कि श्रेष्ठ पुरुष महाविष्णुजी आत्मा से दहिने आत्मा को प्राप्त होकर इस संसार की सृष्टि के लिये ब्रह्मारूप रचते हुए ॥ २ ॥

सृष्टयर्थमस्य जगतः ससर्ज ब्रह्मसंज्ञकम् ।
दक्षिणांगत आत्मानमात्मा श्रेष्ठपूरुषः ॥ २ ॥

उसके पीछे पृथ्वी के स्वामी महाविष्णुजी संसार के पालन के लिये बायें अंश से अपना अंश केशव विष्णुजी को रचते हुए ।

ततस्तु पालनार्थाय जगतो जगतीपतिः ।
विष्णुं ससर्ज वामांशान्निजांशं केशवं मुने ॥ ३ ॥

तदनन्तर संसार के संहार के लिये लक्ष्मी के स्थान प्रभुजी मध्य अङ्ग से नाशरहित महादेवजी को रचते भये ।

अथ संहरणार्थाय जगतो रुद्रमव्ययम् ।
मुने ससर्ज मध्यांगात्कृत पद्मालयः प्रभुः ॥ ४ ॥

भविष्य पुराण अध्याय ६२ में लिखा है कि सूर्यनारायण के दोनों हाथों से ब्रह्मा, विष्णु और उनके ललाट से रुद्र की उत्पत्ति हुई ।

कराभ्यां यस्य देवेशौक विष्णूलोकपूजितौ ।
उत्पन्नौ द्विजशार्दूल ललाटात्त्रिपुरांतकः ॥

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार अ० १५ में लिखा है कि ब्रह्मा, महादेव और इंद्रादिक सब देवता विष्णुजी के अंश से हैं ।

ब्रह्मशंकर रुद्राद्य विष्णवंशाः सकलाः सुराः ॥ ३ ॥

पद्मपुराण पंचम पातालखण्ड पूर्वार्द्ध अध्याय ६६ में शंकर ने पारवतीजी के प्रश्न करने पर कहा है कि श्रीकृष्णजी के अंश से कोटि २ ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर उत्पन्न होते हैं।

तत्कला कोटि कोट्यंशा ब्रह्मविष्णु महेश्वराः ॥ १११ ॥

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण के श्रीकृष्ण जन्मखण्ड के अध्याय ४ ५, ६, ७ में लिखा कि श्रीकृष्ण महाराज से ब्रह्मा, विष्णु और महेश उत्पन्न हुए।

और मत्स्यपुराण अध्याय ४ श्लोक २७ में लिखा है कि त्रिशूलधारी महादेव को ब्रह्माजी ने उत्पन्न किया जैसा कि:—

ततोऽसृजद्वाम देवं त्रिशूलवरधारिणम् ॥ २७ ॥

महाभारत—वनपर्व अध्याय २०३ में लिखा है कि सोते हुए विष्णुकी नाभि से सूर्य के समान प्रकाश वाला कमल उत्पन्न हुआ उससे ब्रह्मा उत्पन्न हुए।

महाभारत शान्तिपर्व अध्याय २७ में भगवान् की नाभि से सूर्य के समान एक दिव्य पद्म उत्पन्न हुआ हे तात! सब लोकों के पितामह भगवान् ब्रह्मा सब दिशाओं को प्रकाशित करते हुए उसी कमल से उत्पन्न हुए।

देवी भागवत स्कन्द १ अध्याय २ में लिखा है ब्रह्मा सृष्टि करते हैं और यह ब्रह्मा विष्णु के नाभिकमल से उत्पन्न होते हैं। ऐसाही महाभारत शान्तिपर्व अध्याय २०७ श्लोक १२ में लिखा है। इन सब के अतिरिक्त ब्रह्मा को गौरवर्ण और चार मुंह वाला, विष्णु श्यामवर्ण और चतुर्भुज शिवजी गौरवर्ण त्रिनेत्र फिर बतलाइये तीनों देवा एकही लेत्रा कैसी—

पण्डितजी—बस लालाजी समाप्त कीजिये।

सेठ—ओ३म् शम्।

पण्डितजी और अन्य महाशय सब चल दिये।

सेठजी—हाथ जोड़ नमस्ते की अन्य महाशयों को यथायोग्य।

पण्डितजी—आयुष्मान् कहा।

अन्य सभ्य पुरुषों ने लालाजी को यथायोग्य कहा।

इति चतुर्थः परिच्छेदः।

पंचम परिच्छेदः ।

-:o:-

श्रीमान् परिडतजी अन्य सभ्यों सहित आ पधारे ।

आर्य्यसेठ—किसी आवश्यक कार्य के लिए बाहर गए थे आते ही श्रीमान् और अन्य सज्जनों को नमस्ते की—

परिडतजी ने—आयुष्मान् और अन्य महाशयों ने यथायोग्य की ।

आर्य्यसेठ—मैं बीस मिनट की आज्ञा चाहता हूँ ।

परिडतजी—बहुत अच्छा ।

आर्य्यसेठ—अपने कार्य से निवृत्त होकर आये और निवेदन किया आज मैं आपको ऐसी कथायें सुनाता हूं जिससे शिव, विष्णु, आदि का बड़प्पन एक दूसरे से स्पष्ट प्रकट होता है कृपाकर सुनिये ।

महादेवजी की अपेक्षा विष्णु महाराज का बड़प्पन

(महादेव का विष्णुकी तपस्या करना और वर मांगना)

पद्मपुराण—षष्ठ उत्तरखण्ड अ० २ में महादेवजी नारदजी से कहते हैं कि एक समय मैंने बद्रिकाश्रम पर बड़ी **तपस्या** की तब भक्तों पर दया करने वाले नारायण हमसे कहने लगे कि हम तुमसे बड़े प्रसन्न हैं वर मांगो जो २ इच्छा हो सो हम देंगे- तुम कैलास के स्वामी साक्षात् रुद्र हो तब महादेवजी ने कहा कि यदि आप हमसे प्रसन्न हैं और वर देने की इच्छा है तो दो वर दीजिये. **प्रथम** आपकी भक्ति सदा हो और मुक्तिराज में होऊं सम्पूर्ण लोग यह कहें कि यह सदैव भक्त है और तुम्हारे प्रसाद से हे देवों के स्वामी मैं उन मनुष्यों को जो मुझको भजेंगे तिनको निस्सन्देह मुक्ति देने वाला होऊं और विष्णु का भक्त संसार में प्रसिद्ध होऊं जिसको हम वर देवें उसकी मुक्ति हो जावे मैं जटा धारण किये भस्म अंगों में लगाये हुये आपके समीप रहूँ और आप के **चरणों के प्रसाद से संसार में प्रसिद्ध होऊं** ।

जटिलो भस्मलिप्ताङ्गो ह्ययं वै तव संनिधौ ।
तव चरणप्रसादेन लोके ख्यातो भवाम्यहम् ॥ १८ ॥

महादेवजी का कपाली होकर विष्णुजी के पास जा यत्न पूंछ वैसाही कर पवित्र होना।

वामनपुराण अ० ३ में पुलस्त्य ने नारद से कहा कि जब महादेव के हाथ में कपाल आगया तब वह चिन्ता से व्याकुल हुए और भयानक रूप वाली ब्रह्महत्या उनके शरीर में प्रवेश कर गई जैसा कि—

इत्येव मुक्त्वा वचनं ब्रह्महत्या विवेशतम् ।
त्रिशूलपाणिनं रुद्रं सं प्रतापित विग्रहम् ॥ ५ ॥

तब वह बदरिकाश्रम में गये जहाँ नारायण को न देखकर यमुना में स्नान करने गये उसका जल सूख गया फिर सरस्वती पर गये वह भी अन्तर्द्धान होगई फिर महादेव पुष्करादि तीर्थों और नदियों और आश्रम पर गये परन्तु ब्रह्महत्या के पापसे न छूटे फिर कुरु जंगल में गरुड़ पर सवार विष्णु को देख अनेकान प्रकार से स्तुति कर कहा कि हे केशव आप पापरूपी बन्धन से मुक्त करो। ब्रह्महत्या का पाप जो मेरे शरीर में घुसा है उसे नष्ट करो मैं बिना विचारे कर्म करने वाला हूं मुझको आप पवित्र करें तब भगवान ने कहा हे महादेव! तुम ब्रह्महत्या को नाश करने वाली, पुण्य को बढ़ाने वाली वाणी को सुनो—प्रयाग में जो प्रदेश असी के नाम से प्रसिद्ध है जो दोनों नदियों के बीच योगशायी के नाम से प्रसिद्ध है-वह त्रिलोकी में श्रेष्ठ है सब पापों का नाश करने वाला लोल नाम से प्रसिद्ध है जो दशाश्वमेध तीर्थ कहाता है जहां मेरे अंश वाले केशव भगवान बसते हैं-वहां जाकर पापों से रहित हूजिये-यह सुन और नमस्कार कर महादेवजी काशी में दशाश्वमेध तीर्थ पर पहुंच लोल नाम सूर्य के दर्शन कर तीर्थ मे स्नान कर पाप रहित हो केशव के समीप जा नमस्कार कर महादेव ने कहा कि आप के प्रताप से ब्रह्महत्या का नाश हुआ।

केशवं शंकरो दृष्ट्वा प्रणिपत्येदमब्रवीत् ।
त्वत्प्रसादाद्धृषीकेश ब्रह्महत्याक्षयंगता ॥ ४४ ॥

फिर महादेवजी ने कहा कि मेरे हाथ से खोपड़ी नहीं गिरी तब केशव ने कहा मेरे आगे यह दिव्य और कमलों करके युक्त है इसमें स्नान करो कपाल छूट जायगा फिर यह कपाल नाम से पूसिद्ध होगा। महादेवजी ने ऐसा किया

अर्थात् स्नान करते ही कपाल छुट गया और वह स्थान कपालमोचन तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

योऽसौममाग्रतो दिव्यो ह्रदः पद्मोत्पलैर्वृतः।
एष तीर्थवरः पुण्यो देवगंधर्वपूजितः॥ ४७॥
एतस्मिन्प्रवरे पुण्ये स्नानं शीघ्रं समाचर।
स्नानमात्रस्य चाद्यैव कपालं परिमोक्ष्यति॥ ४८॥
स्नातस्य तीर्थेत्रिपुरांतकस्य परिच्युतं हस्ततलात्कपालम्।
नाम्नाबभूवाथ कपालमोचनं तत्तीर्थवर्यं भगवत्प्रसादात्॥५१॥

औवर्नाम ऋषि का महादेवजी को शाप देना और फिर उनके बतलाये हुये उपाय से शापमोचन होना।

वाराहपुराण उत्तरार्द्ध अ० १४१ में लिखा है कि गोनिष्क्रमण नाम स्थान पर औवर्नाम महान् ऋषि ने सत्तर कल्प विष्णु का तप किया एक दिन कमल के पुष्पों को लेने के लिये हरिद्वार गया। उसी समय महादेवजी उस स्थान पर पहुंचे उनके तेज से वह स्थान भस्म होगया और शिवजी हिमालय को चलेगये।

इधर और्व ऋषि गंगा स्नानादि से निवृत्त हो पुष्प ले अपने स्थान पर गये तो निज स्थान को कुटी समेत भस्म होता देख क्रोधयुक्त हो कहने लगे कि जिसने हमारे आश्रम को दग्ध किया है वह भी अनेक दुःखों से संतप्त संसार में भ्रमण करता हुआ क्षणमात्र भी सुख न पावेगा, इस भांति शाप देकर और्व ऋषि तप में लग गये।

येनैव चाश्रमो दग्धो बहुपुष्पफलोदकः।
सोऽपि दुःखेन सन्तप्तः सर्वलोकान् भ्रमिष्यति॥१६॥

संस्कृत अध्याय १४७

महात्मा के शाप से महादेव जी भ्रमण करने लगे तब देवताओं को बड़ी चिन्ता हुई और विष्णु भी दुःखी हुए क्योंकि यह दोनों एक ही रूप हैं इस लिये दोनों के दुःख दूर होने के लिये आप और्व ऋषि के पास जाकर अपराध क्षमा

कराओ क्योंकि बिना उनकी कृपा के यह दुःख दूर नहीं होगा विष्णु जी पार्वती जी की बातें सुन महात्मा जी के समीप गये और उनको शांति कर के क्लेश दूर होने की प्रार्थना की जैसा कि—

ततो नारायणं गत्वा सहतेन तमोवकम् ।
विज्ञापयामो रुद्रस्य शापोऽयं विनिवर्त्तताम् ॥
सन्तप्ताः स्म वयं सर्वे तस्माच्छापं निवर्त्तय ॥२४॥

तब प्रसन्न हो मुनिने कहा कि क्लेश जब ही शांत होगा जब सुर भी नाम गौके दुग्धों से स्नान करोगे ।

सुरभी गणमानीय गत्वैतं स्नापयन्तु वै ॥

इसके पश्चात् विष्णु ने सात सौ गौओं को उत्पन्न किया उनके दूध से शिव और विष्णु स्नान कर क्लेश से छूट सुखी हुये ।

एतस्मिन्नन्तरे देवि ! मया गावोऽवतारिताः ।
सप्तसप्तति कल्याणि सौरभेया महोजसः ॥२६॥
तैमाप्लावितदेहास्च परां निर्वृति मागताः ॥२७॥

महादेव जी को युद्ध में श्री कृष्ण महाराज का जीतना और पार्वती जी की प्रार्थना करने पर अस्त्र से मुक्ति कर फिर शिवजी की प्रार्थना करने पर बाणासुर को छोड़ना ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय २५० में लिखा है कि जब श्री कृष्ण महाराज के पुत्र अनिरुद्ध जी को पकड़ ले गये और बाणासुर से संग्राम हुआ तब उसने नागपाश से उनको फंसा लिया जिसका सब वृत्तांत नारद ने कृष्ण महाराज से आकर कहा तब वह सेना समेत युद्ध स्थान पर गये—वहां महादेव जी उसकी सहायता पर थे जिनको देख सेना को पीछे छोड़ कृष्ण बलभद्र और प्रद्युम्न को साथ लेकर गये और महादेव जी से युद्ध प्रारम्भ करते हुये । जब महादेव ने शीतज्वर को छोड़ा तब कृष्ण ने तापज्वर से निर्वाण किया फिर कृष्ण ने दुरासह मोहन अस्त्र को महादेव जी पर छोड़ा उस समय महादेव उस अस्त्र से मोहित हो वारंवार जंभाई लेकर मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े ऐसा देख स्वामी कार्तिकजी शक्ति लेकर श्रीकृष्ण के सन्मुख गये जिनको हुंकार ही से भगा दिया इस प्रकार श्री कृष्ण जी ने शूलपाणि त्रिलोचन श्री महादेव जी को जीतकर प्रताप युक्त होकर बड़े शब्द से पांचजन्य संख को बजाया । २६ ।

एवं जित्वा यदुश्रेष्ठः शूलपाणिं त्रिलोचनम् ।
महास्वनं पांचजन्यं शंख दध्मौ प्रतापवान् ॥३६॥

जब बाणासुर ने यह सुना तब वह उनके समीप जाकर अनेक अस्त्र शस्त्र छोड़े जिनको भगवान् ने काट अपने शस्त्रों से उसकी भुजाओं का काट डाला तब उनके समीप पार्वती जी ने आकर उनसे कहा कि आपने मुझको कैलास पर्वत पर निरन्तर प्रसन्न होकर सदा सौभाग्य होने के लिये वर दिया था और आपका नाम भी गौरी सौभग्य है आप अपने नाम को सत्य कीजिये और हमारे पति को जिलाइये ।

तत्सत्यं कुरु गोविन्द गरुडारूढ शाश्वत ।
तस्मान्मम पतिं देवत्वं जीवयितु मर्हसि ॥४६॥

तब श्री कृष्ण जी उस अपने अस्त्रको संहार कर देते हुए तब श्रीकृष्ण के अस्त्र से छूट कर सब भूतों के पति शिवजीने उठ कर भगवान् के हाथ जोड़ कर ५१ श्लोक से ८३ श्लोक तक स्तुति कर कहा कि बलि के पुत्र ने पूर्व समय में हमारी तपस्या की थी उस समय मैंने अमर होने का वर दिया था अब आप इसकी रक्षा कीजिये । तब गोविन्द ने चक्र को संहार कर बाणासुर को छोड़ दिया तत्पश्चात् महादेव जी पार्वती समेत श्रेष्ठ बैल पर चढ़ अपने रहने के स्थान कैलास पर चले गये ॥

वृषभेन्द्रसमारूढ़ा पार्वत्या सहिता प्रभुः।
ययौ स्व वसतिस्थानं कैलासं धरणी धरम् ॥८५॥

विष्णु महाराज की आज्ञा से शिव का भस्म हाड चर्म इत्यादि का धारण कर तामस पुराणों की रचना फिर पाप से छूटने के लिये विष्णु के दिये मंत्र का जप कर आनन्द में रहना ।

पद्म पुराण षष्ठ उत्तर खण्ड अध्याय २३५ में लिखा है कि एक बार पार्वती जी ने शिवजी महाराज से पूछा कि आप मुण्ड, भस्म, चमड़ा और हाडों को कि जिसका धारण करना वेद से निन्दित है इनको किस लिये धारण करते हैं और वह किस हेतु से निन्दित है इनको किसलिये धारण करते हैं और वह किस हेतु से निन्दित है महाबुद्धिमान् यह सब हम से

कहिये शिवजी ने कहा कि पूर्व समय में स्वायम्भुवमनु के अन्तर में नमुचि आदिक महा दैत्य महाबली, महावीर्यवान् थे जो सब विष्णु जी में रत शुद्ध सब पापों से वर्जित और स्वधर्म से युक्त थे उन्होंने इन्द्रादि को भग्न कर दिया तब सब देवता विष्णु जी के समीप जाकर कहने लगे कि इन महाबली दैत्यों को आपही मारिये अन्य देवताओं के मारने योग्य नहीं हैं तब विष्णु जी ने हम से कहा कि हे रुद्रजी दैत्यों के मोहन के लिये आप तामस पुराणों को कहिये और मुण्ड, चर्म, भस्म और हाड के चिन्हों को धारण कर तीनों लोकों को मोहित कीजिये और मैं भी अवतारों में तामसों के मोहन के लिये तुम्हारी पूजा करूंगा इस सूरत से दैत्य गिर जाँयगे तब मैंने कहा इस से मेरा भी तो नाश होगा तब उन्होंने कहाकि आप हमारे सहस्र नाम को जपिये यह मंत्र सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाला है और भस्म और हाडों के धारण करने का भी पाप सब नाश हो जायगा। हे पार्वती देवताओं के हित के लिये मुण्ड, चर्म, भस्म और हाडों की माला मैंने धारण की और उनकी आज्ञा से तामस पुराणों को मैंने किया जिस से सब राक्षस भगवान् से विमुख हो गये। तब उनको देव समूह ने जीत लिया जो हमारे मत को धारण कर पृथ्वी तल में घूमते हैं वे सब धर्मों से रहित होकर सदैव नरक को देखते हैं।

येमे मत मवष्टभ्य चरंति पृथिवीतले।
सर्व धर्मैरवरहिता पश्यंति निरयं सदा ॥५६॥

हे देवी इस प्रकार देवताओं के हित के लिये हमारी वृत्ति निन्दित है विष्णु की आज्ञा पाकर मैंने भस्म और हाडों को धारण किया है।

एवदेवं हितार्थाय वृत्तिर्मे देवि गर्हिता
विष्णोराज्ञां पुरस्कृत्य कृतं भस्मास्थिधारणम् ॥६०॥

यह मेरे बाह्य चिन्ह वैरियों के मोहन के लिये हैं परन्तु हृदय में नित्य जनार्दनदेव का ध्यान कर तारकमंत्र जो विष्णु के सहस्रनाम के समान है और रघुवंशियों के कुलका बढ़ाने वाला षड्क्षर महामंत्र को सदा जपकर सदैव आनन्द के अमृत से युक्त हो निरन्तर महासुख को भोगता हूँ।

महादेवजीका रामजी की स्तुति करना

पद्मपुराण षष्ठी उत्तरखंड अध्याय २४३ में लिखा है जब श्रीरामचन्द्रजी महाराज बनसे आकर राजगद्दी पर विराजमान हुए उस समय देवताओं के

सम्मुख महादेवजी ने रामचन्द्रजी की स्तुति की हम और पार्वती संसार में आपको ही पूजते हैं आपका नाम जपने वाली पार्वती मैं हूँ ॥ ३६ ॥

आवां राम जगत्पूज्यौ ममपूज्यौ सदा युवाम् ।
त्वन्नामजापिनी गौरी त्वन्मंत्रजपवानहम् ॥ ३६ ॥

पद्मपुराण सृष्टिखंड अध्याय १४ में लिखा है एक समय ब्रह्माजी ने सृष्टि रचने का विचार किया तो उनके पसीने से एक अति विकराल पुरुष धनुर्बाण हाथ में लिये उत्पन्न हुआ। जो ब्रह्माजीही को मारने को दौड़ा तब उन्होंने कहा कि तुम हमसे उत्पन्न हुए हो हमहीं को मारते हो तब वह महादेवजी के निकट गया जिसको देखकर विष्णु के आश्रम पर जा कहा कि महाराज हमारी रक्षा करो। विष्णु ने हुंकार की ध्वनि से उसको ऐसा मोहित किया वह सब प्राणियों से अदृश्य होगया उस समय महादेवजी ने भूमि पर गिर कर साष्टाङ्ग प्रणाम किया।

आर्य्यसेठ—श्रीमान् इन कथाओं के पाठ से विष्णु महाराज का बड़प्पन प्रतीत होता है अब आगे शिवजी का बड़प्पन सुनाता हूँ।

शिव महत्त्व ।

अर्थात्

विष्णु और ब्रह्माजी से शिवजी का अधिक बड़प्पन ।

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय २ वा ३ में लिखा है कि जब नारायण जल में शयन कर रहे थे तब उनकी नाभि से कमल हुआ और उस कमल से हिरण्यगर्भ नाम मैं उत्पन्न हुआ और परमात्मा की माया से मोहित हो मैंने कमल के बिना कुछ न जाना कि मैं कौन हूं, कहां से आया हूँ मैं किसका पुत्र हूं। इस प्रकार चिन्ता करके विचार किया कि मैं क्यों मोह में प्रसित हूँ जहां इस कमल का अन्त होगा वही मेरा कर्त्ता होगा तो फिर मैं कमल की डण्डी पकड़ १०० वर्ष तक नीचे चला गया परन्तु कमलोत्पत्ति का स्थान न मिला तो मैंने फिर कमल पर आने की इच्छा कर कमल को पकड़ ऊपर आया परन्तु कमल का अग्रभाग न मिला इस प्रकार १०० वर्ष होगये तो क्षणमात्र थक कर स्थिर हुआ तब आकाशवाणी हुई कि तप करो। तब द्वादश वर्ष तप करने से विष्णु चारभुजा शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारे हुये आगे देखे, तब मैंने कहा तुम कौन हो तब कहा, भगवान् हरि! हे वत्स! तुम सत्य जानो तुम्हारे बनाने वाले विष्णु हैं तब मैंने माया से मोहित हो चुक कर कहा तुम मुझे वत्स कैसे कहते

हाँ, पापरहित मैं ही संसार की उत्पत्ति पालन करता हूं, तुम गुरु के समान बन शिष्य के समान मुझे हास्यपूर्वक बोलते हो मैं साक्षात् जगत् का रचने वाला प्रकृति का भी प्रवर्त्तक सनातन अज विष्णु हूं। हे ब्रह्मन्! जगत् मुझसे ही उत्पन्न होता है और तुम मेरे अविनाशी शरीर से उत्पन्न हुये हो और मैंने ही पूर्वकाल में २४ तत्व की रचना की है यह उनके वचन सुनकर ब्रह्माजी को क्रोध हुआ और घुड़ककर बोले तुम कौन हो कौन तुम्हारा भी कर्त्ता होगा और माया से मोहित हो कठिन युद्ध होने लगा उसके शान्त करने और दोनों को समझाने के निमित्त हम दोनों के बीच में एक अद्भुत-रूप लिङ्ग प्रकट हुआ जो सहस्रों ज्वाला करके युक्त प्रलय काल की अग्नि के समान था, क्षय और वृद्धिसे रहित आदि मध्य अन्त से वर्जित, उपमारहित, अनिर्वाच्य, व्यक्त से परे, संसार का उत्पत्ति कारण, उसकी सहस्रों ज्वाला से भगवान् हरि मोहित हो बोले अब क्यों वृथा ईर्षा करते हो यहां यह तीसरा हमारे तुम्हारे बीच में प्रादुर्भूत हुआ इसकी परीक्षा के लिये हंसरूप धारण करके ब्रह्मा ऊपर को और विष्णु वाराह रूप धारण कर शीघ्रता से पाताल को गये इस प्रकार एक सहस्र वर्ष विष्णु नीचे २ फिरते रहे उसी समय से संसार में श्वेतवाराह कल्प प्रसिद्ध हुआ और जब इन वाराहरूप विष्णु ने और हंसरूप ब्रह्माने आदि न पाया तो ब्रह्मा नीचे को और विष्णु ऊपर को चले अन्त में ये दोनों मिलकर महादेव की स्तुति करने लगे तब १०० वर्ष के पश्चात् ओमिति यह शब्द त्रिमात्र युक्त प्रकट सुनाई दिया फिर विचार कर कहा जहां से यह शब्द उत्पन्न हुआ उसके निमित्त नमस्कार है ऐसा कह लिंग के दक्षिण भाग में उस सनातन ओंकार को देखा प्रथम अक्षर अकार और उसके उपरान्त उकार और मध्य में मकार और अन्त में नाद इस प्रकार ओंकार का दर्शन किया इस ओंकार में अकार सृष्टि का कर्त्ता उकार पालनकर्त्ता और मकार नित्यप्रति अनुग्रह करने वाला है और उसी समय उनके पांच मुख दश भुजा कपूर के समान गोरा शरीर देख कर हम ब्रह्मा विष्णु स्तुति करने लगे तब वे हंसते हुये लिंग में स्थित हुए और उनके सम्पूर्ण अंगों को देख विष्णुजी ने फिर प्रार्थना की तब उन्होंने कहा कि सृष्टि के कर्त्ता ब्रह्मा और पालनकर्त्ता हरि और मेरा एक अंश सृष्टि का संहार करने वाला होगा और तीनों देवताओं के अंश को एक २ शक्ति प्राप्त होगी और वह

सम्पूर्ण गण मेरी आज्ञा से सृष्टि का कार्य करें और ओंकारात्मक परतत्त्व प्राप्त करके विष्णु भगवान् ने उन परमात्मा का परतत्त्व जानकर उस रूप का दर्शन किया और पांच मंत्रों से हरि जप करने लगे।

पंचमंत्रंतथालब्ध्य जजाप भगवान् हरिः।

विद्येश्वरी संहिता अध्याय ६ में लिखा है कि विष्णु महाराज ईश्वरत्व की इच्छा करके भी सत्यवक्ता रहे इस कारण महादेवजी ने प्रसन्न होकर देवसमूह के देखते अपनी समानता विष्णुजी को दे दी।

इति देवः पुरांप्रीतः सत्ये न हरये परम्।

ददौस्वसाम्यमत्यर्थं देवसंघे च पश्यति ॥ ३२ ॥

ज्ञानसंहिता अध्याय ४ में लिखा है विष्णु ने शंकर से पूछा कि तुम किस प्रकार संतुष्ट होते हो और आपका ध्यान किस प्रकार करना चाहिये। तब शिवजी ने कहा कि इस लिंग का सदैव पूजन करना योग्य है और जैसा मेरा रूप इस समय तुमको दीखता है वैसा ही सदैव तुमको ध्यान करना उचित है फिर उन्होंने कहा ब्रह्मा तुम सृष्टि उत्पन्न करो और विष्णु पालन करते हुए मेरी परमभक्ति को करो। फिर विष्णु ने अनेक प्रकार उनकी महिमा वर्णन की और इसी समय से लिंग की पूजा चली और जो कोई लिंग के समीप इस आख्यान अर्थात् शिवपुराण के अध्याय ३ को पाठ करता है वह ६ मास में शिव स्वरूप हो जाता है।

यस्तुलिङ्गसमाख्यानं पठतेशिवसन्निधौ।

षण्मासाच्छिवरूपो वै नात्रकार्यविचारणा ॥ ६६ ॥

और विष्णु ने कहा कि हे शंकर हे कृपासिंधु हे जगत्पते ! आप सुनिये जो कुछ आपने कहा है यह सब कुछ आपकी आज्ञा से मैं करूंगा।

शंकरश्रूयतामस्तः कृपासिंधो जगत्पते।

सर्वं चैतत्करिष्यामि भवदाज्ञापरायणः ॥२०॥

आपका मैं सदा ध्यान करूंगा इसमें संदेह नहीं और पूर्वकाल में मैंने ही आपसे सामर्थ्य की प्राप्ति की थी।

ममध्येयः सदात्वं च भविष्यसि न चाऽन्यथा।

भवतः सर्वसामर्थ्यं लब्धं चैव पुरामया ॥ २१ ॥

आप परमात्मा का ध्यान मेरे चित्त से कभी भी क्षण मात्र को दूर न हो।

क्षणमात्रमपि च ते ध्यानं वै परमात्मन:।
चेतसो दूरतश्चैव मा गच्छतु कदाचन ॥ १२ ॥

———:o:———

श्रीकृष्ण महाराज का शिव के परमभक्त उपमन्यु से अपनी जय के लिये उपाय पूंछ शिवका पूजन कर मंगलप्राप्ति करना।

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय १९ में लिखा है कि श्रीकृष्ण महाराज ने उपमन्यु से शिवजी के आराधना का मंत्र पाकर सात महीने तक निरन्तर कमल, बेलपत्र, सौपत्र, कुश, कनेर, दूब, आकके फूल, कमलपुष्प और शंखपुष्प इत्यादि चढ़ाकर शिवजी को सन्तुष्ट किया। तब मन से प्रसन्न हो वासुदेव बोले कि हे शङ्कर! इस समय आपकी कृपा से मेरे सब कुछ विद्यमान हैं परन्तु दैत्यों से पीड़ित होकर आपकी शरण में आया हूं आपको ब्रह्मादि पूर्वजों ने भी सेवन किया है। जब इस प्रकार से प्रार्थना की तब शिवजी प्रसन्न होकर बोले कि धन, धान्य, पुत्र, स्त्री अनेक विध सुख और महा पराक्रम तुममें हो जायगा इस समय पार्वती ने भी अनेक वर दिये।

दैत्यैश्च पीड़ितश्चाहं त्वामहं शरणंगतः।
पूर्वैश्च सेवितः शम्भुस्त्राणा सेव्यतेऽधुना ॥१९॥
एवं च प्रार्थितस्तेन पुनः प्रोवाच वै शिवः।
धनं धान्यं तथा पुत्रान्स्त्रियश्च विविधास्तथा ॥२०॥

यह शिवजी के वचन सुन कृष्ण बहुत प्रसन्न हो बोले। हे देव श्रेष्ठ पहिले भी आपने हमारी प्रार्थना पर पालना की थी। हे प्रभो आपने ही सुदर्शन चक्र दिया था उसी से मैं सम्पूर्ण देवादिकों का भी जय कर सकता हूं, इस समय भी आपने मनोवांछित फल प्रदान किया है ऐसा कहकर शिवजी की पूजा की। तब परमेश्वर प्रसन्न होकर बोले हे कृष्ण जाओ आज से नित्य तुम्हारे

मंगल की वृद्धि होगी यह आज्ञा पाय कृष्ण द्वारिका को चले गये और सन्तुष्ट हो सबका पालन करने लगे वहां शिवजी विल्वेश्वरनाम से विख्यात हुए। त्रैलोक समुदाय के शंकर आजतक यहीं विराजे। ७ महीने तक कृष्णमहाराज ने नित्य ही बेलपत्र देवेशको चढ़ाये इससे वह विल्वेश्वर विख्यात हुए उनके ऊपर से बेलपत्री उतार के एक स्थान पर रखदी। कृष्णजी की प्रार्थना पर लोक के मंगलके हेतु वहां स्थित हुए उसी दिन से भगवान् श्रीकृष्ण भक्ति, मुक्ति के फल देने और श्री शंकर का सेवन करने लगे।

—:o:—

श्रीकृष्ण महाराज का शिवजी की तपस्या कर पुत्र लाभ करना।

शिवपुराण वायु संहिता अ० १ में वायु ने कहा कि श्रीकृष्ण ने स्वेच्छा से अवतार धारण किया था कारण कि वे वसुदेव हैं उन्होंने क्लेशकारक मनुष्य शरीर की निन्दा करते मुनि श्रेष्ठ को देखा। रुद्राक्ष की माला के गहने पहने, जटामण्डल से मण्डित, अपने शिष्य हुए मुनियों से वेदशास्त्र के समान आवृत हुए शिवके ध्यान में रत शांत स्वभाव महा द्युतिमान्, उपमन्यु को देखकर सब शरीर प्रसन्न होगया और बड़े मानसे श्रीकृष्ण ने उनकी तीन प्रदक्षिणा करके उनका सत्कार किया। उनके दर्शन मात्र से ही श्रीकृष्ण के सब अमंगलदूर होगए। जो मायामय कर्म थे सब मिट गये। तब निर्मल होकर श्रीकृष्ण उपमन्यु को भस्मादि लगाने के मन्त्र जैसे अग्निरीति भस्म, वायुरीति भस्म इत्यादि विधि पूर्वक सत्कार करके फिर बारह महीने में होने वाला साक्षात्, पाशुपतव्रत मुनिने श्रीकृष्ण से कराकर उनको उत्तम ज्ञान दिया। उस दिन से व्रत धारण करने वाले वे मुनि श्रीकृष्ण के दिव्य पाशुपतव्रत से युक्त हुए समीप में रहने लगे। तब गुरु की आज्ञा से परम शांतिमान् श्री कृष्ण ने पुत्र होने की इच्छा से साम्ब के उद्देश्य से शंकर का तप किया एक वर्ष की उपरान्त तप करके महेश्वर का दर्शन किया और व्यग्रतारहित हो सगण साम्ब पुत्र को पाया जिस कारण कि अम्बा पार्वती सहित महादेव ने यह अपना पुत्र दिया।

यस्मात्साम्बो महादेवः प्रददौ पुत्रमात्मनः ॥२१॥

—:o:—

विष्णु महाराज का स्तुति कर महादेव जी से वर प्राप्ति करना।

लिंगपुराण अध्याय १९ में लिखा है कि जब विष्णु महाराज ने महादेव जी की स्तुति की उस समय शिवजी ने प्रसन्न होकर कहा कि हम तुमसे प्रसन्न हैं भय को त्यागन कर दर्शन कीजिये। तुम दोनों मेरे ही शरीर से उत्पन्न हुए हो वर मांगो। उस समय विष्णु जी ने कहा कि यदि आप हमसे प्रसन्न हो तो यही वर दीजिये कि आपके चरणों में हम दोनों की दृढ़भक्ति हो, यह सुन महादेव जी ने कहा कि ऐसा ही होगा तब विष्णु जी ने दण्डवत कर कहा कि आप हमारे भ्रम को दूर करने के अर्थ प्रकट हुए यह आपकी बड़ी कृपा है। उस समय शिवजी ने कहा कि मैं ही ब्रह्मा, विष्णु और रुद्ररूप होकर सृष्टि स्थिति संहार करता हूँ इस हेतु तुम तीनों मेरे ही रूप हो, तुम इस मोहको छोड़कर जगत् का पालन करो। पाद्म कल्प में ब्रह्माजी तुम्हारे पुत्र होंगे तबभी तुम दोनोंको मेरा दर्शन होगा। इतना कह महादेव अन्तर्धान होगये। उसी दिनसे जगत् में शिवलिंग की पूजा का प्रचार हुआ। लिंग की वेदी अर्थात् जलहरी पार्वती लिंग साक्षात् शिव का रूप है। सब जगत् का उसी में लय होता है इस लिये उसका नाम लिंग है।

विष्णु और ब्रह्मा के सम्वाद में विष्णु के कथनानुसार शिवका आदि पुरुष होना।

लिंगपुराण अध्याय २—सब ऋषि सूतजीसे पूछते हैं कि पद्ममें ब्रह्माजीपद्म से किस भांति उपजे और ब्रह्मा और विष्णु जी को किस भांति शिवजी का दर्शन हुआ। सूतजी ने कहा कि प्रलय समय समुद्र में पद्म धारण किये शेषनाग

नोट—देखिये कि पद्मपुराण में तो महादेव विष्णु की स्तुति की तब विष्णुने प्रसन्न हो वर दिया तो महादेव ने यह मांगा कि आपके चरणों में हमारी दृढ़ भक्ति रहे। और लिंगपुराण में विष्णु ने भक्ति का वर महादेव से प्राप्त किया कि आपके चरणों में हमारी निश्चय भक्ति रहे और देवी भागवत में इन तीनों देवों ने देवी की स्तुति और उसकी भक्ति की है। विद्वान लोग स्वयं विचार स्थित कर सकते हैं कि पुराणों की रचना किस प्रकार की है॥

रूपी शय्या पर लक्ष्मी सहित अचिन्त्य योग में स्थित होकर श्रीविष्णुजी शयन करते भये। उस समय क्रीड़ा के निमित्त शतयोजन विस्तार वाला एक कमल अपनी नाभि से उत्पन्न किया इसी बीच चतुर्मुखी आये। विष्णु को देख आश्चर्य से कहने लगे कि तुम कौन हो और यहां क्यों सोते हो तब विष्णु उठ कर कहने लगे कि प्रति कल्प में हम यहां ही शयन करते हैं और आकाशवाणी स्वर्ग आदि के हमही प्रभु हैं। फिर उनसे पूछा कि तुम कौन हो और कहां से आये हो कहां को जाओगे कहां रहते हो हम तुम्हारा क्या सत्कार करें। यह विष्णुजी का वचन सुन शम्भु के माया से मोहित हुये २ विष्णुजी को विना जाने ब्रह्माजी कहने लगे कि जैसा तुम जगत के प्रभु अपने को कहते हो इसी भांति हम भी जगत् के स्वामी और सिरजने हारे हैं इस प्रकार ब्रह्माजी का वचन सुन विष्णुजी को बड़ा आश्चर्य हुआ और उनकी आज्ञा पाकर विष्णुजी मुख में प्रवेश करते हुए वहां ब्रह्माजी के उदर में अठारह द्वीप सात समुद्र बड़े २ पर्वत सात लोक ब्राह्मणादि चार वर्ण अनेक भांति स्थावर, जंगम विष्णुजी देख विस्मित हो विचार करने लगे कि बड़ा भारी तप ब्रह्माजी का है इधर उधर विचरने लगे परन्तु हज़ारों वर्ष तक कभी अन्त न पाया फिर मुख के मार्ग निकल आये और ब्रह्माजी से कहा कि आप के पेट का कुछ अन्त नहीं परन्तु आप मेरे उदर में प्रवेश करें यह सुन ब्रह्माजी उनके पेट में गये तो सब लोकों को देखा परन्तु अन्त न पाया और विष्णुजी सब द्वार बन्द कर शयन करने लगे। जब उनके निकलने की इच्छा हुई और मार्ग न मिला तो सूक्ष्मरूप धारण कर विष्णुजी की नाभि के मार्ग कमलनाल के सहारे बाहर निकल आये और उसी पर विराजमान होगये। इतने में त्रिशूल हाथ में लिये शुक्लवस्त्र धारण किये हुये महादेव वहाँ आये उनके चरणों से पीड़ित हुये समुद्रजल के बिन्दु आकाश तक पहुंचे और अति शीतल कभी अति उष्ण वायु चलने लगी यह बड़ा आश्चर्य देख ब्रह्माजी विष्णुजी से कहने लगे कि यह जल के बिन्दु और यह प्रचंड पवन इस कमल को कम्पायमान कर रहा है यह क्या उपद्रव है, यह आप कहैं। यह ब्रह्माजी का वचन सुन मनमें विचार कर विष्णुजी बोले कि तुम कौन हो क्या भय तुमको हुआ तब ब्रह्माजी बोले कि जिस प्रकार आपने हमारे उदरमें प्रवेश कर सब लोक देखे उसी भाँति हमने भी आपके उदर में देखे परंतु जब हमने बाहर निकलना चाहा तब आपने ईर्षा से द्वार रोक लिये तब मैं सूक्ष्मरूप धारण कर कमल नालके मार्गसे बाहर निकल आया इसमें आप बुरा न मानें जो कुछ आपको करना हो करें हम आपके आधीन हैं। ब्रह्माकी यह मधुरवाणी सुन विष्णुने कहा हमने आपको बोध कराने के लिये सब द्वार रोके थे इसका आप कुछ क्षोभ न करें। आप हमारे मान्य

और पूज्य हैं इस लिये हमसे जो कुछ अपराध बना हो क्षमा कर दीजिये और इस कमल से नीचे उतर आइये क्योंकि हम आपका बोझ नहीं सह सक्ते आप जगत् गुरु हैं।

तब ब्रह्माने कहा कि आप हमसे वर मांगो तब विष्णु ने कहा कि यही वर है कि आप इस कमलसे नीचे उतर आवें और हमारे पुत्र बनें तो आप भी परम हर्षको पावेंगे। लिंग अ० २० ॥

सहोवाच वरं ब्रूहि पद्मादवतरप्रभो।
पुत्रोभवममारिंप्रमुदं प्राप्स्यसि शोभन म् ॥ ५४ ॥

आजसे आप सबके स्वामी पगड़ी धारे रहो पद्मयोनि तुम्हारा नाम हमारे पुत्र होकर सात लोक के स्वामी होंगे यह तो विष्णु जी ने कहा और ब्रह्माजी ने मांगे थे उनको देख सब मनके विकल्प दूर करते हुए इसी अवसर में सूर्य के समान प्रकाशमान् बड़ा मुख दश भुजा त्रिशूल हाथ मे लिये भयङ्कर रूप धारे आदि भयानक शब्द करते हुए शिवजी चले आते हैं यह देख ब्रह्माने विष्णुजी से पूछा कि यह कौन है तब विष्णु बोले ठीक है इनके चरणों से समुद्र व्याकुल हो रहा है और जल के बिंदुओं से तुम भीग भी गये हो इनकी नासिका के पवन से यह हमारी नाभिकमल तुम्हारे सहित कांपता है यह साक्षात् महादेव हैं।

दोधूयते महापद्म स्वच्छन्दं मम नाभिजम्।
समागतो भवानीशो ह्यनादिश्चान्तकृत्प्रभुः ॥ ६५ ॥

अब हम दोनों इनकी स्तुति करें। यह सुन ब्रह्मा क्रोध कर बोले कि आप अपने स्वरूपको और हमारे स्वरूपको नहीं जानते यह हमसे अधिक महादेव नाम कौन है। यह सुन विष्णुजी बोले कि ब्रह्माजी ऐसा आप न कहें यह जगत् के हेतु हैं और सब इनके बीज हैं ये बीजवान् हैं। पुराण परमेश्वर इन्हीं को कहते हैं यह जगत् इनका खिलोना है बीजवान ये हैं आप बीज हैं और हम योनि हैं।

बालक्रीडनकैर्देवः क्रीडते शङ्करः स्वयम्।
प्रधानमव्ययो योनिरव्यक्तं प्रकृतिस्तमः ॥ ७१ ॥

ब्रह्मा और विष्णु की स्तुति सुन महादेवजी का दोनों को वर देना।

---:o:---

लिंगपुराण अध्याय २२। जब ब्रह्मा और विष्णुने स्तुतिकी तब महादेव अत्यंत प्रसन्न हुये और दोनों को जानते भी थे परन्तु क्रीड़ा के निमित्त पूछते हुये कि तुम दोनों कौन हो? जो आपसमें बड़ी प्रीति रखकर इस घोरसमुद्रमें स्थित हो रहे हो। यह महादेवजी का वचन सुन ब्रह्मा, विष्णु आश्चर्यसे देखने लगे कि हे भगवन्! क्या आप हमको नहीं जानते आपने ही तो अपनी इच्छासे हमको उत्पन्न किया है। यह उनका वचन सुन श्री महादेवने प्रसन्नहो कहा कि हे ब्रह्माजी हे विष्णु जी! हम तुम्हारी इस दृढ़ भक्ति और उत्तम स्तुतिसे बहुत प्रसन्न भये हैं जो कुछ वर आपको चाहिये मांगो। यह शिवजी का वचन सुन विष्णुजी ने कहा कि महाराज आपके दर्शन पाये इससे अधिक और क्या वर होगा जो आप मुझपर प्रसन्न हैं तो अपने चरणारविन्द में दृढ़भक्ति देवो। यह विष्णुजी से सुन उनको अपनी दृढ़ भक्ति दी। ब्रह्माजी से भी महादेव कहते भये कि तुम इस लोक के कर्त्ता होगे सब जगत् के स्वामी रहोगे इतना कह प्रीति से दोनों की पीठ पर हाथ फेर कर कहा कि तुम दोनों मेरे को अति प्रिय हो और मेरे तुल्यहो अब हम जाते हैं तुमभी प्रसन्न रहो और अपना २ व्यवहार करो इतना कह वह अंतर्द्धान हो गये।

ब्रह्माजी भी विष्णुजी से ज्ञान पाय प्रजा सिरजने की इच्छासे उग्र तप करने लगे बहुतकाल तप किया परन्तु कुछभी सिद्धि न हुई तब तो ब्रह्माजी को क्रोध भया। नेत्रोंसे अश्रुके बिंदु गिरे उन वात पित्त, कफ रूपी बिन्दुओं से महा विष करके युक्त बड़े भयानक सर्प उत्पन्न भये जिनको देख वह बड़े दुःखी हुये और कहने लगे कि हमारे तपको धिक्कार है जो पहिलेही संहार करने वाली प्रजा उत्पन्न भई, अब क्या करें इतना कहते ही ब्रह्माजी दुःखसे मूर्च्छित हो गिर पड़े और प्राणत्याग दिये।

नोट—देखिये पंडित महाराज इस कथा के पढ़ने से भलीभांति इन ब्रह्मा, विष्णु, की सर्वज्ञता शक्तिमत्ता, को समझ गये होंगे कि दोनों एक दूसरे के पेट में हजारों वर्ष रहे और घूमा करे परन्तु एक दूसरे ने किसी का पार न पाया परन्तु महादेव के देखते ही आप योनि बन गये और ब्रह्मा को बीज और महादेव को बीम मान उनका पिता बना दिया।

उस समय उनकी देह से बड़ी दीनता के कारण रोते हुये रुद्र निकले और रोने से ही उनका नाम रुद्र हुआ शिवजीने ब्रह्माजी की यह दशा देख दया से फिर उनको प्राणदिये और चैतन्य किया और ब्रह्माजी ने शिवको प्रणाम कर स्तुति की।

तस्य तीव्रा भवन्मूर्च्छा क्रोधामर्ष समुद्भवा।
मूर्च्छाभिर्परितापेन जहौ प्राणान् प्रजापतिः॥ २२॥

विष्णु जी का हिमालय पर शिवलिंग स्थापन कर शिव की आराधना कर अपने नेत्र उखाड़ चढ़ाना फिर प्रसन्न हो शिव का नेत्र और सुदर्शनचक्र का देना।

:o:

लिंगपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ९८ और शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ७० में लिखा है कि पूर्वकालमें देवताओं और दैत्यों का बड़ा घोरसंग्राम हुआ उसमें दैत्योंने नाना शस्त्रों से देवताओं को पीड़ितकर पराजित किया तब देवता विष्णु भगवान् की शरणमें गये उन्होंने जाने का कारण पूछा तब उन्होंने अपने उपरोक्त दुःखको वर्णन किया और कहा कि यदि आपको महादेवसे सुदर्शनचक्र नाम शस्त्र मिलजावे तो दैत्यों का वध हो सकता है अन्यथा नहीं तब विष्णु भगवान् ने कहा कि हे देवताओ शिवजीका आराधन करो शीघ्र तुम्हारा दुःख दूर करेंगे

नोट—क्यों महाराज सुना आपने कि ब्रह्मा और विष्णु स्वयं अपने मुख से महादेव से कह रहे हैं कि आपही ने तो हमें अपनी इच्छा से उत्पन्न किया है क्यों ब्रह्मा मैं, जिनको कि अंशावतार कहते हैं महादेव को वरदान के पूर्व सृष्टि उत्पन्न करने की शक्ति न थी तब यह कथन कि ब्रह्मा ने सृष्टि रची कैसे सार्थक होगा। ब्रह्मा के रोने से जो अश्रु गिरे उनसे सर्प उत्पन्न होगये ब्रह्मा के आंसू थे कि सांपों के अंडे ? जब ब्रह्मा और विष्णु दोनों शरीरधारी समुद्र पर थे तो उनके शरीर कहां से आये और समुद्र क्या सृष्टि से पृथक् है यदि आप कहें कि उनके शरीरों को निराकार ने रचा तो जिसने कि ब्रह्मा और विष्णु को रचा (उत्पन्न किया) क्या उसमें इस सृष्टि के रचने की सामर्थ्य न थी जो कि ब्रह्मा, विष्णु, महादेवादि को रच इनसे सहायता लेता।

चिन्ता मत करो इतना कह वह हिमालय पर्वत पर जाय मेरुपर्वतके समान अति मनोहर विश्वकर्मा का बना हुआ शिवलिंग स्थापन कर त्वरि सूक्त और रुद्राध्याय से गंगाजल करके स्नान कराय गन्ध, पुष्प, नैवेद्य आदि उपचारों से पूजाकर भक्तिसे हवन कर हाथ जोड़ स्तुतिकर सहस्र नामों के आदिमें प्रणव और अन्तमें नमः लगा प्रतिनामसे एक २ कमलका पुष्प शिवलिंगके ऊपर चढ़ाने और इसीभांति नित्य हवन करनेलगे इस बीचमें शिवजी ने उनकी भक्ति की परीक्षाके लिये गिने हुए सहस्र कमलों में से एक कमल गुप्तकर दिया विष्णुजीने भी सब कमल चढ़ाय देखा तो एक घट रहा तब भगवान ने कमल-पुष्प न मिलने से अपना नेत्र कमल उत्पाटन कर शिवजी के अर्पण किया।

हृतपुष्पो हरिस्तत्र किमिदन्त्वभ्यचिन्तयत्।
ज्ञात्वा स्वनेत्रमुद्धृत्य सर्वसत्वावलम्बनम् ॥ १६१ ॥

इस भाँति विष्णु भगवान् का दृढ़भाव देख कोटि सूर्य्यके समान देदीप्यमान जटा और मुकुट से मण्डित ज्वाला, माला करके व्याप्त सब शरीर पर भस्म लगाये अग्निकुंडमें शिवजी प्रकट हो अतिभयानक रूप देख सब देवता भयभीत हो भागे और ब्रह्मांड-कांप उठा, विष्णु भगवान् भक्तिसे प्रणामकर हाथ जोड़ आगे खड़े हुए, शिवजीने कहा कि हे विष्णुजी हम देवताओं का कार्य जानते हैं आपने भी हमारी बहुत सेवा की है तुम हमारे भयंकर रूपका ध्यान करते हुए युद्ध करो तुम विना आयुधके भी जय पाओगे इतना कह हजारों सूर्य्यके तुल्य प्रकाशक सुदर्शनचक्र शिवजीने विष्णु भगवान् को दिया और कमलके समान अति सुन्दर नेत्र भी दिया। उसी दिनसे भगवानका नाम पुण्डरीक हुआ।

नेत्रञ्च नेता जगतां प्रभुर्वै पद्मसन्निभम्।
तदा प्रभृतितं प्राहुः पद्माक्षमिति सुव्रतं ॥ १७७ ॥

फिर भगवान्के ऊपर प्रेम से हाथ फेर शिवजीने कहा कि तुमने अपनी दृढ़भक्तिसे हमको वश कर लिया जो कुछ वर चाहो मांगो तब विष्णु महाराज ने कहा कि आपमें दृढ़ भक्ति हो यही वर चाहता हूँ तब शिवजीने कहा कि तुम सदा देवता और दैत्योंके पूज्य होगे और जब दक्षकी पुत्री सती अपने माता पितासे क्रोधकर शरीर त्याग हिमालय के घर उत्पन्न होगी उस अपनी भगिनी

नोट—देखिये पण्डितजी कैसे आश्चर्य की बात है और विशेष कर इसको वैष्णवी भाई ध्यान पूर्वक सुनें कि इनके उपास्यदेव ने शिवजी की पूजा की और जब महादेव ने एक फूल चुरा लिया तो विष्णु ने अपनी आंख निकाल कर शिव लिंग पर चढ़ा दी क्या इन्हीं विष्णु को ईश्वरावतार और सर्वज्ञ मानते हैं। फिर न कि यह केवल विष्णु शिव के भक्त ही रहे।

को ब्रह्माजी की आज्ञानुसार हमको विवाह दोगे उस दिनसे हमारे सम्बन्धी और जगत् पूज्यहो जाओगे और हमको अपना मित्र समझोगे ।

भगिनी तव कल्याणीं देवीं हैमवतीमुमाम् ।
नियोगाद्ब्रह्मणः साध्वीं प्रदास्यसि ममैवताम् ॥ १८५ ॥
मत्सम्बन्धी च लोकानां मध्ये पूज्यो भविष्यति ॥ १८६ ॥

इसी लिंगपुराण में कई जगह यह लिखा है कि शिव पिता और विष्णु, ब्रह्मा पुत्र हैं फिर क्या महादेव के वरदानसे पूर्व विष्णु जगत् के रचयिता और पूज्य न थे ?

ब्रह्माजी का देवताओं के सहित क्षीर सागर पर विष्णुजी की स्तुति कर उनसे पूछ कार्य्य करना ।

ज्ञानसंहिता अध्याय २५ में लिखा है कि एक वार ब्रह्मा सब देवताओं सहित क्षीरसागर पर जाकर स्तुति करने लगे उस समय विष्णु ने पूछा कि आप किस प्रयोजन से आये हैं ब्रह्माने कहा कि हमको किसकी पूजा करनी योग्य है तब उन्हों ने कहा कि हे देवाधिदेव सब दुःखों के दूर करने हारे शंकर की पूजा करनी योग्य है ।

यदि सेव्यः सदादेवाः शंकरः सर्वदुःखहा ।
ममापि कथितं तेन ब्रह्मणोपि विशेषतः ॥ २१ ॥

प्रत्यक्ष तुमने देखा कि तारकासुरके पुत्र शिवकी पूजा न करने से ही नष्ट हो गये इसलिये शिवलिंगका पूजन करना उचित है इसकी पूजा में सब देवता दानव आ जाते हैं और उन्हीं की पूजा करने से साँसारिक और पारमार्थिक सुखों की प्राप्ति होती है इस लिये उसी समय से पद्मराग मणिके लिंगको, इन्द्र सुवर्णके लिंगको, कुबेर पीले मणिमयलिंगको धर्मराज श्यामलिंगको, वरुण इन्द्र-मणिके लिंगको, विष्णु सुवर्णमयलिंगको, ब्रह्मा, विश्वेदेवा और वसुओं को चांदी का, वायुको आरकूट (पीतल) अश्वनी कुमारको मृत्तिका का, लक्ष्मी देवी को स्फुटिकमणिका, आदित्यको ताम्रका, सोमराज को मौक्तिक का, अग्नि को हीरे का, ब्राह्मणोंको मृत्तिकाका और चन्दन के शिवलिंग में इष्ट हुआ एवं अनन्तादि नाग मूगोंका दैत्य गोमयका और इसी प्रकारका महाबली राक्षस भी पूजने लगे तथा पिशाच लोहमयलिंगका शिवा देवी मक्खन के निमित्त योगी भस्म सूर्य्य

पती छायापिष्ट ब्राह्मणी रक्षका यज्ञ दही के इत्यादि सब देवता और ऋषि, ब्रह्मा विष्णु सिद्धि की इच्छासे शंकर का पूजन करते हैं।

ते पूजयंति सर्वे वै देवाऋषिगणास्तथा।
ब्रह्मा चैव तथा विष्णुरये देवाश्च ये पुनः॥ ४८॥
पूजयंति तदा देवं नित्यं सिद्धिमीहया। ४९॥



शिवजी का ब्रह्मा विष्णु से कहना कि मैं ही ईश्वर हूं।

शिवपुराण विद्येश्वरी संहिता अ० ६ व ७ व ८ व ९ एक बार ब्रह्मा विष्णु के यहाँ गये और उनसे कहने लगे कि तुम कौन हो क्यों अभिमान करते हो? मैं तुम्हारा स्वामी हूँ। विष्णुने कहा यह जगत् मुझमें स्थित है, तुम चोर के समान किस प्रकार कहते हो, तुम मेरी नाभि से उत्पन्न हुये, इस लिये मेरे पुत्र हो, फिर मुझे पुत्र क्यों कहते हो। दोनों में संग्राम होने लगा, देवता व्याकुल होकर शिव के पास गये और सब वृत्तान्त जान गणोंको समर में जानेकी आज्ञा दी और आपभी गये जहां ब्रह्मा और विष्णु थे वहां दोनों के बीच में निर्गुण ब्रह्म स्थित हुये इस महा अग्नि के प्रकट होते ही दोनों आपस में कहने लगे कि यह इन्द्रियगोचर क्या है इसका पता लगाना चाहिये। ऐसा कह विष्णु शूकर का रूप धर नीचेको, ब्रह्मा हंसका रूप हो ऊपर को गए। फिर विष्णुने सत्य कहा ब्रह्माने मिथ्या भाषण किया जिसपर शिवजी ब्रह्मासे अप्रसन्न और विष्णु से प्रसन्न हुये। फिर ब्रह्मा का मद दूर करने के लिये महादेवने अपनी भृकुटी से भैरव को उत्पन्न किया उसने कहा मैं क्या करूं शिवने कहा कि यह जगत् के आदि देवता और ब्रह्मा हैं इनका तीक्ष्णधार वाले खड्ग से प्रहार करो सुनते ही भैरव ने एक हाथसे केश पकड़ ब्रह्मा का पाँचवां असत्यभाषी शिर काट कर और भी शिर काटने की इच्छा की।

स वै गृहीत्वैक करेण केशं तत्पंचमंदृसमसत्यभाषणम्।
छित्त्वाशिरांस्यस्य निहंतुमुद्यतः प्रकंपयन्खड्गमति स्फुटंकरैः।
अध्याय ८ श्लोक ४।

तब ब्रह्मा भैरव के चरणों पर गिर पड़े, तब विष्णुने कहा कि पहिले आपने कृपा करके पांच शिर दिये एक जाता रहा अब जाने दीजिये तुमने

अपनी पूजा होने के लिये छल किया इस लिये लोक में तुम्हारा सत्कार और उत्सव न होगा। अंतको जब दोनों ने शिवलिंगकी पूजाकी तब शिव ब्रह्मा, विष्णु से प्रसन्न हुए और कहने लगे कि मैं ही परब्रह्म हूँ, मैं ही ईश्वर हूं जैसाकि अ० ६ में कहा है।

अहमेव परंब्रह्ममत्स्वरूपं कलाकलम्।

ब्रह्मत्वादीश्वरश्चाहं कृत्यं मेनुग्रहादिकम्॥ १६॥

यही कथा लिंगपुराण अध्याय १६ में आई है।



रामचन्द्र आदि का ब्रह्म हत्या दूर करने के लिये शिव की उपासना करना।

लिंगपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १७ में लिखा है कि ब्रह्मा आदि देवता बड़े २ राजा मुनि आदि शिवलिंग की पूजा करते हैं, विष्णुके अवतार रामचन्द्र जी ने ब्रह्मा के पुत्रको मार तदुपरान्त ब्रह्महत्या रूपी निवृत्तिके लिये समुद्र के तटपर शिवलिंग स्थापन किया हज़ारों पाप करके सैकड़ों ब्राह्मण मारकर जो शुद्ध भावसे शिवजी की शरणमें आय वह निस्संदेह मुक्ति ही पावे। सब लोक लिंगमय हैं और लिंगमें स्थित हैं इस कारण मुक्तिपदकी इच्छा वाला पुरुष सदा शिव लिंगकी पूजा करे जैसा लिङ्ग उत्तरार्द्ध अ० ११ श्लोक ४० में लिखा है।

सर्वेलिंगमया लोकाः सर्व्वे लिङ्गे प्रतिष्ठिताः।

तस्मादभ्यर्चयेलिंग यदीच्छेच्छाश्वतं पदम्॥ ४०॥

———:०:———

सरयू तीर श्रीराम के भोजन कराने के समय शिवका अतिथि रूप में जा चमत्कार दिखलाना।

पद्मपुराण पंचम पाताल खंड अध्याय १४ में लिखा है श्री रामचन्द्रजी सरयूतीर नारदादि महात्माओं को भोजन करा रहे थे उसी समयमें एक वृद्ध

नोट—देखिये महाराज पद्मपुराण जो शिव के भक्त बनगये और लिंग पुराण में शिव-भक्त विष्णु बने क्या एक दूसरे के विरुद्ध यह नहीं है? अब

ब्राह्मणने जिसके मुंहसे लार निकलती थी, शरीर काँपता था खाल सब झूली पड़ी थी श्रीरामसे कहा कि हमको भी भोजन दो तब रामने लक्ष्मणसे कहा कि इनके पैर तुम धोओ हम अन्यों के धोवें उस अभ्यागतने कहाकि जब आपही हमारे पैर धोवेंगे तब ही हम भोजन करेंगे क्या हमसे श्रेष्ठ इनमें कोई और ब्राह्मण है जो हमारा अनादर करते हो इससे तुम नरकको जाओगे तब श्रीराम जी ने पैर धोये फिर श्राद्धकी सब क्रिया कर ब्राह्मण भोजन कराने लगे तब वह वृद्ध ब्राह्मण सब परोसा हुआ भोजन एक ही ग्रासमें खा गया फिर भोजन माँगा तब रामजीने शम्भु मुनिसे कहा कि आप इनको भोजन कराइये क्योंकि आप साक्षात् शिव हो और आपकी पार्वती हैं तब पार्वतीने कहा कि मैं अभी अघवाये देती हूँ इतना कह सुवर्णके पात्र में भात ले सुवर्ण की करछी से यह कह कि यह भोजन विप्रको अक्षय हो ऐसा कह उसके दहिने हाथमें दिया उसने फिर बायाँ हाथ निकालकर पायस माँगा, वह दोनों से खाने लगा जब वह न चुका तो एक हाथ और निकाला पार्वतीने उसमें दिया इस भाँति सहस्र हाथ तक निकाले और देवीजीने सहस्र हाथ तक सब पूर्ण करदिये तब उस विप्र ने कहा कि अब हम पूर्ण होगये जलसे आचमन किया और उस वृद्धको बुलाया वह न गया तब रामजीने कहा कि चलो तब उससे कहा कि उठा नहीं जाता तब रामजीने कहा कि हमारे हाथ के सहारे से उठो पर न उठा तब हनूमानने एक हाथ अपना पकड़वाकर दूसरेसे ऐंचा पर न खिंचा और रोदन किया कि हमारे हाथ को खेद होता है अब तुम कोई और भाग पकड़ कर खींचो तब हनूमान अपनी पूंछ से उसका शिर लपेटकर दौड़े पर वह न हिला हनूमान ने दोनों पैर जमाकर हाथों से उठाकर घर ऊपर उठाय फेंक दिया वह गृह फूट गया ब्राह्मण बाहर आगये फिर उसने जल मांगा तब लक्ष्मण लेकर गये उसने कहा कि सीता को भेजो वह मेरे सब अंगों को धोवे सीता गई उसने जल दिया उसने कुल्ला मुखपर कर दिया सीताने कुछ नहीं कहा वही उनको भूषण हो गया फिर सीताजी ने खकार आदि सब धोकर सब नाकका मैल निकाल बाहर किया फिर लक्ष्मणने आचमन कराकर कहा कि उठो तब उन्हों ने कहा कि हमपर उठा नहीं जाता तब जाम्बवन्तने उठाकर जहां सब ब्राह्मण बैठे थे बिठादिया तब राम आदिने प्रदक्षिणाकी कि रामने सीतासे कहाकि इनका मल

इन दोनों श्लोकों का आशय विष्णु इत्यादि का पूजन छोड़ शिव बन धरन रौरव नरक के भागी एवं जार इत्यादि को दोष लिंगपुराण लगावेगा। हम यह दर्शा चुके हैं कि देवी भागवत में रामचन्द्र ने देवी का पूजन किया और पद्मपुराण में एकादशी व्रत से और लिंगपुराण में शिवलिंग के पूजन से समुद्र पार हुये। कहिये पण्डित जी इनमें से किस को ठीक मानें।

स्वच्छ नहीं किया सीताने कहा कि अभी सब किया की तो भी मैला होगा तब विप्रने कहाकि हमारी दोनों ऊरू तो सीता पकड़ेरहे और आप दोनों हाथ। भरत पंखा करे लक्ष्मण हमारे शिरके केश सवारते रहें शत्रुघ्न हमारी खकार धोते रहें तब सबों ने ऐसाही किया तब सीताने तिरछी भौंहेंकी यह सुन शंख चक्र गदा धारण किये अतिथिजी प्रसन्न हुये पीताम्बर ओढ़ प्रकाशित हो बोले कि शिव शम्भुकी तुमने पूर्वकाल में आराधना की वे अब प्रसन्न हुये इतना कह रामचन्द्र जी का हाथ पकड़ कर शिवजी खड़े हो गये तब सबने बहुत सत्कार से नमस्कार किया छाती से लगा मस्तक चूंमा कहा कि वर मांगो।

तब रामजी ने कहा कि हमको कुछभी मांगना नहीं है क्योंकि पृथिवी मण्डलका राज्य प्राप्त ही है स्वर्ग कर्मों से मिल रहा है नाना प्रकारके भोगविलास आपके चरणोंके दर्शनसे मिल रहे हैं शरीर की आरोग्यता और यश आदि सब हैं स्त्री सीता सब स्त्रियों में श्रेष्ठ है इस लिये यह वर मांगते हैं कि तुममें हमारी स्थिर भक्ति हो ॥ १८४ ॥ संस्कृत अध्याय ११७। श्लोक १८६॥

तथापि वरयो किंचिद्भक्तिरस्तुस्थिरात्वयि। १८६॥

दूसरा वर यह है कि हे देव तीन वर्ष तक तुम हमारे घर में इसी रूप से बस कर सब धर्म करते रहो।

तथा ममगृहे देव त्रिवर्षतिष्ठेश्र प्रभो। १८६॥

ब्रुवन्स मस्तधर्मांश्च रूपेणानेन शंकरम्॥ १८७॥

तब शम्भु ने कहा कि राम ऐसा ही होगा। तब विष्णु भगवान् जो लोकालोक के पारसे श्रीरामके साथ आये थे बोले कि हम भी तुमसे प्रसन्न हैं वर मांगो श्रीरामजी ने कहा कि हमको तुमसे कुछ अब मांगना नहीं है क्योंकि जो कुछ मिलना था वह सब शम्भु से मिल चुका है सो अभी आपके सामने भी कह चुके हैं हां विष्णु सर्वदा प्रसन्न बने रहो तब उन्होंने सीतासे कहा कि हम तुमसे प्रसन्न हैं तुम वर मांगो सीताने कहा कि हमने तो पूर्व समय में भर्ता का वर मांगा था अब अन्य वर नहीं मांग सकीं जो वर दिया चाहो तो यही वर दो कि पर पुरुष से वर माँगने की इच्छा न हो। तब शिव ने कहा कि हम पार्वती सहित तुम्हारे मन्दिर में बसेंगे।

एकांत मंदिरे रम्ये देव्यासह वसामि ते ।।६४।।

विष्णु भक्त राजा क्षुप और शिव भक्त दधीचि से युद्ध होना क्षुप की मदद पर विष्णु का जाकर लड़ना और उस से हारना ।

:0:

लिंगपुराण अध्याय ३५ व ३६ सनत्कुमार जी ! ब्रह्माजी का पुत्र क्षुप नाम एक राजा दधीचिमुनी का परम मित्र था । एक दिन दोनों का विवाद हुआ, दधीचि ने कहा कि ब्राह्मण से श्रेष्ठ राजा क्षत्रिय उत्तम होते हैं । दधीचि को क्रोध आया और राजा के शिर में मूका मारा, तब क्षुप ने वज्र से गिराया । तब दधीचि ने शुक्र जी महाराज का स्मरण किया, जिन्होंने बहुत शीघ्र आकर अमृत संजीवनी विद्या से राजा को चंगा कर दिया और कहा कि तुम महादेव की आराधना करो जिस से अवध्य हो जाओ । हमने भी यह विद्या महादेव जी से प्राप्त की है । फिर उसके जय की विधि बतलाई जिसको सुन दधीचि मुनिने बड़े तप से शिवको प्रसन्न किया और उनके वर से अवध्य हो गया और वज्र के तुल्य अस्थि हो गए और सब दीनता जाती रही तब फिर आकर राजा को ताड़न किया और क्षुपराजा ने भी दधीचि की छाती में वज्रमारा परन्तु उसके न लगा, क्योंकि शरीर अवध्य हो गया था तब राजा भी विष्णु जी का आराधन करने लगा जब विष्णु प्रसन्न हुये तब राजा ने अपना सब वृत्तांत कहा तो विष्णु बोले कि जो ब्राह्मण शिव शरण रहते हैं उनको किसी प्रकार का भय नहीं होता शिव भक्त चाहे नीच भी हो इस लिये तुम्हारा विजय न होगा अब हम दधीचि मुनि को क्रोध कराते हैं जिससे देवताओं सहित हमको शापदे जिससे दक्ष के यज्ञ में देवताओं सहित हमारा नाश हो केवल तुम्हारे जय होने के कारण हम यत्न करते हैं ।

यह सुन राजा ने कहा कि जैसी आपकी इच्छा हो वैसा कीजिये तब विष्णु जी ब्राह्मण का रूप धारण कर दधीचि आश्रम में गये और कहा कि हे ब्रह्मदधीचि तुम से एक वर मांगते हैं आप हमको दें तब उन्होंने कहा कि तुम्हारा अभिप्राय मैं जानता हूँ मैं आप से भी नहीं डरता आप विष्णु हैं और ब्राह्मण का रूप धारण कर आये इसको छोड़ दीजिये यह सुन उन्होंने ब्राह्मण का रूप छोड़ दिया और अपना रूप धारण कर दधीचि ने कहा कि तुम परम शिव भक्त हो इस लिये सर्वज्ञ हो तुमको किसी का भी भय नहीं परन्तु हमारे कहने से राजा क्षुप से सभामें कह दो कि हम तुमसे डरते हैं जब दधीचि ने न माना और

कहा कि मैं शिवकी कृपासे किसीसे भी नहीं डरता तब तो भगवान्‌को बड़ा क्रोध आया और दधीचि के दग्ध करने के लिये चक्र उठाया परन्तु कुंठित हो गये उस समय राजा क्षुप भी वहीं था तब दधीचि ने कहा कि आपको चक्र शिवजी से मिला है इस लिये शिव भक्तों पर नहीं चला अब आप किसी दूसरे अस्त्र से मारने का यत्न करें यह सुन सब अस्त्र एक साथ चलाये और देवता भी उनकी सहायता के लिये आये दधीचि ने उस समय शिवजी का स्मारण किया और एक कुशा की मुष्टि सब देवताओं पर फेंक दी जो कालाग्नि के तुल्य त्रिसूल हो गया उसने भी यही सोचा कि सब देवताओं को दग्ध कर दूं इन्द्र विष्णु आदि ने जो अस्त्र छोड़े थे वह सब त्रिशूल को प्रणाम करने लगे और देवता व्याकुल होकर भाग गये विष्णु ने करोड़ों गण अपने समान उत्पन्न किये परन्तु दधीचि ने सब को एक ही बार में भस्म कर दिया तब तो दधीचि को विस्मय करने को विश्व रूप धारा दधीचि ने उनके शरीर में करोड़ों देवता रुद्र गण और ब्रह्मांड देखे तब दधीचि ने जल से अभ्युक्षण कर के कहा कि आप इस माया को छोड़ देवें। मैं आपको दिव्यदृष्टि देता हूँ मेरे शरीर ही में आप ब्रह्मा विष्णु रुद्र आदि करोड़ों देवता और ब्रह्मांड देख लीजिये इतना कह दधीचि ने अपने शरीर में सम्पूर्ण विश्व दिखादिया और कहा कि इन मायाओंसे कुछ फल नहीं आप इस मायाको त्याग युद्ध कीजिये मुनिका प्रभाव देख कर विष्णुजी को ब्रह्माने आकर युद्ध से हटाया। विष्णु भी दधीचि को प्रणाम कर अपने लोक को जाते भये। राजा क्षुप भी दुःखी होकर दधीच की पूजा कर बारबार प्रणाम कर कहने लगा आप मेरे अपराध को क्षमा कीजिये विष्णु अथवा और देवता भी आपका कुछ नहीं कर सके आप परम शिव भक्त हैं यह भक्ति मुझ से अधम क्षत्रियों को क्योंकर मिल सकती है।

इस लिये आप अनुग्रह करें और अपराध क्षमा किया जावे यह राजा का दीन वचन सुन उन्होंने अनुग्रह किया और सब देवताओं को शाप दिया कि दक्ष प्रजापति यज्ञ में विष्णु सहित सब देवता रुद्र के क्रोध रूप अग्नि में दग्ध होंगे।

रुद्रकोपाग्निना देवाः सदेवेन्द्रा मुनीश्वरैः।
ध्वस्ता भवन्तु देवेन विष्णुना च समन्विताः ॥७३॥

इस प्रकार युद्ध कर मुनि ने कहा कि सबसे बलवान् और पूज्य सदा ब्राह्मण हुआ करते हैं मुनि कुटी में पधारे। जहां युद्ध हुआ उस स्थान का नाम स्थानेश्वर भया वहां जो शरीर को त्याग करे वह शिवलोक को पाते हैं और जो इस वृत्तान्त को पढ़ता है वह अल्पमृत्यु को जीतता है और ब्रह्मलोक को जाता है।

तत्रैव तीर्थमभवत् स्थानेश्वरमिति स्मृतम् ।
स्थानेश्वरमनुप्राप्य शिवसा पूज्यमाप्नुयात् ॥७७॥
य इदं कीर्त्तयेद्दिव्यं विवादं चन्द्रधीचयोः ।
जित्वापमृत्युं देहान्ते ब्रह्मलोकं प्रयाति सः ॥७८॥



श्वेतमुनि का शिवलिंग की पूजा कर मृत्यु को जीतना ।

लिंगपुराण अ० ३० श्वेतमुनि एक पर्वत की गुहा में रहते और तप करते थे जब उनकी मृत्यु समीप आई तब वह **नमस्ते रुद्र मन्यवे०** इत्यादि रुद्राध्याय से श्री महादेव जी की स्तुति करने लगे इस अवसर में काल भगवान् भी श्वेतमुनि का आयुष समाप्त हुआ जान उनको ले जाने के अर्थ उनके आश्रम में आए श्वेतमुनि भी काल को देख त्र्यम्बक भगवान् का स्मरण करते हुये पूजन करने लगे और कहने लगे कि हमारा मृत्यु क्या कर सकती है श्री महादेव जी के अनुग्रह से हम ही मृत्यु के भी मृत्यु हो गये उनको देख काल भगवान् ने हंस कर कहा कि हे श्वेत मुनि अब हमारे पास चले आओ इस पूजा पाठ से क्या फल है, शिव, ब्रह्मा, विष्णु, आदि कोई भी हमारे ग्रास किये जीव के छुड़ाने को समर्थ नहीं यह तुम्हारी आयुष समाप्त हो गई है अब हम क्षणमात्र में तुमको यमलोक में ले चलते हैं। यह काल का वचन सुन हा रुद्र हा रुद्र इस भांति ऊंचे स्वर से श्वेत मुनि विलाप करने लगे और शिव जी के लिंग को दीन दृष्टि से देखते हुए व्याकुल हो काल के प्रति कहने लगे कि हे काल इस लिंग में हमारे प्रभु भक्तों का भय हरने हारे श्री महादेवजी विराजमान हैं इस लिये तुम अपने स्थान को जाओ हमारा कुछ नहीं कर सकते यह श्वेत का वाक्य सुनते ही बड़े क्रोध से गर्ज कर काल भगवान् ने पाश से श्वेत मुनि को बाँध लिया और कहा कि हे श्वेत ! यमलोक में ले जाने के अर्थ हमने तुमको बांधा है अब रुद्र ने क्या सहायता की, कहाँ शिव कहाँ तेरी भक्ति, तेरी पूजा और पूजा का फल इसी लिंग में जो रुद्र स्थित हैं वह निश्चेष्ट हैं इस लिये उसकी

नोट—यह कथा स्पष्टरूप से शिव को ब्रह्म और विष्णु को न केवल शिव से ही किंतु उनके भक्त दधीच से भी बना रहा है।

पूजा करना उचित नहीं इतना कहते ही नन्दीगण, पार्वती और शिवजी महाराज वहां प्रकट होगये तब तो काल भगवान् भयभीत हो भूमि पर गिर पड़ा तब श्वेतमुनि ने प्रसन्न हो महादेव को सहित पार्वती के प्रणाम किया आकाश से फूलोंकी वर्षा हुई शिव जी का प्रभाव देख नंदी ने प्रणाम कर कहा कि महाराज यह मूर्ख काल अपने अज्ञान से मृत्युवश भया अब इस के ऊपर कृपा कीजिये।

आर्यसेठ—श्रीमान् पंडित जी ब्रह्मा विष्णु महादेव जी के बड़प्पन को तो आप सुन चुके अब देवी महारानी के अद्भुत और अपूर्व गुणों के सारको भी श्रवण कर लीजिये।

सुयोग्य पंडितजी—बहुत अच्छा।

विष्णु की निद्रा दूर करने के लिये ब्रह्माजी का वम्री का उत्पन्न करना फिर सब देवताओं का भगवती की तपस्या कर घोड़े का सिर जोड़ना।

—:o:—

दैत्यों से दश हज़ार वर्षों तक युद्ध हुआ इसके पश्चात् वह किसी स्थान पर पद्मासन कर कंठ में धनुषकोटि लगा करके शयन कर रहे, थके तो थे ही कुछ दैवयोग से बहुत ही निद्रित हुए कुछ दिनों के पश्चात् ब्रह्मादि देवों की इच्छा यज्ञ करने की हुई इसलिये सर्वयज्ञों के स्वामी विष्णुजी के समीप सम्मति लेने को गये परंतु वैकुंठ में विष्णुजी को न पाया तब ज्ञान-दृष्टि से जहां विष्णु भगवान् थे वहां पहुंचे देखा कि विष्णुजी सोरहे हैं तब कुछ दिनों तक आशा देखी कि अब जागे परन्तु न जागे तो इन्द्र ने कहा कि किसी यत्न से निद्रा भंग करो परंतु इस में बड़ा दूषण है तुम लोग यज्ञकार्य की ओर

नोट— क्यों महाराज कालका वास्तविक अर्थ तो समय है परन्तु लोकमें प्राणों के वियोग का नाम काल है यद्यपि समयवाची कालकी सवग्रन्थों में संख्या हैं परन्तु जो कि मृत्यु का पर्यायवाची काल माना जाता है वह केवल, मृत प्राणवियोग का अर्थ देता है। विद्वज्जन विचार कर सकते हैं कि काल कोई वस्तु नहीं फिर उससे बातें करना और उसका बाँधना यह बातें असम्भवादि दोषों से परिपूर्ण नहीं तो केवल इतना है कि सब प्रकारसे शिव का महत्त्व प्रकट और लिंग पूजा का प्रचार बढ़े।

युक्ति विचारो । तब ब्रह्माजी ने वम्री नामक कृमि उत्पन्न करके विचारा कि जो यह धनुषकोटि का भक्षण करे तो जिससे कि हरि उसी पर कंठ धरे हुये शयन करते हैं जाग उठेंगे यह उससे भी कहा तब वह वम्री बोली कि मैं निद्रा भंग न करूंगी क्योंकि लिखा है निद्राभंग, कथा छेद, स्त्री पुरुष की प्रीति में भेद डालना, माता पुत्र को छुड़ा देना यह चार कर्म ब्रह्महत्या के समान हैं फिर जो कोई ऐसा काम करता है वह किसी लालच के कारण करता है सो हमको क्या मिलेगा ? तब ब्रह्माजी ने कहा कि यज्ञ में जो होमकर्म में कुछ अन्यत्र पायसादि पतित होगा वह तुम्हारा भाग होगा, अब जगाने की युक्ति करो । यह सुन उसने धनुष का अग्रभाग भक्षण कर लिया तब तो प्रत्यञ्चा चापसे भिन्न होगई उसके अन्यत्र होते ही ऐसा शब्द हुआ कि जिससे चतुर्दश भुवन क्षोभ को प्राप्त हुये, पृथ्वी कम्पित हो उठी, समुद्र खलबला उठे, सर्वजलजन्तु बहने लगे, प्रचंड-पवन चलने लगी और पर्वत कांपने लगे, अनेक उल्कापात हुये, दिशाओं में अंधकार छागया, सूर्य अस्त होगया, उस समय में यह विदित न हुआ कि उनका शिरकुण्डल सहित कहां चलागया तब सब देवता रुदन करने लगे हा विष्णु अछेद्य अभेद्य थे उनका शिर कृन्तत होगया अब हम लोग बिना आपके कैसे जीवेंगे, इस संसारकी क्या दशा होगी । देवी भा० स्कन्द १ अ० ५ श्लोक ३० में लिखा है ।

एवं चिन्तयतां तेषां मूर्धाविष्णोः सकुंडलः ।
गतः समुकुटः क्वापि देवस्य तापसा ॥३०॥
दृष्ट्वा कबंधंविष्णोस्ते विस्मिताः सुररुत्तमाः ।
चिंतासागरमग्नाश्च रुरुदुः शोककर्षिताः ॥३१॥

जब इस प्रकार वहाँ रुदन होने लगा तब बृहस्पतिजी ने कहा कि अब रोने पीटने से क्या, कोई उपाय करना चाहिये यह सुन इन्द्र बोले कि दैव ही जो चाहता है वह होता है पुरुष को धिक् है जो हम सब के देखते ही देखते शिर कट गया अब क्या करें । जैसा कि शुम्भुजो ने हमारा शिर काट डाला और महादेव का पात हो गया वैसा ही विष्णु का शिर लवण समुद्र में कट के जा गिरा । इन्द्र के अङ्ग में सौ क्षय हो गये यही इन्द्र कमल में छिपे इससे यह ही समझना चाहिये कि संसार में आकर किसको दुःख नहीं होता ।

एते दुःखस्य भोक्तारः केन दुःखं न भुज्यते ।
संसारेऽस्मिन्महाभागास्तस्माच्छोकंत्यजंतु वै ॥४७॥

अब चिन्ता न करो और सर्व जगजननी भगवती का ध्यान करो तो सकल कार्य सिद्ध होंगे इतना कह वेदों को आज्ञा दी जो कि मूर्त्ति को धारण किये आगे खड़े थे कि तुम महामाया, महाविद्या, जगत्माता की स्तुति करो, वेद यह सुन अति विचित्र बड़ी स्तुति करने लगे।

तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य वेदाः सर्वाङ्गसुन्दराः।

तुष्टुवुर्ज्ञानगम्या तां महामायां जगत्स्थिताम् ॥६५॥

अन्त को कहा कि हे देवी! क्या तुम सिन्धुपत्नी से अप्रसन्न हो इनको पतिहीन क्यों देखना चाहती हो अब अपने ही अंश से उत्पन्न हुई लक्ष्मी के अपराध को क्षमा कीजिये और विष्णु को उठाके महालक्ष्मी को हर्षित कीजिये।

सिन्धोः पुत्र्यां रोषिता किं त्वमाद्ये।

कस्मादेनां प्रेक्षसे नाथहीनाम् ॥

क्षन्तव्यस्तेस्वांशजातापराधो।

व्युत्थाप्यैनं मोदितां मां कुरुष्व ॥ ६६ ॥

हे अम्बे! यह हम नहीं जानते कि विष्णु का मस्तक कहां गया और उनके जीने का अन्य उपाय क्या है जिस भांति अमृत जीवन के कर्म में दत्त है वैसे ही जगत् को जीवन देने वाली तुम हो।

मूर्धागतः क्वायहरेर्न विद्मो।

नान्योस्त्युपायः खलु जीवनेऽस्य ॥

यथा सुधाजीवनकर्मदक्षा।

तथा जगज्जीवितदासिदेवि ॥ ६८ ॥

इसके पश्चात् आकाशवाणी हुई कि देवताओ सोच न करो जो इस वेदों के किये हुए स्तोत्र को पढ़ेगा वह सर्ववांछित फल पावेगा।

अब इसका कारण सुनिये जिससे विष्णु का सिर कटा एक दिन की बात है कि लक्ष्मीजी का मुख देखकर हरिजी बहुत हंसे तब लक्ष्मीजी ने जाना कि हमारे मुख में कुछ दोष विचार कर हास्य करते हैं अथवा हमसे उत्तम कहीं स्त्री देखली है इस कारण हंसते हैं नहीं तो न हंसते यह विचार तामसी प्रकृति का आश्रय कर लक्ष्मीजी ने धीरे से कहा कि आपका सिर गिर पड़े। जैसा कि देवी भा० स्क० १ अ० ५।

शनकैः समुवाचेदमिदं पततु ते शिरः ॥८०॥

स्त्री स्वभाव, भावीवश और कालयोग से ऐसा शाप दिया जिससे अपने ही सुख का नाश किया सौत के दुःख को विधवा के दुःख से अधिक समझा।

स्त्रीस्वभावाच्च भावित्वात्कालयोगाद्विनिर्गतः।
अविचार्य तदा दत्तः शापः स्वसुखनाशनः॥

वासुदेव का शिर अभी संयुक्त हो जायगा परन्तु शापयोग से लवण समुद्र में है इसमें एक प्रयोजन और भी है पूर्व समय में हयग्रीव नाम दैत्य सरस्वती के तट पर एकाक्षरी अर्थात् बीजमंत्र को जपता था जब निराहार एक हज़ार वर्ष तप करते हो गये तब उसने हमारी बड़ी स्तुति की तब मैंने कहा क्या अभीष्ट है उसने कहा कि मैं कभी न मरूं योगी होऊं सुरों से मेरी कभी हार न हो तब हमने कहा कि यह कभी नहीं हो सकता क्योंकि जिसका जन्म होता है उसका मरण अवश्य होता अब तुम विचार से वर मांगो तब उसने कहा कि यदि मृत्यु हो तो हयग्रीव से अर्थात् जिसका शिर घोड़े का हो अन्य सर्वांग चाहे जैसा हो यह सुन हमने कहा कि तू अपने घर को जा ऐसा ही होगा यह सुन वह निज गृह को गया हमारी मूर्त्ति अन्तर्द्धान हो गई इससे अश्व का मस्तक काट के त्वष्टा से कहो कि विष्णु के लगा दे।

तस्माच्छीर्षं हयस्यास्य समुद्धृत्य मनोहरम्।
देहेऽत्रविशिरोविष्णोस्त्वष्टासंयोजयिष्यति॥

देवी भा० सं० १ अ० ६ श्लोक १०४

फिर यह किसी यत्न से मर नहीं सकते यह सुन सब देवताओं ने भगवती की स्तुति की और त्वष्टा से कहा कि ऐसा ही करो, तब उन्होंने घोड़े का शिर काट के विष्णु के कन्धे पर जोड़ दिया।

इति श्रुत्वा वचस्तेषां त्वष्टा चातित्वरान्वितः।
वाजिशीर्षं च कर्त्ताशु खड्गेन सुरसन्निधौ ॥१०८॥

विष्णोः शरीरे तेनाऽशु योजितं वाजिमस्तकं ।
हयग्रीवोहरिर्जातो महामायाप्रसादतः ॥ १०९ ॥

बहुत दिनों के पश्चात् जब वह दैत्य अति मद में मस्त हुआ तब भगवान् हयग्रीवजी ने उसको वध किया ।

नोट—क्या विष्णु महाराज सदा सोया ही करते थे ? यदि किसी की निद्राभंग करना पाप है तो उसके भागी ब्रह्मा भी हुए परन्तु ब्रह्मा की बुद्धि तो देखिये कि विष्णु के जगाने का उपाय क्या अच्छा सोचा कैसी असंभव बातों से इसकी रचना की गई कि वम्री नामक कीड़े का उत्पन्न करना और फिर उससे बात होना फिर यह न जाने वह कैसी कल्पित प्रत्यंचा थी कि जिसके कटने से न केवल भुविडोल ही हुआ किन्तु सूर्य तक अस्त होगया परन्तु आश्चर्य यह है कि ऐसी तो प्रत्यंचा और उसका काटने वाला एक कीड़ा ।

(२) जगाया क्या बिचारे विष्णु को मारने ही के पूरे ढंग कर दिये । क्या ब्रह्मा को पहिले से इतना भी ज्ञान न था कि ऐसा करने से विष्णु का शिर भी कट जायगा जो पीछे से रोना पड़ा ।

३—क्या इन्हीं विष्णु को अछेद्य और अभेद्य कहते हैं और इन्हीं का नाम सर्वशक्तिमान् है ?

४—इससे स्पष्ट प्रकट है कि परमात्मा इन सबसे पृथक् है वरन् बृहस्पतिजी यह न कहते कि दैव जो चाहता है वह होता है ।

५—ब्रह्माजी ने वेदों को आज्ञा दी जिन्होंने स्तुति की । पाठकगण, क्या वेद भी शरीरधारी थे जो मूर्त्ति धारण किये स्तुति की ?

६—पतिव्रता स्त्री कभी अपने पति को शाप नहीं देती तिस पर लक्ष्मी सी पतिव्रता स्त्री और विष्णु महाराज से पति जिस पर लक्ष्मी का ऐसा शाप कि तुम्हारा शिर गिर पड़े ।

७—क्या कोई आयुर्वेद का जानने वाला ऐसी असम्भव बात लिख सकता है कि घोड़े का शिर विष्णु के धड़ पर जोड़ दिया ।

ब्रह्मा, विष्णु, शिव का स्त्री होना फिर देवीजी की स्तुति कर यथार्थज्ञान प्राप्त करना।

देवी भागवत स्कंद ३ के अध्याय ३-ब्रह्मांड की उत्पत्ति का प्रश्न है यहां नारदजी स्कन्द २ में कहते हैं कि यही प्रश्न हमने अपने पिता ब्रह्माजी से पूछा था तो उन्होंने कहा कि तुमने विष्णुजी में भी शङ्का की। ये वृत्तरागी कोई नहीं जानते किंतु मत्सर रहित विरक्त ही जानते हैं।

एक समय हमने जल ही जल देखा तो भयभीत हुये कि हम कहां से आये और हमारा रचने वाला कौन है तब हम कमल के देखने को गये १००० वर्ष तक हमको धरती न मिली तब फिर हम कमल पर आ बैठे तब आकाशवाणी हुई कि तप करो फिर ४००० वर्ष तक तप किया फिर शब्द सुनाई दिया कि सृष्टि करो तब हमने सोचा कि कैसे करें इतने में मधुकैटभ दो दैत्यों ने हमको भयभीत किया तब हम कमल के सहारे वहाँ पहुंचे जहाँ महा विष्णु योगनिन्द्रा में तपस्या कर रहे थे तब बड़ी चिन्ता की और भगवती की स्तुति की कि विष्णु महाराज से भगवती निकल कर आकाश में स्थित हुई और विष्णुजी उठे ५००० वर्ष युद्ध करके अपने कोरा में उनके मुण्ड धर के काट डाले। उसी समय महादेवजी भी आये तब हम तीनों ने कहा कि अपनी सृष्टि, पालन, नाश युक्त हो कार्य करो तब हमनें कहा कि सृष्टि कहां होगी न पृथिवी न भूतादि तब देवी आकाश से आह्वान करके उसमें बिठा कर अद्भुत २ पदार्थ दिखाने लगी हमारा विमान ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां से जल दृष्टि नहीं आता था वहाँ नाना भाँति के फल वृक्षों में लगे हुए, पक्षी बोल रहे थे जहां पृथ्वी पर्वत नदी, स्त्री पुरुष आदि सब विद्यमान थे आगे चल कर ब्रह्मलोक में पहुंचे तब हम तीनों से पूंछा कि यह कौन ब्रह्मा है ? हमने कहा कि हम नहीं जानते। वहां भी सकल मूर्त्तिमान् नदी आदि थीं। फिर विमान कैलास पर पहुंचा जहां शिवजी के पाँच मुख, दश भुजा विद्यमान वहाँ सनातन विष्णु को बैठे देखकर बड़े आश्चर्य में हुए फिर विमान आगे को चला तो अमृत का समुद्र देख पड़ा जहां जल जन्तु और अनेक प्रकार के वृक्ष जिन पर पक्षी बोल रहे हैं उसके निकट समुद्र में एक शय्या पर एक अत्युत्तम वनिता बैठी है जो रक्तमाल अरुणवस्त्र लालचन्दन के अतिरिक्त कोटि विद्युद्दीप्त संयुक्त और अनेक लक्ष्मी की शोभा सहित विराजमान है और 'ह्रीं' इस मन्त्र से पद्मीगण उसका जप करते हुए सेवा कर रहे हैं जिसके १००० नेत्रादि हैं। जिसको देख अति

विस्मित हुए तब विष्णुजी ने कहा कि यह आदि माया आदि शक्ति भगवती है, यही सब वस्तुओं के बीज अपने शरीर में रख कर महाप्रलय में क्रीडा करती है प्रलयान्त में हमको वट पत्र पर इसीके दर्शन हुए थे हमारे चरण का अंगूठा इसीने मुख में डाला था।

फिर विष्णु ने कहा चलो स्तुति कर वर मांगो यह विचार, वहां पहुंचे देखते २ स्त्री हो गये तब बड़े विस्मय को प्राप्त हो भगवती के चरणों के निकट आ पहुंचे जिनकी कोटि सहचरी सेवा कर रही हैं वह हमारे जन्म का कमल भी था। इसी भांति १०० वर्ष तक देखते २ उन सब स्त्रियों के मध्य में हम भी स्थित रहे फिर एक दिन विष्णु स्तुति करने लगे और अनेक प्रकार से स्तुति की उसीमें यह भी कहा कि हे देवी महाविद्ये! तुम्हारे चरणों को हम प्रणाम करते हैं सब अर्थ देने वाली और कल्याणरूपिणी जो तुम हो सो हमें सदा के लिये ज्ञान का प्रकाश देवो फिर शिवजी ने बड़ी प्रार्थना की और कहा कि अपना नवाक्षर मन्त्र हमें बतलाइये जिसको जप भवसागर से तरें। तब भगवती ने नवार्णव मन्त्र का उच्चारण किया जिसको ग्रहण कर महादेवजी जपने में लग गये कि महामाये आपको वेद नहीं जानते इसलिये हम अपने को जगत् का कर्त्ता समझते हैं और इसी अहंकार में हम मान रखते थे सो आज यथार्थवादी होकर यह कहते हैं कि तुम्हारी ही कृपा से सब होता है अब तुमसे यही मांगते हैं कि इस वासना को मिटा कर अपनी भक्ति दो जो मनुष्य तुम्हारी प्रभुता को नहीं जानते हैं वे हमको ही प्रभु कहते हैं और जो यज्ञादि करके इन्द्रादि लोक को जाते हैं वह भी तुमको नहीं जानते इस अपराध को क्षमा कीजिये तुम्हारी शक्ति से युक्त हो हम संसार को बनाते हैं विष्णु पालन करते हैं हरि नाश करते हैं इस भांति ब्रह्मा ने स्तुति कर कहा एक ब्रह्म अद्वितीय जो लिखा है सो तुम ही हो इसका उत्तर अपने ही मुख से दो और यह भी बताओ कि स्त्री हो या पुरुष जिससे हम भवसागर से तरें।

विष्णु ने देवी का यज्ञ कर सामर्थ्य प्राप्ति की।

एक समय की बात है कि श्रीहरि ने वैकुंठ में बैठ स्थिति भोग हो सुधा-सागर के मध्यवर्ती मणिद्वीप का स्मरण किया जहां उस महामाया शक्ति भगवती को देखा और अश्वायज्ञ करने का विचार किया वैकुंठ से उतर कर महादेव ब्रह्मा, रुद्र, कुवेर, अग्नि, यम, वसिष्ठ, कश्यप, दक्ष वामदेव, बृहस्पति आदि को बुलाकर बड़ी पुष्कल सामग्री और वेदी से विधि पूर्वक यज्ञ किया अंत में आकाशवाणी हुई कि हे विष्णु तुम सम्पूर्ण देवताओं में श्रेष्ठ हो और सब में मान्य, पूज्यनीय और सामर्थ्यवान् होगे ब्रह्मा, रुद्र आदि सकल देवता तुम्हारी

पूजा करेंगे। मनुष्यों को तुम ही वर दोगे सब यज्ञों में मुख्य पूजा तुम्हारी होगी दानव लोग तुम्हारी शरण आवेंगे जब २ धर्म की ग्लानि होगी तब २ तुम अपने अंश से अवतार ले धर्म की रक्षा करो और सम्पूर्ण भुवनों में विख्यात होगे और प्रत्येक अवतार में वारा ही, नृसिंही आदि एक शक्ति भी आपके संग रहेगी आप उसका खंडन अपमान न करना वरन् पूजन करना जिससे भरत खंड के लोग पूजन करें और वे उन्हें सकल मनोरथ देवे और मनुष्यों के पूजा करने से आपका यश होगा यह कह आकाश वाणी समाप्त हो गई भगवान् ने यज्ञ समाप्त किया और देवताओं को विसर्जन कर आप वैकुंठ को चले गये आकाशवाणी को सुन सब के हृदय में भगवती का स्मरण स्थित हुआ।

श्रीरामचन्द्र ने नवरात्रि व्रत कर रावण को मारा।



देखो देवीभागवत स्कंद ३ अध्याय ३ में लिखा है कि रामचन्द्र उदास बैठे थे वहां नारद आये कहा कि आप सोच क्यों करते हैं रावण के नाश का उपाय यह है कि क्वार मास में विधिपूर्वक नवरात्रि व्रत कीजिये हम करा देंगे सब कार्य सिद्ध होंगे इस व्रत को पूर्वकाल में विष्णु, महादेव, ब्रह्मा, इन्द्र, विश्वामित्र और परशुरामादि ने किया था फिर श्रीराम ने विधि पूछी उसको उन्होंने कहा तब विधिपूर्वक श्रीराम जी और लक्ष्मण जी ने नवरात्रि व्रत किया उस समय भगवती सिंह पर चढ़ गई और दर्शन दे राम से कहा कि मैं आपके व्रत से प्रसन्न हूँ वर मांगिये तुम नारायण अविनाशी हो दश मुख मारने के लिये तुम्हारा अवतार हुआ है वानरों की सहायता लेकर लंका पर चढ़ रावण को मारो यह कह करके देवी चली गई रामचन्द्रजी ने ऐसा ही किया।

नोटः—क्या यज्ञ करने से पूर्व विष्णु में यह सामर्थ्य न थी जो देवी ने प्रसन्न हो उन को प्रदान की उधर शिवपुराण कह रहा कि विष्णु भगवान् ने शिव की उपासनादि करके सर्व प्रकार की सामर्थ्य प्राप्त की। कहिये दोनों में क्या सत्य है?

(१) पद्म पुराण में लिखा है "कि एकादशी व्रत के प्रभाव से" रामचन्द्र ने सेतु बांधा और विजय हुई?

(२) पौराणिकोंका यह आग्रह है कि "अत्र पूर्वं महादेव" इस बाल्मीकीय श्लोकानुसार रामचन्द्र ने महादेव का पूजन किया परन्तु इसमें लिखा है कि रामचन्द्र ने नवरात्रि में दुर्गापूजन किया जिसके प्रभाव से सेतु बाँध विजयी हुये। अब बताइये कि इस में कौन की कथा सत्य है?

श्री विष्णु के कान के मैल से मधुकैटभ का उत्पन्न होना और भगवती की तपस्या कर वर प्राप्त कर विष्णु से लड़ना विष्णुजी का भगवती की स्तुति कर उसका मारना

देवी भागवत स्कंद ७ अ ८ व ६ में जब तीनों लोक एक आवरण में लीन हो गये और जनार्दन भगवान् शेष शय्यापर शयन कर रहे थे कि विष्णु के कर्णों के मैल से मधु-कैटभ दो दैत्य उत्पन्न हुये और बहुत दिनों तक जल में विचरते रहे एक दिन उन्होंने सोचा कि यह जल कहां से आया और किस पर स्थित है हम कौन हैं हमारे माता पिता कौन हैं।

तब कैटभ, मधु से कहने लगा कि यह सर्वशक्ति के आश्रय है उसी पर जल स्थित है यह विचार चिंता करने लगे तब आकाश वाणी हुई उसे उन्होंने ग्रहण करके अभ्यास करना आरंभकर दिया तब आकाशमें बिजुली चमकी उससे उन्होंने मन्त्र विचार किया फिर उन्हें आकाश में सरस्वती की मूर्ति दिखलाई दी तब निराहार होकर उसी में चित्त लगाया। १००० वर्ष तपस्या की तब फिर आकाश वाणी हुई कि हम तुम से प्रसन्न हैं वर माँगो तब उन्होंने कहा कि जब हम कहें तभी हमारा मरण हो। आकाशवाणी हुई कि ऐसा ही होगा देवता और दैत्य तुम्हें न जीत सकेंगे वह बहुत दिनों तक जलजन्तुओं के साथ फिरते २ एक दिन उन्होंने पद्मपर स्थित ब्रह्माजी को देख कर उनसे कहा कि या तो लड़िये वरना निर्बल हो तो आसन को छोड़ चले जाइये क्योंकि यह वीरों के योग्य है तुम डरपोक दीख पड़ते हो ब्रह्माजी ने यह सोचा कि यह बलवान् और मैं तपस्वी हूँ इस लिये उन्होंने जीतने के अर्थ विष्णु जी की स्तुति करना आरम्भ कर दिया बड़ी स्तुति करने पर न जगे तब उन्होंने योगनिद्रा भगवती की बड़ी स्तुति की। हे भगवती, इन दैत्यों का वध कीजिये अथवा विष्णु जी को जगाइये नहीं तो यह हमें मार डालेंगे यह सुन परमकारुणिक योगनिद्रा विष्णु जी के सकल अंगों से विस्तृत होकर ब्रह्माजी के निकट गई और भगवान् जागे वह दर्शन करके आनंदित हुये और बोले कि तुम यहाँ कैसे आये तब उन्होंने कहा कि जो आपके कानों के मैल से मधु कैटभ दो दैत्य उत्पन्न भये हैं वह हमें मारने पर उद्यत हैं उन्होंने कहा चिन्ता मत करो हम उनको मारेंगे दैत्य वहाँ पहुंचे और ब्रह्मा से कहा कि ऐसे छिप कर तुम न बचोगे पहिले तुम्हें मार कर फिर इनको भी मारेंगे तब हरि ने कहा,कि यदि तुम्हारी लड़ने की इच्छा हो तो हमसे लड़ो, युद्ध होने लगा पहिले मधु और उसके थकने पर कैटभ भिड़ा ब्रह्मा और भगवति अन्तरिक्ष में देख रहे थे लड़ते हुये जब ५००० वर्ष बीत गये

तब भगवान् ने विचारा कि यह थकते नहीं और हम थकित से होगये हैं तब वे दोनों दैत्य बोले कि यदि बल न रहा हो तो कह दो कि अब हम तुम्हारे दास हैं नहीं तो युद्ध करो तुम्हें मार कर इन चार मुख वाले को मारेंगे जो यह खड़े हैं तब भगवान् ने कहा कि हमको लड़ते २ अकेले ५००० वर्ष होगये हैं और तुम वारी २ से लड़ते हो इस लिये हम भी सस्ता लें तब वह दूर खड़े होगये तब विष्णु ने सोचा तो मालूम हुआ कि इनको देवी का वरदान है तब उन्होंने भगवती को बड़ी स्तुति की तब भगवती ने कहा कि आप युद्ध करिये हम उन्हें मोहित करती हैं वे आप मृत्यु मांगेंगे अब देर न कीजिये भगवान् युद्ध करने लगे भगवती ने अपना उत्तम रूप धारण कर काम बाण से उनको ऐसा मोहित किया कि वे व्याकुल होगये जब हरि ने यह दशा देखी तब दैत्यों से कहा कि हम तुमसे प्रसन्न हैं वर मांगो वही देंगे क्योंकि ऐसा युद्ध आज तक किसी दैत्य ने नहीं किया तब वह महाअभिमानी भगवती करके मोहित बोले कि हम याचक नहीं हां हम भी आपके युद्ध से प्रसन्न हैं आप वर मांगिये तब हरि ने कहा कि यदि तुम हमसे प्रसन्न हो तो यही वर दो कि तुम हमारे हाथों से मरो यह सुन दानवों ने शोक कर कहा कि हम छले गये और सब तरफ जल को देखकर बोले कि जहां निर्जल देश हो वहां मारिये यही वर देते हैं कि आपके हाथों से मरें यह सुन विष्णु ने सुदर्शनचक्र का स्मरण किया और वह आये तो अपनी जंघा को फैला कर कहा कि देख लो यहां जल नहीं है हमने अपना वचन सत्य किया तुम भी अपना वचन पालो इस पर अपना शिर धरो हम काट डालें यह सुन उन्होंने अपनी देही हज़ार योजन की करली तब विष्णु ने दो हज़ार योजन में अपनी जंघा फैला दी तब उन्होंने जाना कि इस प्रकार से न बचेंगे अपना २ शिर धर दिया उन्होंने चक्र से काट डाला उनके मेद से सकल संसार व्याप्त हो गया और उसीसे पृथिवी बन गई इसी हेतु से इसका नाम मेदिनी हुआ इसी कारण मृत्तिका को कभी खाना न चाहिये और इसी हेतु भगवती सब जगत में वन्दना के हेतु है। यही कथा मत्स्यपुराण अध्याय १६९ में भी लिखी है।

नोट—विष्णु के कान थे या क्या? वैद्यक शास्त्र में तो स्त्री के वामकुक्षि में गर्भाशय की स्थिति लिखी है परन्तु यहाँ की व्यवस्था ही निराली है कि पुरुष रूपी विष्णु के दक्षिण और वाम दोनों कानों में से पुत्रोत्पत्ति हुई, यदि हम थोड़ी देर के लिये इस कथा को मानलें कि विष्णु से पुत्रोत्पत्ति हुई तब यह शंका उत्पन्न होती कि जैसा जिसका कारण होता है वैसा ही उसका कार्य होता है तो विष्णु जैसे सात्विको पुरुष से इन राक्षसों की उत्पत्ति का होना भी आश्चर्यजनक है!

(२) इसके उपरांत मैल में उत्पादन शक्ति नहीं वह एक प्रकार का शारीरिक विष है जिसमें से दोनों कानों के द्वारा दो दैत्य उत्पन्न हो गये और खड़े होकर जल पर क्रीड़ा भी करने लगे परन्तु विष्णु को खबर तक नहीं कि क्या हो रहा है जो उनकी सर्वज्ञता का बाधक है।

(३) अब सुनिये कि बिजुली से मंत्र सीख और आकाश में सरस्वती की मूर्ति को देख तपस्या कर देवी से वर पाकर सबसे पहिले ब्रह्मा ही को सताया और ब्रह्मा ने अपने आपको बलहीन समझ विष्णु की स्तुति की क्या इन्हीं ब्रह्मा ने सृष्टि उत्पत्ति की और यही अंशावतार हैं ?

(४) फिर न केवल ब्रह्मा ही की खबर ली किंतु उन्होंने विष्णु तक को परास्त किया तब विष्णु ने देवी की स्तुति की कृपया इस क्रम को और ईश्वरावतार को विचारपूर्वक मिलाइये तो सार यही निकलता है कि यह सब देवी की महिमा बढ़ाने को कपोलकल्पना रची गई।

(५) इधर तो देवीजी ने उनको वरदान दिया फिर उनको कामबाण से पीड़ित किया क्या यही न्याय है ?

(६) जब दैत्य देवी पर आसक्त होगये तब विष्णु ने कहा कि हम तुमसे प्रसन्न हैं वर मांगो कहिये सनातनी भाइयो यहां दैत्यों ने कौनसा काम वर पाने का किया जिससे विष्णु वर देने लगे यदि वे देवी पर आसक्त होगये इस कारण से विष्णु प्रसन्न होकर वर देने लगे तो बताइये कि यह कौन से मनुष्यों का काम है।

(७) परन्तु हमारी सम्मति में दैत्य विष्णु से बुद्धिमान् थे और कहा भी सच कि वर मांगे जो याचक हो क्योंकि मांगना छोटे का काम है तुमही हमसे वर मांगो जब विष्णु ने अपने आपमें उसके मारने की शक्ति न देखी तो उनको छल से मारने का यत्न किया क्या ऐसे ही विष्णु पृथ्वी का भार उतारने को जन्म लेते हैं ?

(८) कहिये इस बातका कहीं अन्त है कि- ८००० कोस में जांघ फैलादी धन्य है ... ...।

(९) हमारे सनातनी भाई इस पर ध्यान दें कि दैत्यों के मेद से यह मेदिनी नाम वाली पृथ्वी रची गई है जिसके लिये लिखा है कि मृतिका को खाना न

चाहिये अब भी आप पार्थिव पूजा करेंगे और हमारे पौराणिक भाइयों को पृथिवी से उत्पन्न हुई वस्तु भी न खानी चाहिये। क्या इससे पूर्व पृथिवी न थी यदि नहीं तो विष्णु इत्यादि कहां रहते थे और जल किस पर स्थित था ? यदि विचारपूर्वक देखिये तो पुस्तकनिर्माता असम्भवादि दोषों के कारण षट्शास्त्रों से नितान्त विरुद्ध है क्योंकि शास्त्रकार ३ पदार्थों को अनादि मानते हैं ईश्वर, जीव, प्रकृति-परन्तु इनकी विद्याही निराली है कि पृथ्वी दैत्यमेद से बन गई।

श्रीमान् पण्डितजी—अब सेठजी समाप्त कीजिये क्या ऐसी २ और भी कथायें हैं।

आर्य्य सेठ—महाराज अनेकान भरी हैं मैंने तो आपको बहुतही कम सुनाई हैं इसके उपरांत "भविष्यपुराण" में सूर्यनारायण और "गणेशपुराण" में गणेशजी महाराज का बड़प्पन दिखलाया है कहिये श्रीमान् क्या इन कथाओं से तीनों देवा एकही सेवा से प्रसन्न होना प्रकट होता है।

पंडितजी—कदापि नहीं-सत्य तो यह है यह सब कथायें व्यासप्रणीत मालूम नहीं होतीं।

आर्य्य सेठ—जो कुछ आपके विचार में आवे। अब मैं समाप्त करता हूँ। ओ३म् शम्।

श्रीमान् पंडितजी व अन्य सभ्यगणोंने चलने की तय्यारी की

आर्य्यसेठ—श्रीमान् नमस्ते

पंडितजी—आयुष्मान

अन्य सभ्यपुरुषों ने श्रीमान् को यथायोग्य कहा और चल दिये

आर्य्य सेठ—भोजनादि कार्य में लग गये—

इति पञ्चम परिच्छेद:



षष्ठं परिच्छेद ।

आर्य्य सेठ—श्रीमान् को आते देख उठ दोनों हाथ जोड़ नमस्ते कर कहा कि आइये, पधारिये ।

पंडितजी—आयुष्मान् कह विराजमान हुए इतने में अन्य महाशयगण भी आते गये ।

आर्य्य सेठ—ने सबको नमस्ते किया सज्जन महाशयगण यथायोग के पश्चात् विराजमान होते गये ।

आर्य्य सेठ—पंडितजी महाराज आप आर्यों से इस कारण से अप्रसन्न हैं कि वह अजन्मा ईश्वर को जन्म वाला नहीं मानते और न वह ईश्वरावतारों की प्रकृति की बनी हुई प्रतिमाओं का पूजन करते हैं श्रीमान् को सबसे प्रथम यह जानना चाहिये कि जन्म, मरण कर्म से होता है और परमात्मा कर्म करता है या नहीं, यदि कर्म करता है तो उसका जन्म होना सम्भव है वरनह, देखिये—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षम् परिषस्वजाते ।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥

ऋ० मं० १ सू० १६४ मं० १० ॥

(द्वा) दो जीव और ब्रह्म (सुपर्णा) पक्षी हैं (सयुजा) इकट्ठे मिले हुये व्याप्य, व्यापक भाव से संयुक्त (सखाया) परस्पर मित्रतायुक्त सनातन और अनादि हैं (समानम्) एक (वृक्षम्) शरीररूपी वृक्ष पर (परिषस्वजाते) मिले हुये रहते हैं (तयोः) इन दोनों में (अन्य) एक (पिप्पले) अपने किये हुये कर्मरूपी फलों को (स्वादु) स्वादपूर्वक (अत्ति) खाता है (अन्यः) दूसरा ब्रह्म (अनश्नन्) विना खाये (अभिचाकशीति) बड़ाभारी बलवान् है ।

शिवपुराण वायु संहिता अध्याय ४ श्लोक ९४ में लिखा है द्वो सुपर्णं अर्थात् परमात्मा और जीव समान अवस्था में सखा हैं देहरूपी वृक्ष में समानता से स्थित एक जीव इसमें कर्मफल को भोगता है अर्थात् वृक्ष के फल खाता है और दूसरा देखता है । जैसा कि—

द्वौ सुपर्णौ च सयुजौ समानं वृक्षमास्थितौ । एकोऽस्ति पिप्पलं स्वादुपरोऽनश्नन्प्रपश्यति ।

श्रीमद्भागवत स्कन्द ११ अध्याय १० मे श्रीकृष्ण महाराज ने उद्धवजी से कहा है कि आत्मा और परमात्मा यह दोनों पक्षी चैतन्यरूप, शरीररूपी वृक्ष पर बैठे हुये हैं जिसमें एक इस शरीर के फलको भोगता है दूसरा साक्षी होकर देखता है परन्तु भोगता नहीं तो भी ज्ञानशक्तिकर अति बलिष्ट है।

सुपर्णावेतौ सदृशौ सखायौ यदृच्छयैतौ कृतनीडौ वृक्षे।
एकस्तयोः खादति पिप्पलान्नमन्यो निरन्नोऽपि बलेन भूयान् ॥ ६ ॥

अर्थात् परमात्मा कर्म नहीं करता इस कारण फल भी नहीं भोगता फिर अवतार कैसा ? हां जीव कर्म करता है वही भोगता है देखिये यजुर्वेद अ० ४० मं० ४ मे लिखा है कि जो ब्रह्म अद्वितीय, अचल मनके वेग से भी अति वेगवान् सबसे आगे चलता हुआ अर्थात् जहाँ कोई चलकर जावे वहां प्रथम ही सर्वत्र व्याप्ति से पहुंचता हुआ ब्रह्म है इस पूर्वोक्त ईश्वर को चक्षु आदि इन्द्रिय नहीं प्राप्त होते।

वह ब्रह्म अपने आप स्थिर हुआ, अनन्त व्याप्ति से विषयों की ओर गिरते हुये आत्मा के स्वरूप से विलक्षण मन, वाणी आदि इन्द्रियों का उल्लङ्घन कर जाता है। उस सर्वज्ञ व्यापक ईश्वर की स्थिरता मे अन्तरिक्ष से प्राणों का धारण करनेहारा वायु के समान जीव कर्म वा क्रिया को धारण करता है जैसा कि—

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥

ऐसा ही पुराण भी पुकार २ कर कह रहे हैं देवीभागवत स्कन्द ४ अध्याय २ में लिखा है कि इस त्रिगुणयुक्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति कर्मही से होती है जीव का आदि, अन्त, मध्य कुछ नहीं। कर्मरूपी बीज से योनियों में उत्पन्न होता है और मरता है कर्म विना देहसंयोग के कभी नहीं हो सकता। शुभ, अशुभ मिश्रित इन्हीं कर्मों करके जीव बंधा हुआ है, कर्म तीन प्रकार के होते हैं १ संचित २ भविष्य ३ प्रारब्धिक। जो देह में विद्यमान रहते। ब्रह्मादि देव सब कर्म के वश में हैं और सुख, दुःख, कीर्त्ति, मरण, हर्ष, शोक, काम, क्रोध, लोभ यह सब देह के गुण हैं दैवाधीन हैं और रागद्वेषादि भाव स्वर्ग में भी देवता मनुष्य और तिर्यग्योनि के होते हैं चाहे पूर्व के वैरयोग से और चाहे स्नेह के योग से ये विकार देह के साथ ही उत्पन्न होते हैं सब जन्तुओं की उत्पत्ति विना

कर्म नहीं होती कर्मसे ही सूर्य चलता है, चन्द्रमा क्षयीरोग से पीड़ित होता है, महादेव खुपड़ियों की माला पहिनते हैं। इस अनादि निधन संसार का कारण कर्म ही है जिससे यह स्थावर जङ्गम संसार नित्य ही है। इससे इसका बीज कर्म ही है यह जगत् कर्म करके बंधा हुआ भ्रमण कर रहा है और नाना योनियों में विष्णुजी के जन्म होते हैं यदि इच्छा से हों तो नीच योनियों में क्यों होते। कर्महीके वश जीवात्मा गर्भवास में आता है जिसके समान कोई दुःख नहीं। विष्टा, मूत्र का घर जिसमें आंतों से बंधा हुआ जीव रहता है यदि कर्माधीन न होता तो क्यों ऐसे २ दुःख सहता-गर्भवास से परे संसार में अन्य दुःख नहीं। इसी कारण मुनिजन संसारी भोगों को छोड़ योग करते हैं। गर्भ में कृमि काटते हैं, नीचे उदर की अग्नि प्रज्वलित होती है उससे जलता रहता है इस हेतु इस गर्भवास से बन्दीगृह में बेड़ी पहिन कर रहना अच्छा है क्योंकि गर्भवास में क्षण २ कल्प के समान बीतता है प्रथम दश मास तक गर्भवास के दुःख फिर अतिसङ्कीर्ण योनि मार्ग से निकलना फिर बालभाव के अनेक कष्ट, कि न बोल सकते, न अपने कुछ कार्यकर सकते हैं भूख,प्यास कुछ भी नहीं बता सकते तिस पर माता औषधि पिलाती है कहां तक वर्णन करें नाना प्रकार के कष्ट जीव को बाल्यावस्था में होते हैं इससे यह स्पष्ट प्रकट है कि गर्भ में सुख-पूर्वक कोई नहीं आता किंतु कर्म करके प्रेरित हुए सब आते हैं।

पद्मपुराण-षष्ठ उत्तरखंड अध्याय १३२ में लिखा है कि देवता और ऋषि भी कर्मों से बंधे हुए हैं कैलास पर्वत में महादेवजी की देह में स्थित सांप विष का भोजन करते हैं अमृत भोजन करने को असमर्थ हैं क्योंकि कर्म की योनि बड़ी बलवान् है। महादेव ब्रह्मादि देवता मनुष्य और असुर यह सब कर्मों से बंधे हुए पृथ्वी पर घूमते हैं।

रुद्रब्रह्मादयो देवा मानवाश्चासुराश्च ये ॥१२३॥
ते सर्वे कर्मबद्धाश्च विचरंति महीतले।
कर्माधीनं जगत्सर्वं विष्णुना निर्मितं पुरा ॥१२४॥

शिवपुराण ज्ञानसंहिता-अध्याय ३६ में लिखा है यह सारा जगत् कर्म से स्थित है, सब कर्म के बन्धन में पड़े हुए हैं, कर्म से सुख दुःख होते हैं।

सुखं च जायते तेन दुःखं तेनापि संभवेत् ॥३२॥
तस्माच्च पूज्यते कर्म सर्वं च कर्मणिस्थितम् ॥३३॥

पातालखंड अध्याय २६ में लिखा है श्रीरामचन्द्र महाराज ने कहा है कि कर्म से स्वर्ग मिलता है व कर्म से प्राणी नरक को जाता है। कर्म ही से पुत्र पौत्रादिक सब होते हैं। इन्द्र सौ अश्वमेध यज्ञ करके परमपद इन्द्रासन को प्राप्त हुए ब्रह्मा भी कर्म ही से अद्भुत सत्यलोक को प्राप्त हुये। ४५, ४६

कर्मणा प्राप्यते स्वर्गः कर्मणा नरकं व्रजेत्।
कर्मणैव भवेत्सर्वं पुत्रपौत्रादिकं बहु ॥४५॥
शक्रःशतं क्रतूनांतु कृत्वाऽगात्परमं पदम्।
ब्रह्मापि कर्मणालोकं प्राप्य सत्याख्यमद्भुतम् ॥४६॥

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के गणपति खण्ड अध्याय ११ में शनिश्चर ने पार्वती से कहा है कर्म से ही जीवजन्तु होते हैं तथा नरक और स्वर्ग के दुःख सुख को पाते हैं अर्थात् कर्मों के द्वारा ही समस्त कार्य सिद्ध होते हैं।

कर्मणा जायते जन्तुर्ब्रह्मेन्द्रसूर्यमन्दिरे ॥२०॥
कर्मणा नरकं याति वैकुण्ठं याति कर्मणा ॥२१॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द १० पूर्वार्द्ध के अध्याय २४ में कृष्ण महाराज ने कहा है कर्म के प्रभाव से जीव जन्म धारण करते हैं कर्म से ही देह का त्याग होता है सुख, दुःख, कल्याण, भय, क्षेम कर्म से ही प्राप्त होता है ईश्वर कर्मानुकूल पुरुषों को फल देते हैं।

अस्तिचेदीश्वरः कश्चित् फलरूप्यन्यकर्मणाम्।
कर्त्तारं भजते सोपि न ह्यकर्तुः प्रभुर्हि सः ॥१४॥

य० अ० २ मं० २८ में लिखा है कि जो जैसा कर्म करता है वैसा फल पाता है विपरीत कभी नहीं। इसलिये धर्मयुक्त ही कार्य करना चाहिये।

अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मे राधो दमहं य एवास्मि सोस्मि ॥२८॥

वह परमेश्वर कभी माता पिता के संयोग से उत्पन्न नहीं हुआ न होता है न होगा और न वह शरीर धारण करके बालक, तरुण और वृद्ध होता है उसकी प्रतिमा किसी प्रकार की नहीं क्योंकि वह मूर्त्ति अनन्त सीमा रहित सब

में व्यापक है जो तेज वाले सूर्यादि के उत्पन्न का कारण है जैसा य० अ० ३२ मं० ३ में लिखा है।

और अध्याय ४६ मन्त्र ८ में कहा है कि वह परमेश्वर जो सबका जानने वाला और सबके मन का स्वामी सबके ऊपर विराजमान् और अनादिस्वरूप से जो अपनी प्रवाहरूप से अनादिस्वरूप प्रजा को अन्तर्यामिरूप से और वेद के द्वारा सब व्यवहारों का उपदेश किया करता है जो सब में आकाश के तुल्य व्यापक, अत्यन्त पराक्रमी "स्थूल सूक्ष्म, लिंग शरीर से रहित" एवं फोड़ा फुंसी आदि विकारों से तथा नाड़ी, नसों के बन्धन से पृथक् सब दोषों से अलग शुद्ध और सब पापों से रहित है।

सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धम पापविद्धं।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्यथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः

ऐसा पुराणों में भी लिखा है।

देवी भागवत स्कन्द ३ अध्याय ६ श्लोक ७० में लिखा है कि जितने पदार्थ संसार में दृष्टि आते हैं वे सब त्रिगुण युक्त होते हैं निर्गुण तो संसार में न हुआ न होगा निर्गुण एक परमात्मा है जो कभी दृष्टि नहीं आता जैसा कि—

दृश्यं च निर्गुणं लोके न भूतं न भविष्यति।
निर्गुणपरमात्मासौ न तु दृश्यः कदाचन॥

अ० ७ श्लोक ९ में ब्रह्माजी ने कहा है कि निर्गुण का रूप नहीं होता जो दृष्टिगोचर हो सके, जो पदार्थ दीख पड़ता है उसका नाश अवश्य होता है और अरूप दृष्टि में नहीं आता।

निर्गुणस्य मुने रूपं नभवेद्दृष्टिगोचरम्।
दृश्यं च नश्वरं यस्मादरूपं दृश्यते कथम्॥

विष्णुपुराण अंश २ अ० १४ श्लोक २९ में लिखा है कि वह एक सर्व-व्यापक, समान, रूप, शुद्ध, निर्गुण, प्रकृति से परे जन्म वृद्ध मरणादि से रहित हृदय में गत अवयव आत्मा है।

एको व्यापी समः शुद्धो निर्गुणः प्रकृतेः परं।
जन्म वृद्ध्यादि रहित आत्मा सर्वगतोऽव्ययः॥२९॥

श्रीमद्भागवत स्कंद १२ अध्याय ५ में लिखा है कि शरीर सत, रज, तमके कारण उत्पन्न होता है परमात्मा न जन्माता, न मरता है यह स्थूल, सूक्ष्म शरीर से परे स्वयं प्रकाशवान, निर्विकार, अनंत और निरूपम है।

न तत्रात्मा स्वयं ज्योतिर्यो व्यक्ताव्यक्तयोः परः।

आकाशइवचाधारो ध्रुवोऽनन्तोपमस्ततः॥

कूर्मपुराण—उपरिभाग अ० २ पृष्ठ ५५६ में लिखा है कि परमेश्वर रूप रस गंध हाथ पैर आदि से रहित अन्तर्यामी है जो बहुत शीघ्र चलता है जो बिना नेत्रों के देखता है और बिना श्रवण के सुनता है।

अपाणिपादो जवनो गृहीता हृदिसंस्थितः।

अचक्षुरपि पश्यामि तथाकर्णः शृणोम्यहम्॥

लिंगपुराण - अध्याय १ में लिखा है कि वह जन्म मरण आदि से रहित है और सर्वव्यापक है।

प्रधान पुरुषातीतं प्रलयोत्पत्ति वर्जितम्॥२०॥

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण - ब्रह्मखण्ड अ० २ में लिखा है कि वह ईश्वर रोग, बुढ़ापा, मृत्यु, शोक, भयसे रहित है।

आधिव्याधिजरामृत्युशोकभीति विवर्जितम्॥८॥

पद्मपुराण सृष्टि—खंड अ० २ में पुलिस्त्य जी ने कहा है—

परः पराणां परमः परमात्मा पितामहः।

रूपवर्णादिरहितो विशेषण विवर्जितः॥ ८॥

सब परों से परे है इससे परमात्मा कहाता है। वे रूप, वर्णादिकों से रहित हैं वे महतत्वादि से विवर्जित हैं॥ ८४॥

अपक्षयविनाशाभ्यां परिणामर्द्धिजन्मभिः।

गुणोर्विवर्जितः सर्वं समातीतिहि केवलम्॥ ८५॥

वृद्धि विनाश से भी रहित हैं इससे उनका अंत कभी नहीं होता व सत, रज, तम गुणों से भी रहित हैं जो सदा प्रकाशित रहते हैं॥ ८५॥

सर्वत्राऽसौसमश्चापि ब्रसन्नुपमोमतः।
भावयन्ब्रह्मरूपेणविद्धिः परिपठ्यते ॥

सब कहीं सब जड़ों व चैतन्यों में उनकी समान मूर्त्ति रहती है इससे उनकी उपमा किसी के साथ नहीं दे सकते।

तं गुह्यं परमं नित्यमजमक्षयमव्ययम्।
तथा पुरुषरूपेण कालरूपेण संस्थितम् ॥

इसी से इनको ब्रह्मरूप से सब जगत् को भावित करने वाला मुनि लोग कहते हैं वह परम गुह्यरूप सदा नित्यमान, अज, नाशरहित अव्यय व पुरुषरूप, कालरूप से स्थित हैं।

द्वितीयखण्ड अ० ६२ में सुकर्म्माजी ने कहा है गतिहीन, पर सब कहीं चला जाता है उसका कुछ रूप नहीं, पर सर्वत्र दिखलाई देता है। हाथ नहीं परन्तु सब पदार्थों को ग्रहण करता है, पाद नहीं परन्तु अति वेग से दौड़ता है।

गतिहीनो ब्रजत्सोऽपि स हि सर्वत्र दृश्यते।
पाणिहीनोऽपि गृह्णाति पादहीनः प्रधावति ॥

पञ्चम पातालखंड अध्याय ८२ में लिखा है कि वह हस्तपाद से रहित है तो भी सब कुछ करता है व सब कहीं चला जाता है व सब स्थावरजंगमविश्व को ग्रहण करता है। हे महीपाल ! मुख, नासा से विहीन, पर खाता व सूंघता। कान नहीं पर सुनता सब कुछ है व वह जगत्पति सबों का साक्षी है। संस्कृत अ० ८४ ॥

हस्तपादविहीनश्च सर्वत्र परिगच्छति।
सर्वं गृह्णाति त्रैलोक्यं स्थावरं जंगमं पुनः ॥ ८९ ॥
नासा मुखविहीनस्तु घ्राति भक्षति कुरुते।
अकर्णः शृणु ते सर्वं सर्वसाक्षी जगत्पति ॥ ९० ॥

वायुपुराण अध्याय ४ श्लोक १८ में कहा है कि परमात्मा गन्ध, वर्ण, रस रहित है शब्द, स्पर्श से पृथक् है। कभी उत्पन्न और नाश नहीं होता वह स्वयं ही स्थित है।

गन्धवर्णरसैर्हीनं शब्दस्पर्शविवर्जितम्।

अजातं अमृतमक्षय्यं नित्यं स्वात्मन्यवस्थितम् ॥ १८ ॥

शिवपुराण—वायुसंहिता अध्याय ४ में लिखा है कि परमात्मा के सब ओर हस्त, चरण, नेत्र, मुख, शिर हैं और सब ओर इन्हीं के कारण हैं यह सबको आवरण करके स्थित हैं बिना नेत्र के देखते बिना कान के सुनते हैं जो सबको जानते और जिनका जानने वाला कोई नहीं उसी को पुराणपुरुष कहते हैं यह 'सूक्ष्म से सूक्ष्म' महान् से महान और अविनाशी वही परमेश्वर इस प्राणी के हृदय में स्थित है। ८५-८६-८७

सर्वत्र पाणिपादोऽयं सर्व्वतोऽक्षि शिरोमुखः ।
सर्व्वतः श्रुतिमांल्लोके सर्व्वमावृत्य तिष्ठति ॥ ८६ ॥
अचक्षुरपि यः पश्यत्यकर्णोऽपि शृणोति यः ।
सर्व्वं वेत्ति न वेत्तास्य तमाहुः पुरुषं परम् ॥ ८७ ॥

महाभारत शान्तिपर्व में लिखा है कि मोक्ष का देने वाला परमात्मा न ठण्डा है, न गर्म, न कोमल है, न कठोर, न खट्टा है, न कसैला, न मीठा है, न तीखा, न वह शब्दयुक्त न गन्धविशिष्ट है वह इन्द्रियरहित है उसके स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर भी नहीं। वह सूक्ष्म से सूक्ष्म महत् से महत् है उसमें ही सब भूत लीन हुआ करते हैं। वह सदा निश्चल भाव से निवास करता है तौभी वह किसी के दृष्टिगोचर नहीं होता इसी प्रकार इन पुराणों में अनेकान लेख हैं उनको हम विस्तारभय से नहीं लिखते। इसके उपरांत जिस ईश्वर की आज्ञानुसार सूर्य्य, चांद, पृथ्वी, तारे, पशु और पक्षी अग्नि, वायु, जल आदि सब अपना २ कार्य कर रहे हैं, जिसकी आज्ञा पहाड़ों की कंदराओं और समुद्र की तहों में यथावत् पालन हो रही है जिसके ब्रह्माण्ड की रचना को देख पूर्ण तत्ववेत्ताओं के छक्के छूट जाते हैं उसकी अपार महिमा का आज तक मुनिजनों ने भी पार नहीं पाया, जिसके गुणों का कीर्त्तन महात्माजन न कर सके उसके भेद योगिराजों ने भी अच्छे प्रकार न पाये। जिसने वनों में शेर, हाथी को उत्पन्न किया, जंगल में नाना प्रकार के वृक्षों और घासों को उगाया पृथ्वी पर अद्भुत और अपूर्व पहाड़ और समुद्रों को रचा जिसके न्याय प्रताप से बड़े २ राजे, महाराजे, बली, पहलवान, ऋषि, मुनि, महात्मा, डाकू और तस्कर सब ही अपनी २ करनी के फलों को भोगते चले जाते हैं अर्थात् चींटी से लेकर छोटे रेंगने वाले जीव और आकाश में उड़ने और पाताल में रहने वाले पक्षी पखेरू जीव जन्तु इत्यादि सब उसकी आज्ञा शिर माथे धर पालन कर रहे हैं तो फिर

ऐसा कौन है जो इसकी आज्ञा के विरुद्ध कार्य कर दंड का भागी न हो कैसे शोक और महान् शोक की बात है कि ऐसा परमेश्वर रावण और कंस इत्यादि दुष्टों को बिना गर्भ में आये और राम, कृष्ण आदि का स्वरूप धारण किये बिना दण्ड न दे सके, तो क्या उपरोक्त सब पुराणों के लेख जो वेदानुकूल हैं सब मिथ्या हैं इसके उपरान्त पंडित जी जिन विष्णु महाराज को आप परमेश्वर कहते हैं और उन्हीं के अवतार श्रीकृष्ण और रामचन्द्र बतलाते हैं वह स्वयं देवी भागवत स्कन्द ४ अध्याय १८ में कहते हैं कि न मैं स्वतन्त्र हूं, न ब्रह्मा और न शिव इसी प्रकार इन्द्र, अग्नि, यम, त्वष्टा, सूर्य और वरुण भी स्वतन्त्र नहीं हैं। यह सब स्थावर जङ्गम जगत् योगमाया के वश है। ज़रा बुद्धि से विचारो जो मैं स्वतन्त्र होता तो महासमुद्र में मछली कच्छुआ क्यों होता, तिर्यग्योनि में क्या लाभ, क्या भोग और क्या कीर्ति है क्या सुख जीवयोनि को प्राप्त हुआ जो मैं हूं तो मुझे इसमें क्या पुण्य है, क्या फल है, अर्थात् कुछ नहीं, वाराह व नरसिंह व वामन क्यों होता। अय ब्रह्मा जी! मैं जमदग्नि का बेटा परशुराम क्यों होता। अय! देवेन्द्र! राम होकर दण्डक वन में पैदल गुदड़ी वाली जटाजूट और वल्कल धारण कर मैंने प्रवेश किया इसी प्रकार रामावतार में भी मैंने निरन्तर दुःख पाया क्योंकि मैं निश्चय पराधीन हूं फिर और कौन स्वतन्त्र होगा। ब्रह्मा जी सुनो मैं निश्चय परतन्त्र हूँ इसी भाँति तुम भी और महादेव और सब देवता हैं जैसा कि—

नाहं स्वतन्त्र एवात्र न ब्रह्मा न शिवस्तथा।
नेन्द्रोऽग्निर्यमस्त्वष्टा न सूर्यो वरुणस्तथा ॥ ३३ ॥
परतन्त्रोऽस्म्यहं नूनं पद्मयोने निशामय।
तथा त्वमपि रुद्रश्च सर्वे चान्ये सुरोत्तमाः ॥ ६० ॥

स्कन्द ३ अध्याय २८ में रामचन्द्र महाराज लक्ष्मण जी से कहते हैं कि बिना जानकी के हमारा जीना दुर्लभ है देखो राज गया, वन हुआ, पिता मरे, स्त्री हरी गई, देखिये दुष्ट भाग्य क्या २ करता है। रघुकुल में हमारे समान कोई भी दु:खी नहीं हुआ क्या करें इस दुःखसागर से तरने का कोई उपाय नहीं।

न प्राप्ता जानकी नूनं नाहं जीवामि तां विना।
नगमिष्याम्ययोध्यायामृते जनकनंदिनीम् ॥ २१ ॥

गतं राज्यं वने वासो मृतस्तातो हृताप्रिया ।
पीडयन्मां स दुष्टात्मा दैवोग्रे किं करिष्यति २२ ॥
न कोऽप्यस्मत्कुलेपूर्वमत्समोदुःखभाङ्नरः ।
अकिञ्चनोऽहमःक्लिष्टो न भूतो न भविष्यति ॥२६॥
किं करोम्यद्यसौमित्रे मग्नोऽस्मि दुःखसागरे ।
न चास्ति तरणोपायो ह्यसहायस्य मे किल ॥२७॥

इसके उपरांत श्रीमद्भागवत स्कंद १० उत्तरार्द्ध अध्याय ७० से प्रकट होता है श्रीकृष्ण महाराज स्वयं तीन सूर्य्य उदय से दो तीन घड़ी प्रथम उठकर जल से आचमन कर माया से परे जो स्वरूप है उसका ध्यान करते थे ।

ब्राह्मे मुहूर्त उत्थाय वायुस्पृश्य माधवः ।
दध्यौ प्रसन्नकरण आत्मानं तमसः परम् ॥

इसी प्रकार श्रीरामचन्द्र महाराज प्रातः सायंकाल संध्या समय परमेश्वर का ध्यान करते थे । देखो वाल्मीकि रामायण बालकांड सर्ग ३५ श्लोक २० तथा अयोध्याकांड सर्ग ४५ श्लोक १३ में लिखा है ।

सु प्रभाता निशा राम पूर्वा संध्यां प्रवर्त्तते ।
उत्तिष्ठो तिष्ठ भद्रंते गमनायभिरोचय ॥
उपास्य तु शिवां संध्यां दृष्ट्वा रात्रिमुपागताम् ।
रामस्य शयनं चक्रे सूतः सौमित्रिणा सह ॥

पद्मपुराण पाताल खंड अध्याय ११४ में लिखा है कि शंकरादि सब देव महर्षि लोग संध्यावन्दन करने की इच्छा से बाहर निकले व महेशादि सब लोगों ने तड़ागपर संध्यावंदन किया । भाषा अ० ११ ॥

संध्यावंदनकामाश्च सर्वं एवविनिर्गताः ।
कृतं संध्यास्तड़ाके तु महेशाद्यास्तु कृत्स्नशः ॥४३॥

अब श्रीमान् को विचारना योग्य है जिन पुराणोंके बल पर पौराणिक भ ई "रसे" वर का अवतार मानते हैं उन्हीं पुराणोंसे मैं आपको वेदानुकूल यह बतला चुका हूं कि परमेश्वर सर्वज्ञ है जो विना इन्द्रियों के सब कार्य्य करता है इसके उपरांत स्वयं आपके विष्णु और श्रीरामचन्द्रजी अपने को परतंत्र बत-

लाते हैं तदनंतर सनातनधर्म सभा के माने हुये परमात्मा के अवतार श्रीकृष्ण और रामचन्द्र महाराज भी माया से परे जो परमात्मा है उसका ध्यान धरते थे इससे भी स्पष्ट प्रकट होता है जिसका उपरोक्त महाशयगण ध्यान करते थे वही पूर्ण ब्रह्म परमात्मा है इस लिये हम सबको भी उसी ईश्वर की उपासना करनी चाहिये क्योंकि परमेश्वर य० अ० १२ मं० १११ में आज्ञा देते हैं कि जो सत्पुरुष होचुके हैं उनका ही अनुकरण करना चाहिए अन्य अधर्मियों का नहीं जैसाकि—

ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निꣳसुम्नाय दधिरे पुरोजनाः।

श्रुत् कर्णꣳसप्रथस्तमं त्वागिरा दैव्यंमानुषा युगा ॥१११॥

ऐसा ही गीता, महाभारत आदि में भी लेख है फिर हम क्यों ईश्वर अवतारों की पूजा करें जबकि ईश्वर अवतार ही नहीं लेता। फिर प्रतिमा पूजा कैसी इन सब बातों के उपराँत जिन पुराणों में प्रकृति की मनुष्यरचित मूर्तियों की पूजा का विधान किया है उन्हीं में मूर्तिपूजकों की निन्दा की है सुनिये श्रीमद्भागवत स्कंध १० उत्तरार्द्ध अ० ८४ में लिखा है।

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः। यत्तीर्थबुद्धिः सलिलेन कर्हिचित्, जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः॥

अर्थात् जो धातु आदि में आत्म बुद्धि करते हैं और नदी, पहाड़, आदि स्थानों में तीर्थबुद्धि और स्त्री पुत्रादि में ममता रखते हैं वह मनुष्यों के बीच में गधे वा बैल हैं। महाभारत में लिखा है कि:—

तीर्थेषु पशुयज्ञेषु काष्ठपाषाणमृण्मये

प्रतिमादौ मनोयेषां ते नरा मूढचेतसा।

तीर्थ और पशुओं के यज्ञ, काष्ठ, पाषाण, मिट्टी की प्रतिमा अर्थात् तसवीरों में जिनका मन है वह मनुष्य मूर्ख हैं। और भी कहा है

मृच्छिला धातुदार्वादि मूर्त्तावीश्वर बुद्धयः।

क्लिश्यन्ति तपसा मूढाः परां शांति न यान्ति ते ॥

जो मनुष्य सर्वव्यापक परमात्मा न्यायकारी की धातु, पत्थर, लोहा, पीतल, चांदी, सोना किसीभाँति कीमूर्त्तिबनाते हैं वह अज्ञानी हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में लिखा है।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ।

परं भावमजानन्तो ममाव्यक्तमनुत्तमम् ॥

अवजानंति मां मूढनुषंतनु मामाश्रितम् ।

परंभावमजानन्तो ममभूत महेश्वरम् ॥

मूर्खजन मनुष्य की देह धारण करने वाला और उत्पन्न हुआ परमेश्वर को जानते हैं उसके परम्भाव को नहीं जानते कि सबका महेश्वर अर्थात् स्वामी है। सर्वव्यापक होनेसे एक स्थानपर मूर्त्तिमान् नहीं हो सकता। इसके उपरांत अध्यात्म रामायण रामगीता में लिखा है —

कदाचितात्मा न मृतो न जायते न क्षीयते नापि विवर्द्धते क्वचित् निरस्त सर्वातिशयः सुखात्मकःस्वयंप्रभुः सर्वगतोऽव्ययः ॥

हे लक्ष्मण ! वह ईश्वर न कभी मरता है न उत्पन्न होता है न उसका नाश होता है न कभी बढ़ता है॥ किंतु निरन्तर सबसे बड़ा, सुखात्मक, स्वयंप्रभु तथा सबके अन्दर व्याप्त है उससे दूसरा नहीं.

जन्मापवादं द्रोहं च तथा मिथ्यावभाषणम् ।

कामं क्रोधं तथा चौर्यं परदाराभिमर्षणम् ॥

वीभत्सं मरणं क्षोभम् दुष्क्रिया विविधा कलौ ।

पाषण्डिनो विधास्यन्ति विशुद्धे परमात्मनि ।

कलियुग के पाखण्डी लोग शुद्ध परमात्मा में ऐसे २ दोष लगावेंगे, कि परमात्मा ने जन्मधारण किया निन्दा की, द्रोह किया, झूठ बोला, काम, क्रोध तथा चोरी की, परदाराओं के साथ प्रीति, भय, मृत्यु इत्यादि २ नाना प्रकार की दुष्क्रियाएं कीं।

अतः मान्य जब पुराण वेदानुकूल वर्णन कर रहे हैं फिर आप अन्य वेद-विरुद्ध पुराणों के लेखों को क्यों मानते हैं इसके उपरान्त वह स्पष्ट कह रहे हैं कि परमात्मा का पूर्णज्ञान स्वाध्याय और योगाभ्यास रूपी दो नेत्रों से हो सकता है अन्य नेत्रों से वह दिखलाई नहीं देता जैसा कि विष्णु पुराण अंश ६ अ० ६ में लिखा है।

तदीक्षणाय स्वाध्यायश्चक्षुर्योगस्तथापर ।

न मांसचक्षुषा द्रष्टुं ब्रह्मभूतः स शक्यते ॥ ३ ॥

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण ब्रह्मखण्ड अ० २ में लिखा है कि योगी लोग योग से तथा ज्ञानचक्षु से उस परमात्मा का ध्यान करते हैं।

"ध्यान्ते योगिनः शश्वद् योगेन ज्ञानचक्षुषा।"

शिवपुराण वायु संहिता अध्याय ४ में लिखा है कि वह परमेश्वर सबमें है और सबको व्याप्त कर स्थित हो रहा है तथापि कोई पुरुष उसको प्रत्यक्ष नहीं देख सकता।

सर्व्वं तत्र सर्व्वत्र व्याप्यतिष्ठति शाश्वतः।
तथापि क्वापि केनापि व्यक्तमेष न दृश्यते ॥ ४६ ॥

नेत्र अथवा दूसरी इन्द्रियों से कोई इसे ग्रहण नहीं कर सकता केवल उसको योगाभ्यास के द्वारा मन को शोध कर महात्मा जन ही जानते हैं।

नैवायं चक्षुषा ग्राह्यो ना परैरिन्द्रियैरपि।
मनसैव प्रदीप्तेन महानात्मा वसीयते ॥ ४७ ॥

जिस प्रकार तिलों में तेल, दही में घृत, स्रोत में जल, अग्नि में सुवर्ण रहता है उसी भांति आत्मा में आत्मा विलक्षण रूप से स्थित है जो सत्य और तपयुक्त होने से दीखता है जैसा कि—

तिलेषु वा यथा तैलं दध्निर्वा सर्पिरर्पितम्।
यथापः स्रोतसिव्याप्ता यथारण्यां हुताशनः ॥ ७४ ॥
एवमेव महात्मानमात्मन्यात्म विलक्षणम्।
सत्येन तपसा चैव नित्ययुक्तोऽनुपश्यति ॥ ७५ ॥

यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ४ में कहा है कि ब्रह्म के अनन्त होने से जहाँ २ मन जाता है वहां २ प्रथम से ही अभिव्याप्त ब्रह्म वर्त्तमान है उसका विज्ञान शुद्ध मन से होता है चक्षु आदि इन्द्रियों और अविद्वानों से देखने योग्य नहीं है वह आप निश्चल हुआ सब जीवों को नियम से चलाता और धारण करता है उसके अति सूक्ष्म इन्द्रिय गम्य न होने के कारण धर्मात्मा विद्वान योगी को ही उसका ज्ञान होता है अन्य को नहीं।

अनेजदेकंमनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत्। तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥

और अध्याय ३४ मंत्र ४३ में कहा है कि जो मनुष्य योगाभ्यास से सत्कर्मों करके शुद्ध मन और आत्मा वाले धार्मिक पुरुषार्थी हैं वे ही व्यापक परमेश्वर के स्वरूप को जानते और उसको प्राप्त होने योग्य होते हैं।

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते । विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥

महाभारत शांतिपर्व २३८ में कहा है कि मन को निग्रह करने वाले ब्राह्मण के द्वारा बुद्धि से आत्मा को देखते हैं।

मनीषी मनसा विप्रः पश्यत्यात्मानमात्मनि ॥ १५ ॥

इस आत्मा को नेत्र से नहीं देखा जाता सब इन्द्रियों से भी देखने की सामर्थ्य नहीं। महान् आत्मा मानसप्रदीप के द्वारा प्रकाशमान होता है।

नह्ययं चक्षुषा दृश्यो न च सर्वैरपीन्द्रियैः ।

मनसा तु प्रदीपेन महानात्मा प्रकाशते ॥ १६ ॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द १० पूर्वार्द्ध अध्याय २८ में और उत्तरार्द्ध में लिखा है कि ईश्वर बाधारहित, ज्ञानस्वरूप, अनन्त है जो देखने में नहीं आता, स्वयं प्रकाश है जिसको पूर्णयोगी ही देखते हैं।

सत्यंज्ञान मनंतं यद् ब्रह्म ज्योतिः सनातनम् ।

यद्धि पश्यंति मुनयो गुणापाये समाहिताः ॥ १५ ॥

पद्मपुराण पंचम पातालखण्ड अध्याय ८२ में लिखा है मुनीन्द्र लोग ज्ञान से युक्त परमार्थ में परायण उस सर्व्वज्ञ, सर्व्वदर्शक को देखते हैं। संस्कृत अध्याय ॥ ८४ ॥

केवलज्ञानरूपेण दृश्यते पर चक्षुषा । ८७ ॥

योगयुक्ता महात्मानः परमार्थपरायणाः ॥

यं न पश्यन्ति लुब्धास्तु सर्वज्ञं सर्वदर्शकम् ॥ ८८ ॥

महाभारत शान्तिपर्व अध्याय २०२ में लिखा है कि जो मनुष्य रसों से जिह्वा, गन्ध से नासिका, शब्द से कान, स्पर्श से त्वचा और रूप से नेत्र को निवृत्त करता है वह परमात्मा के दर्शन करने के योग्य होता है।

निवर्तयित्वा रसनां रसेभ्यो घ्राणञ्च गन्धाच्छ्रवणौ च शब्दात् ।

स्पर्शात्त्वचं रूपगुणात्तु चक्षुस्ततः परं पश्यति स्वं स्वभावम् ॥ ५ ॥

और इसी पर्वके अध्याय २३६ में कहा है कि जब मन सहित पञ्चइन्द्रिय बुद्धि में स्थित होकर संकल्प को त्याग कर देती है तब उस निर्मल अन्तःकरण में ब्रह्म प्रकाशित होता है।

पञ्चेन्द्रियाणि सन्धाय मनसि स्थापयेद्यतिः ।
प्रसीदन्ति च संस्थाय तदा ब्रह्मप्रकाशते ॥१६॥

यजुर्वेद अध्याय २० मन्त्र २७ में कहा है कि जब ध्यानावस्थित मनुष्य के मन के साथ इन्द्रियां और प्राणायाम ब्रह्म में स्थिर होते हैं तब ही वह नित्य-आनन्द को प्राप्त होता है।

अंशुं शुनात अंशुः शुः पुच्यतां परूंपापरुः । गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽअच्युतः ॥

इसलिये विद्वान् पुरुषों को योग्य है कि सदा सृष्टिकर्त्ता ईश्वर का हृदय रूपी अवकाश में ध्यान, पूजन करते रहें, जैसा कि यजुर्वेद अध्याय ३१ मंत्र ६ में कहा है।

तंयज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥

जब मनुष्य उपरोक्त रीति से ईश्वर की उपासना करते हैं वे सुन्दर जीवन आदिके सुखों को भोगते हैं क्योंकि कोई भी मनुष्य ईश्वर के आश्रय के बिना पूर्ण बल और पराक्रम को प्राप्त नहीं होता जैसाकि यजुर्वेद अध्याय १० मंत्र २५ में कहा है।

इयदस्यायुरस्यायुर्मयि धेहि युङ्ङसि वर्चोऽसिवर्चो मयि धेह्यूर्गस्यूर्ज्जम्मयि धेहि । इन्द्रस्यवावीर्य कृतो बाहूयअभ्यावहरामि।

श्री मद्भागवत स्कंद १२ अध्याय ४ में लिखा है कि जिस प्रकार अग्नि में सुवर्ण स्थित होकर अपने मल को दूर करता है उसी भांति विष्णुभगवान योगिराजों के हृदय में स्थित होकर अशुभ वासनाओं को दूर करते हैं।

यथा हेम्नि स्थितो वह्निर्दुवर्ण हंति धातुजम् ।
एवमात्मगतो विष्णुर्योगिनामशुभाशयम् ॥४७॥

शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय ४ में कहा है जो परमात्मा को हृदय में स्थित जानता है वह प्राणी अमृत होजाता है। १०२।

हृदये सन्निविष्टं तेज्ञात्वैवामृतमश्नुते।

श्रीमान् योग के द्वारा उपासना को पुराण भी स्वीकार करते हैं परन्तु वह इस प्रकार की उपासना को ज्ञानियों के लिये करते हैं और अज्ञानियों के लिये मूर्त्तिपूजा लाभदायक बतलाते हैं जैसा कि शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय २६ श्लोक २५ व २६ में लिखा है कि वेदार्थकतत्व के जानने वाले कहते हैं कि ईश्वर सबके हृदय में विराजमान है जिन पुरुषों को ऐसा ज्ञान है उनको प्रतिमा पूजन से क्या। हां जिनको ज्ञान, विज्ञान नहीं है उनका प्रतिमा पूजन महापुण्य दायक है।

एवमाहुस्तदा चान्ये सर्वे वेदार्थतत्वगाः।

हृदि संसारिणं साक्षात्सकलः परमेश्वरः ॥२५॥

इति विज्ञानयुक्तस्य किं तस्य प्रतिमादिभिः।

इति विज्ञानहीनस्य प्रतिमाकल्पनाशुभा ॥२६॥

परन्तु हम प्रथम पुराणों से यह दिखला चुके हैं कि परमेश्वर ज्ञान के नेत्रों से जाना जाता है तो क्या अज्ञानियों को पाषाणपूजन से ज्ञान की प्राप्ति होजाती है कदापि नहीं, कदापि नहीं २ हाँ अब इस स्थान पर यह विचार करना अभीष्ट है कि वह कौनसी मूर्त्ति वा प्रतिमा है जिसकी पूजा से अज्ञानियों को ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है इसके जानने के लिये जब हम परमेश्वर रचित सृष्टि को देखते हैं तो प्रत्यक्ष होता है कि जगत्पिता ने दो प्रकार की मूर्त्तियों को बनाया है एक जड़ जैसे सूर्य्य, चाँद, पृथिवी सितारे। दूसरे चैतन्य जैसे मनुष्य, पशु, पक्षी, जीव, जन्तु इत्यादि इन दोनों प्रकार की मूर्त्तियों में मनुष्य को श्रेष्ठ माना है और मनुष्यों में ज्ञानी महात्मा की मूर्त्ति सर्वोपरि है, इसलिये संसार में ज्ञानीपुरुष की प्रतिमा ऐसी है जो अज्ञानियों को ज्ञानी बना सकती है बकि जड़मूर्त्ति जो स्वयं ही ज्ञान से शून्य और इन्द्रियों से रहित है। इसके उपराँत ज्ञानी पुरुष की मूर्त्ति को परमात्मा ने बनाया है और प्रकृति की प्रतिमा को मनुष्य ने गढ़ा है जिस पर धर्मसभा यह भी करती है कि पंडित जन मन्त्रों को पढ़ उस प्रकृतिकी मूर्त्ति में परमेश्वर का आह्वान करते हैं परन्तु ज्ञानियों के हृदय में वह मन्त्र सदा विद्यमान रहते हैं तदनन्तर प्रकृति मूर्त्ति की रक्षा चैतन्य पुरुष करता है यहां तक वही उठाता, बिठाता और बनवाता है तिसपर भी

वह कुछ नहीं करती परन्तु परमात्मा रचित मनुष्यरूपी मूर्ति स्वयं सब कार्यों को करती है देखिये ईश्वररचित गाय कैसी चलती फिरती और उत्तम दूध देती है क्या कुम्हार की बनाई हुई गाय वैसा ही कार्य्य करती है कदापि नहीं इस लिये माता, पिता, गुरु, अतिथि इत्यादि की मूर्तियाँ जिनके सत्संग से मनुष्य शरीर का लालन, पालन, सत्यविद्या और सत्योपदेशकी प्राप्ति होती है जो परमेश्वर प्राप्ति की सीढ़ियां हैं। अतएव ज्ञान की प्राप्ति के लिये परमेश्वर रचित उपरोक्त मूर्त्तियों की सेवा टहल करना चाहिये जैसा पहिले समय में होता था स्वार्थी जनों ने अपने स्वार्थसिद्धि के लिये प्रकृतिपूजा की ओर झुका दिया देखिये। इन चैतन्य मूर्त्तियों के विषय में श्रीमद्भागवत स्कंद ६ अध्याय ७ में लिखा है कि आचार्य ब्रह्म की, पिता प्रजापति की, भ्राता मरुत्पतिकी, माता साक्षात् पृथ्वी की, दया बहन की धर्म की अतिथि, अग्नि की अभ्यागत और सब भूतों में आत्मा समझना अपनी मूर्ति को मानना हैं जैसाकि

आचार्यो ब्रह्मणो मूर्त्तिः पितामूर्त्तिः प्रजापतेः।
भ्रातामरुत्पतेर्मूर्ति माता साक्षात् क्षितेस्तनुः॥ ३०॥
दयाया भगिनीमूर्त्तिर्धर्मस्यात्माऽतिथिः स्वयम्।
अग्नेरभ्यागतोमूर्त्तिः सर्वभूतानि चात्मनः॥ ३१॥

महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय ७ में कहा है कि जिन कर्मों से पिता को प्रसन्न किया जाता है उसी के द्वारा माता को प्रसन्न किया जाता उस ही के सहारे पृथ्वी पूजित होती है। जिन कर्मों से गुरु प्रीतियुक्त किया जाता है उससे ही ब्रह्मपूजित होता है। इस हेतु वनपर्व अध्याय ५० में कहा है कि जो मनुष्य माता, पिता, अग्नि, गुरु और अपनी आत्मा की पूजा करते हैं उनके दोनों लोक सुधर जाते हैं।

शान्तिपर्व अध्याय १०८ में भीष्म जी ने कहा है कि पिता, माता और गुरु ये तीनों त्रिलोक स्वरूप हैं ये ही तीनों आश्रम, तीनों वेद और अग्निस्वरूप हैं।

एत एव त्रयोलोका एत एवाश्रमास्त्रयः।
एत एव त्रयोवेदा एतएव त्रयोग्नयः॥ ६॥

अनुशासनपर्व अध्याय ६ में लिखा है—कि पिता, माता और गुरु ये तीनों ही जिससे आदरयुक्त होते हैं उसके सब धर्म पूर्ण होजाते हैं और

जहाँ इनका निरादर होता है वहां सब क्रिया निष्फल होजाती हैं। और अध्याय ७५ में लिखा है कि जो लोग पिता, माता, भ्राता, गुरु और आचार्य की पितृवत् सेवा करते हैं उनको स्वर्ग में सुख मिलता है।

वामनपुराण—अध्याय ४० में लिखा है कि जो आचार्य, माता पिता से द्वेष करते हैं और वृद्धों का मान नहीं करते वह सब राक्षस हैं।

पद्मपुराण—द्वितीय भूमिखण्ड अध्याय ६३ में लिखा है कि जो माता, पिता, गुरु की सेवा नहीं करते वह पृथ्वी पर प्रेत हैं। इसलिये वेदादि सर्व शास्त्रों का अटल सिद्धान्त है कि उपरोक्त मूर्तिमान् देवों की पूजा करने से देवों के देव महादेव जाने जाते हैं और विशेषकर गुरु सेवा करने से।

श्रीमद्भागवत—पञ्चमस्कन्द के पाँचवें अध्याय में लिखा है कि वह गुरु नहीं जो मृत्यु से बचने का उपाय न बतावे। मृत्यु के क्लेश आत्मिक ज्ञान विना दूर नहीं हो सकते इसलिये आत्मिकज्ञान के लिये गुरु करना चाहिये। पद्मपुराण तृतीय स्वर्ग खण्ड अध्याय ५२ में लिखा है कि ज्ञान का कारण गुरु है इसलिये गुरु से परे कोई विचित्र भूषण नहीं "लिङ्गपुराण" अध्याय ८६ श्लोक १०१ में कहा है कि गुरु की कृपा से ही निर्मलज्ञान की प्राप्ति होती है। विष्णुपुराण में कहा है कि गुरु के उपदेश विना ज्ञान और ज्ञान विना मोक्ष नहीं होती। "यजुर्वेद" अध्याय ३ मन्त्र ५५ में लिखा है कि विद्वान् माता, पिता, आचार्य की शिक्षा के विना मनुष्यों का जन्म सुफल नहीं होता।

पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः। जीवं व्रातꣳसचे महि॥

इसी हेतु प्राचीन समय में सन्तानें विद्या और ज्ञानकी प्राप्ति के लिये गुरुजनों के निकट जाया करती थीं। देखो परशुराम ने कश्यप महाराज के निकट, राजा जनक ने पञ्चशिखजी से, रामचन्द्रने वशिष्ठ और श्रीकृष्ण महाराज ने सन्दीपन नाम पंडित के निकट रहकर अर्थात् गुरुकुल में वासकर विद्या पढ़ी थी उसी भांति अब भी ज्ञानकी प्राप्ति के लिये माता, पिता, आचार्य इत्यादि ईश्वररचित चैतन्य मूर्त्तियों की पूजा करनी चाहिये क्योंकि विना गुरु के विद्या और विना विद्या और शिक्षा के ज्ञान और विना ज्ञान परमेश्वर का बोध नहीं होता जैसा श्रीकृष्ण महाराज ने उद्धवजी को उपदेश किया है देखो श्रीमद्भागवत स्कन्द ११।

शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय १७ में कहा है कि गुरु उपदेश सुनने से ज्ञान बढ़ता है इस लिये चिन्ता की निर्मलता के लिये उनके वाक्यों को मनुष्य

सदा विचार करते रहें। फिर हम नहीं जानते कि शिवपुराण का कर्त्ता क्योंकर अज्ञानियों को जड़मूर्त्तियों की पूजा से उनका भला समझते हैं जबकि शिवपुराण वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय १३ में लिखा है कि गुरु साक्षात् देवता और उसका घर मन्दिर है।

गुरुर्देवोयतः साक्षात्तद्गृहं देवमन्दिरम् ॥ २५ ॥

इसके उपरांत जड़मूर्त्तियों की पूजा जहां नाना प्रकार के पुष्पों से लिखी है वहां अग्निपुराण अध्याय २०२ में लिखा है कि अहिंसा, इन्द्रियनिग्रह, दया, शांति, शम, तप, ध्यान और सत्य इन आठ पुष्पों से संतुष्ट होते हैं।

अहिंसाप्रथमं पुष्पं पुष्पमिन्द्रियनिग्रहः।
सर्वपुष्पं दयाभूते पुष्पं शान्तिर्विशिष्यते ॥ १७ ॥
शमः पुष्पं तपः पुष्पं ध्यानं पुष्पं च सप्तमम्।
सत्यञ्चैवाष्टमं पुष्पमेतैस्तुष्यति केशवः ॥ १८ ॥
पुष्पान्तराणि सन्त्यत्र बाह्यानि मनुजोत्तम ॥ १९ ॥

ऐसा ही पद्मपुराण पातालखंड अध्याय ८१ में लिखा है और शिवपुराण कैलाससंहिता अध्याय ८ में भी लिखा है कि वर्णाश्रमके आचाररूपी पुष्पों से परमेश्वर का पूजन करना चाहिये

श्रीमान् इन पुष्पों से जड़मूर्तियों की पूजा नहीं होती वरन् संसार में चैतन्य मूर्तियों की पूजा होती है यही पूजा का सार है जो बिना ज्ञान के अत्यन्त कठिन है और ज्ञान का मूल भक्ति और भक्ति का मूल देवताओं अर्थात् विद्वानों का पूजन, उसका मूल सद्गुरु और सद्गुरु की प्राप्ति सत्पुरुषों की सङ्गति और उत्तम सङ्गति से विद्या और उससे ज्ञान विज्ञान मिलता है इस लिये गुरु से विद्या और शिक्षा पाने के उपरांत सदा उत्तम पुरुषों का सत्संग करना चाहिये जैसा कि श्रीकृष्ण महाराज ने **श्रीमद्भागवत स्कन्द** ११ में कहा है।

हे उद्धव संसार से पार होने के लिये सतसंग से उत्तम कोई उपाय नहीं है क्योंकि उससे भक्ति उत्पन्न होती है और भक्ति से पार हो जाता है इस लिये साधुओं की संगत परम श्रेष्ठ है। अध्याय १२।

प्रायेण भक्तियोगेन सत्संगेन विनोद्धव।
नोपायो विद्यते सध्र्यङ् प्रायेण हि सतामहम् ॥४८॥

इसी विषय में श्रीकृष्ण महाराज ने श्रीमद्भागवत स्कन्द १० उत्तरार्द्ध अध्याय ८४ में कुरुक्षेत्र के बीच में व्यास, नारद, च्यवन, देवल, विश्वामित्र, शतानंद, भारद्वाज, गौतम, परशुराम, वशिष्ठ, गालव भृगु, पुलस्त्य, कश्यप, अत्रि, मार्कण्डेय, बृहस्पति, द्वित, त्रित, अंगिरा, अगस्त्य, याज्ञवल्क्य, वामदेव इत्यादि मुनियों की सभा में कहा है।

आज हमने अपने जन्म को सफल किया क्योंकि देवताओं को दुर्लभ ऐसे योगीश्वर के दर्शन प्राप्त हुये ॥ भागवत द० ३ अ० ८४ श्लोक ६ ॥

अहो वयं जन्मभृतो लब्धं कार्त्स्न्येन तत्फलम् ।

देवानामपि दुष्प्रापं यद्योगेश्वर दर्शनम् ।

जो जन तीर्थ में स्नान करने को तप जानते हैं और केवल प्रतिमा ही को देवता माने हैं ऐसे मनुष्यों को योगीश्वरों के दर्शन, स्पर्श व वार्त्ता अर्थात् उनसे प्रश्नों के उत्तर आदि चरणसेवा करना नहीं मिलती ।

किं स्वल्पतपसां नृणामर्चायां देवचक्षुषाम् ।

दर्शनस्पर्शन प्रश्न प्रह्वपादार्चनादिकम् ॥ १० ॥

जलमय तीर्थ नहीं है मृत्तिका और शिलान के देवता नहीं हैं यह बहुत काल सेवा करने से पवित्र करते हैं परन्तु साधु महात्मा दर्शन ही से पवित्र करते हैं।

नह्यम्मयानि तीर्थानि न देवा मृच्छिलामया ।

ते पुनंत्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः ॥ ११ ॥

क्योंकि साधु कुछ चाहना नहीं करते निरपेक्ष और समदृष्टि ममता, अहंकाररहित, शान्ति, सुख, दुःख, कुछ नहीं इस लिये उनका संग ही मनुष्यों को तारता है जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कंद ११ अध्याय २६ श्लोक २७ में लिखा है।

संतोऽनपेक्षामच्चित्ताः प्रशांताः समदर्शिनः ।

निर्ममा निरहंकारा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः ॥ २७ ॥

शिवपुराण सनत्कुमारसंहिता अध्याय ५२ में लिखा है कि जो ब्राह्मण वेदवित् और अग्निहोत्रपरायण है वह श्रेष्ठ है वही पूजन करने से तार देते हैं ॥ १९ ॥

क्योंकि ब्राह्मण मिथ्यावादी नहीं होते प्राणियों की हिंसा नहीं करते वह किसी की सेवा नहीं करते और पापाकारी नहीं होते ॥ २० ॥

जो ब्राह्मण तपस्वी तथा वेदविद्या में विशारद हैं वह देवताओं के भी देवता वृष्टि देने हारे हैं ॥ २५ ॥

जिस प्रकार अग्नि की सेवा से शीत और अन्धकार जाता है उसी भांति नेत्रों से संसारी पदार्थों का ज्ञान होता है। जिस भांति अच्छे सिखलाये घोड़ों से युक्त रथद्वारा मनुष्य आनन्दपूर्वक एक स्थान से दूसरे स्थान को शीघ्र पहुंच जाते हैं वैसे ही विद्या और सज्जनों के संग और योगाभ्यास के द्वारा शीघ्र परमात्मा को प्राप्त होते हैं। जैसा कि यजुर्वेद अध्याय २३ मन्त्र ६ में कहा है।

युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥

इस हेतु जो मनुष्य चैतन्य मूर्तिमान देवों के सत्संग योगाभ्यासादि सत्कर्मों के द्वारा मन को शुद्ध करने वाले धार्मिक और पुरुषार्थी हैं वे ही व्यापक परमेश्वर के स्वरूप को जानते और उसको प्राप्त होने योग्य होते हैं अन्य नहीं जैसा कि यजु० अ० ३४ मंत्र ४४ में कहा है।

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते। विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥

श्रीमान् प्रकृति की बनी हुई प्रतिमाओं के पूजने से अज्ञानिओंको कुछ लाभ नहीं। क्योंकि य० अ० १७ मं० ३१ में स्पष्ट कहा है कि जो ब्रह्मचर्यादि व्रत, आचार, विद्या, योगाभ्यास, धर्म के अनुष्ठान सत्संग पुरुषार्थ से रहित हैं वे अज्ञानरूपी अंधकार में दबे हुए हैं इसलिये वह ब्रह्म को नहीं जानते। हां! जो उपरोक्त गुणों से अपनी आत्मा को पवित्र करते हैं वही उस ब्रह्म को जानते हैं। जैसा कि—

न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव। नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थ शासश्चरन्ति।

इसलिये प्रकृति की बनी हुई मूर्तियों की पूजा का त्यागन करना अभीष्ट है क्योंकि यजुर्वेद अध्याय ४० मंत्र ९ में लिखा है कि जो असम्भूत अर्थात् अनुत्पन्न, अनादि प्रकृति कारण की ब्रह्म के स्थान में उपासना करते हैं वे अंधकार अर्थात् अज्ञान और दुःखसागर में डूबते हैं और संभूत जो कारण से उत्पन्न हुए कार्यरूप पृथ्वी आदि भूत पाषाण और वृक्षादि अवयव और मनुष्यादि के शरीर की उपासना ब्रह्म के स्थान में करते हैं उस अंधकार से भी

अधिक अंधकार अर्थात् महामूर्ख चिरकाल घोर दुःखरूप नरक में गिरते हैं। जैसाकि—

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ततो भूय इवतेतमो य उ संभूत्यार्थं रताः।

अतएव सत्संग और विवेक रूपी निर्मल नेत्रों से मार्ग को जान कार्य कीजिये क्योंकि जिसके यह उपरोक्त दोनों नेत्र नहीं हैं वही अन्धा और कुमार्ग जानेवाला है जैसा कि गरुड़ पुराण अध्याय १६ श्लोक ५७ में कहा है।

सत्सङ्गश्चविवेकश्च निर्मलं नयनद्वयम्।
यस्यनास्तिनरः सोन्धः कथं नस्यादमार्गगः॥ ५७॥

और जो कुमार्ग में जाते हैं उनको किसी प्रकार का सुख नहीं मिलता इसलिये प्रथम सबको गुरुकुल भेज शिक्षा कराइये तत्पश्चात् वह सत्संग और विवेकरूपी नेत्रों से सत्मार्ग को जान परमेश्वर की उपासना कर सकते हैं तबही सर्वप्रकार के सुख उनको मिल सकते हैं अन्यथा नहीं इसीलिये यजुर्वेद अध्याय ३४ मंत्र १३ में कहा है कि जो मनुष्य विद्वानों के बतायें मार्ग पर चलते हैं वे ही ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव को जान परमेश्वर की आज्ञानुसार कार्य करते हैं तब उनकी ईश्वर तथा विद्वान्‌जन निरंतर रक्षा करने वाले होते हैं। जिसके कारण वे कभी सन्तानों से रहित न होकर लक्ष्मीवान् और दीर्घायु वाले होते हैं।

त्वन्नो अग्ने तव देव पायुभिर्मघोनो रक्षतन्वश्च वन्द्य। त्राता तो कस्य तनस्य तनये गवामस्य निमेषꣳ रक्ष माण स्तव व्रते॥

पण्डितजी महाराज जब तक इस देश के मनुष्य ईश्वर की उपरोक्त आज्ञा के अनुसार परमात्मा के गुण, कर्म और स्वभाव को जान उपासना करते रहे तब तक यह देश स्वर्गधाम बना रहा।

और प्रतिदिन आनन्दरूपी अमृत की वर्षा होती रही-ज्योंही इस आज्ञा के विरुद्ध कार्य आरम्भ किया त्यों ही भारत का, भारत होना आरम्भ होगया जिसको आप प्रत्यक्ष देख रहे हैं।

जड़ मूर्त्तियों की पूजा से परमात्मा के गुण, कर्म और स्वभाव नहीं जाने जाते हाँ स्वार्थियों के स्वार्थ सफल होते हैं जिसके लिये उन्होंने सबसे प्रथम गुरुकुलों की शिक्षा को उठा दिया और वेदों के पठन, पाठन को एकदम बंद कर दिया। इधर ऋषि, मुनियों के नाम से ग्रंथ रच वेदों के स्थान पर सुनाने

आरम्भ कर दिये जिनमें मन के लुभाने वाली बातें बहुतायत से लिख बड़े बड़े पापों के मोचन अत्यंत सुगम बना दिये जिनको सुन स्त्री, पुरुष यकायक उधरको झुकगये फिर वही संसार का मार्ग बनगया, फिर क्या फिर तो हम सब प्रकृति की मनुष्यकृत मूर्त्तियों की पूजा और जल स्नान से मोक्ष पुरुषों आदिके चढ़ानेसे संतान, धन और आरोग्यता और मंत्रजप और स्तोत्रों के पाठ से सर्वकार्य की सिद्धि की आशा पर ब्रह्मचर्य, पुरुषार्थ, बल, विद्या इत्यादि को तिलाञ्जलि दे, ऐसे मूर्ख बन गये कि अब विद्या के प्रकाश होने और उत्तमोत्तम उपदेश सुनने पर भी टस से मस नहीं करते और अब भी थोथी बातों में फँसे हुए चले जाते हैं उनमें से कुछ संक्षेप से इस स्थान पर सुनाता हूँ और कुछ फिर सुनाऊंगा क्योंकि इन्हीं बातों से पुराण भरे पड़े हैं।

पण्डितजी-सेठजी आज यहां ही विश्राम दीजिये।

सेठजी-अच्छा श्रीमान् ओश्म् शम्।

श्रीमान् पण्डितजी-और अन्य सज्जन पुरुषों ने चलनेकी तैयारी की।

आर्य्यसेठ-ने श्रीमान्को नमस्ते कह अन्यसब महाशयोंसे यथायोग्य की।

श्रीमान् पण्डितजी-लालाजी आयुष्मान् भव।

अन्यसभ्यगणों-ने यथायोग्य कहा-सब चल दिये।

सेठजी-भोजनादि कार्यों में लग गये।

॥ इति षष्ठम परिच्छेदः ॥



सप्तम परिच्छेद ।

आर्यसेठ—नियत समय पर श्रीमान् पण्डितजी पधारे जिन को देख उठ-दोनों हाथ जोड़ नम्रतापूर्वक नमस्ते कह कहा कि श्रीमान् ! आइये, विराजमान हूजिये ।

पंडितजी—आशीर्वाद देकर विराजमान हुए और कहा कि सेठजी जिन बातों को आज आप वर्णन करना चाहते हैं उनको संक्षेप से किसी एक दो पुराणों से सुना दीजे क्योंकि अवतार विषय में हमको सुनना है ।

आर्यसेठ—श्रीमान् की जैसी आज्ञा । मैं वैसा ही करूंगा-परन्तु आप अन्य पुराणों में भी अवश्य स्वयं देखलें ।

पंडितजी—मैं अवकाश होने पर अवश्य देखूंगा ।

इतने में अन्य श्रोतागण भी आगये जिनको लालाजी ने यथायोग्य कहा और वह सब उत्तर दे आनंद से बैठ गये तब सेठजी ने कहा कि—

श्रीमद्भागवत स्कन्द ११ अध्याय २७ श्लोक ५२ में लिखा है कि जो मनुष्य प्रतिमा की प्रतिष्ठा करता है वह राजा होता है । मंदिर बनवाने से त्रिलोकी का राज्य और पूजादि कार्य करने से ब्रह्मलोक मिलता है और जो उपरोक्त तीनों कार्यों को करता है वह सायुज्य मुक्ति को पाता है ।

प्रतिष्ठयासार्वभौमं दानेन भुवनत्रयम् ।
पूजादिना ब्रह्मलोकं त्रिभिर्मत्साम्यतामियात् ॥ ५२ ॥

पद्मपुराण सप्तमक्रियायोगसार अध्याय ११ से—

जगन्नाथ के पूजन का फल

जो पुरुष जगन्नाथ का पूजन करता है वह सब व्याधियों से छूट, इस लोक से सब कामनाओं को भोग, अंत में हज़ार युग तक भगवान् के मंदिर में स्थित होता है ।

शीतनिवारण फल

पुत्र पौत्रों से युक्त हो, इस लोक में सब कामनाओं को भोग अंत में देवताओं से भी दुर्लभ विष्णु के पुर को जाता है ।

दूधस्नान का फल

वह अपने कर्म से दुस्तर नरकरूपी समुद्र में डूबते हुए करोड़ पुरुषों का उद्धार कर, भगवान् के पद को पाता है।

शंख से स्नान का फल

ब्राह्मण, गऊ, स्त्री और गर्भ की हत्या और मदिरा आदि पीने के पाप से छूट, वैकुण्ठ में जा सब सुखों का भोग करता है।

शङ्खेन स्नापयेद्यस्तु भगवन्तं जनार्दनम् ।
विप्रगोस्त्री भ्रूणहत्या सुरापानादि पातकैः॥
विमुक्ता याति वैकुंठं भुंक्ते हि सकलं सुखम् ॥७१॥७२॥

प्रदक्षिणा का फल

जो २ ब्रह्महत्यादिक बड़े २ पाप हैं वे सब प्रदक्षिणा के पद २ में नाश हो जाते हैं। जो भक्ति से विष्णु की प्रदक्षिणा में जितने पग रखता है उनसे हज़ार कल्प विष्णुजी के साथ आनंद करता है ॥ ११५ ॥

ब्रह्महत्यादि पापानि यानियानि महांति च ।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणं पदे पदे ॥ ११५ ॥
यावत्पादं नरो भक्त्या गच्छेद्विष्णुप्रदक्षिणे ।
तावत्कल्पसहस्राणि विष्णुना सहमोदते ॥ ११६ ॥

संसार में जितना सबफल प्रदक्षिणा करने से होता है उससे करोड़ गुना फल भगवान् की प्रदक्षिणा करने से होता है जो तीन दिन में दोवार विष्णुजी की प्रदक्षिणा करता है वह निस्संदेह इन्द्र के पद को प्राप्त होता है ॥ ११८-१२१ ॥

भगवान् के मंदिर में झाड़ू देने का फल

(१) विष्णु के मंदिर से जितनी धूल बाहर चली जाती है उतने सौ मन्वन्तर मनुष्य विष्णुजी के मन्दिर में स्थित रहता है ॥ श्लोक ४२ ॥

(२) जो ब्राह्मण का मारने वाला भी भगवान् के घर में झाड़ू देता है तो वह भी परमधाम को जाता है बहुत कहने से क्या है ॥ ४३ ॥

चतुर्थ ब्रह्मखंड अध्याय २ से मन्दिर लीपन का फल

(१) लीपने से जितनी धूल नाश होती है उतने हज़ार कल्प मनुष्य सुख-पूर्वक विष्णु के मन्दिर में स्थित रहता है ॥ श्लोक ५ ॥

इतिहास ।

इस विषय में चतुर्थ ब्रह्मखंड अध्याय २ में लिखा है कि पूर्व समय द्वापरयुग में दण्डक नामक चोर हुआ जो ब्राह्मणों की द्रव्य चुरानेवाला, मित्रों का नाश करनेवाला, झूठ बोलनेवाला, क्रूर, पराई स्त्रियों के गमन में रत, गऊ का मांस खानेवाला, मदिरा पीनेवाला, पाखंडी मनुष्य के संग रहनेवाला, ब्राह्मणों की जीविका छीननेवाला, शरणागतों के नाशनेवाला, वैश्यों में लोलुपादि अवगुणों से युक्त था।

पुरासीद्दण्डको नाम्ना चौरोलोकभयप्रदः ।
ब्रह्मस्वहारी मित्रघ्नो युगे द्वापरसंज्ञके ॥ ६ ॥
असत्यभाषो क्रूरश्च परस्त्रीगमने रतः ।
गोमांसाशी सुरापश्च पाखण्डजनसङ्गभाक् ॥ ७ ॥
वृत्तिच्छेदी द्विजातीनां न्यासापहारकस्तथा ।
शरणागतहन्ता च वेश्या विश्रभलोलुपः ॥ ८ ॥

वह मूढ़बुद्धि एक समय किसी विष्णुमंदिर में चोरी करने को गया और देवस्थान के द्वार में प्रवेश कर कीचड़ से युक्त अपने पावों को वहाँ की भूमि में पोंछता हुआ ॥ श्लोक १० ॥

इसी कर्म से पृथ्वी लिप गई फिर आनन्द से लोहे की शलाकाओं से किवाड़ को उखाड़ कर भगवान् के मंदिर में प्रवेश करता हुआ ॥ श्लोक ११ ॥

वहाँ चोर ने सुन्दर शैया पर राधा समेत भगवान् को देखा और राधा के स्वामी को प्रणाम किया, उसी समय पापरहित होगया। फिर कहने लगा कि चोरी करूं या न करूं ? मैं सेवा करने में समर्थ नहीं हूं। मैं सदा का चोर हूँ और सब काम द्रव्य से होते हैं यह कह भगवान् के रेशमी कपड़े को बिछा कर सब वस्तुओं को बांधा उसके चलते समय काँपने से बड़ा शब्द हुआ इसलिये लोग जागकर सब दौड़े वह वस्तु छोड़ भागा। कुछ दूर गया वहां सर्प ने खा लिया वह पापी मरगया। फिर यम के दूत आये बाँधकर लेगये तब यमराज ने

चित्रगुप्त से पूछा कि इसने क्या २ किया है सब कहो। तब मंत्री ने कहा कि पृथ्वी पर जितने पाप बनाये हैं इसने सब किये हैं मैं सत्य कहता हूँ।

अब इसकी सुकृति भी सुनिये यह पापियों में श्रेष्ठ भगवान् की द्रव्य चुराने गया था वहां भगवान् के द्वारमें अपने पावोंकी कीचड़को इसने पोंछ दिया उससे पृथ्वी लिपी, बिल और छेदों से रहित होगई, तिसी पुण्य के प्रभाव से इसके बड़े भारी पाप नष्ट होगये इसलिये यह आपके दण्ड से निकल कर वैकुंठ जाने के योग्य है।

बभूवलिप्ता सा भूमिर्बिलच्छिद्र विवर्जिता ।
तेन पुण्यप्रभावेन निर्गतं पातकं महत् ॥
वैकुंठं प्रति योग्योऽसौ निर्गतस्तव दंडतः ॥ २९ ॥

यह सुन यमराज ने सोनेका पीठ उसके बैठने को दिया फिर उसकी पूजा की और नम्रतापूर्वक शिर से नमस्कार कर कहा कि तुम्हारे चरण की धूलियों से मेरा मन्दिर पवित्र होगया।

पवित्रं मन्दिरं मेद्य पादयोस्तद्धि रेणुभिः ॥ ३१ ॥

मैं निस्सन्देह कृतार्थ हुआ हूं। हे साधो ! इस समय तुम भगवान् के उत्तम मंदिर को जाओ ॥ श्लोक ३२ ॥

जो अनेक प्रकार के भोगों से युक्त जन्म, मरण का निवारण करनेवाला है ॥ श्लोक ३३ ॥

इतना कह धर्मराज ने हंसों से युक्त सोने के रथ पर उस पाप रहित को चढ़ा भगवान् के मंदिर को भेज दिया ॥ ३४ ॥

वह वैकुंठ गया, बहुत काल सुख से रहा जो भक्ति से भगवान् के मंदिर को लीपते हैं उनके पुण्य को तो मैं नहीं जानता कि क्या होगा ॥ ३५ ॥

जो एकाग्रचित्त होकर इसको सुनता वा पढ़ता है उसके करोड़ जन्म के पाप निस्सन्देह नाश होजाते हैं।

य इदं शृणयाद्भक्त्या पठेद्यो वा समाहितः ।
कोटिजन्मार्जित पापं नश्यत्येव न संशयः ॥ ३७ ॥

प्रणाम का फल।

जो भगवान् को सातवार पृथ्वी में दण्डवत् प्रणाम करता है उसके शरीर के सब पाप उसी क्षण भस्म होजाते हैं। पृथ्वीमें सब अङ्गों को गिराकर

जो प्रणाम करता है तब जितनी धूलि से मनुष्य का शरीर भूषित होगया है उतने ही हज़ार कल्प वह भगवान् के समीप स्थित होता है।

वामनपुराण अध्याय ९४ में लिखा है कि कोटिसहस्र और करोड़ों, सैकड़ों तीर्थों का जो स्नान करना है सो नारायण को प्रणाम करने की सोलहवीं कला को भी नहीं पहुंचता है।

तीर्थकोटि सहस्राणि तीर्थकोटि शतानि च।
नारायण प्रणामस्य कलां नार्हंति षोडशीम् ॥ ६२ ॥

चरणोदक का फल

(१) सब पापों के नाश करनेवाले शुभ विष्णुजी के चरणोदक को जो कणमात्र भी प्राप्त होता है वह सब तीर्थों के फलों को पाता है ॥ २ ॥ पद्मपुराण चतुर्थ ब्रह्मखंड अध्याय १७ ॥

(२ विष्णुजी के चरणजल के स्पर्श करने से पापनाश होजाते हैं अकाल मृत्यु नहीं होती और छूनेवाला गंगास्नान के फलको प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

(३) जो पापी विष्णुजी के चरणोदक को पीता है तो उसके किये हुए देह के स्थित पाप निस्सन्देह नाश होजाते हैं ॥ ४ ॥

(४) जो मनुष्य भक्ति से तुलसी संयुक्त विष्णु के चरणामृत को शिरसे धारण करता है वह अन्त में भगवान् के स्थान को जाता है ॥ ५ ॥

(५) मेरु पर्वत के बराबर सोना देने से जो फल मिलता है वह फल मनुष्यों को हरिजी के चरणजल के स्पर्श से प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

(६) हज़ार करोड़ गौवों के देने से जो फल मनुष्यों को मिलता है वह फल हरिजी के चरणजल छूने से निश्चय मिलता है ॥ ७ ॥

(७) हज़ार करोड़ यज्ञ उससे करोड़गुना कन्यादान और करोड़ हाथी के देनेसे जो फल मिलता है वही हरिजी के चरणोजल स्पर्श से मिलता है ॥८॥

इतिहास।

पूर्व समय के त्रेतायुग में सुदर्शन नामक एक पापी ब्राह्मण जो एकादशी को नित्य ही भोजन करता था और जो अधम एकादशी में भोजन करता है वह विष्ठा भोजन करता है और घोरनरक को जाता है।

इसलिये इसको सौ मन्वन्तर पर्यन्त नरकमें स्थान दीजिये तदनंतर गांव के सुअर की योनि में जन्म होगा।

यमराज की आज्ञासे सौ मन्वन्तर तक विष्ठाके नरकमें गिराया गया जब नरक से छूटा तो पृथ्वी में गाँव का सुअर होकर बहुत काल तक एकादशी के भोजन करने से नरक का भोजन करता रहा। फिर काल प्राप्त होने पर मरकर कौवे की योनि में जन्म लेकर सदैव विष्ठा भोजन करता रहा। एक दिन दूरदेश में स्थित श्रीहरिजी के चरणजल को पान कर सब पापों से रहित होगया।

उसी दिन बहेलिया का कौवा गिरा तब काल में बहेलिया ने कौवे कोभी मार डाला तब दिव्य शुभराजहंसों से युक्त रथ वैकुण्ठ से आया तिसपर कौवा चढ़ भगवान् के मंदिर को जाता हुआ।

जो कोई इस पाप नाश करनेवाले चरणजल के माहात्म्य को सुनता है उसके पाप नाश होजाते हैं।

यः शृणोति नरः पापी तस्य पापं विनश्यति ॥ २८ ॥

मन्दिर बनवाने का फल।

सौ कुल अगले और पिछले शिवमंदिर बनवानेवाले के तर जाते हैं और अक्षयलोक की प्राप्ति होती है ॥ १७ शिव-धर्मसंहिता अध्याय १६ ॥

सातजन्म का पाप थोड़ा या बहुत शिवमंदिर निर्माण करते ही नष्ट हो जाता ॥ है १८ ॥

सप्तजन्मकृतंपापं स्वल्पं वा यदि वा बहु।
शम्भोरालय विन्यास प्रारम्भादेव नश्यति ॥ १८ ॥

मंदिर बनवाते हुए को देखकर जो मनमें यह विचार करते हैं कि मेरे धन हो मैं भी बनवाऊंगा तो उसका कुल भी शीघ्र स्वर्ग को चला जाता है .२७।

शिवलिङ्ग की प्रतिष्ठा।

अच्छे स्थान में शिवलिंग की प्रतिष्ठा करके पुरुष कृत्य २ होजाता है और फिर यमपुर नहीं जाता। २४।

जो लोग लिंगस्थापन की मनमें इच्छा करते हैं वे आठ कुलका उद्धारकर शान्त शिवलोक को जाते हैं। २६।

यम उनके पास नहीं जाते—जो मनुष्य शङ्कर की उपासना करते हैं, रात दिन शिव २ कहते हैं, जो पुष्प, धूप, वस्त्रों से वा अपने प्रिय भूषणों से शिवका भजन करते हैं, जो मन्दिरों को लीपते, बुहारते, हैं उन तीन कुलों और जिन्होंने मन्दिर बनवाया उनके १०० पुरुषों के और जिसने भगवान् का लिंग बनवाया उनके कुल के दश सहस्र मनुष्यों में तुम्हारा अधिकार नहीं।

येन वा यतनं शम्भोः कारितं तत्कुलोद्भवम् ।
पुंसां शतं नावलोक्यं भवद्भिदु ष्टचेतसा ॥ ३६ ॥
येन लिंगं भगवतो महेश्वरस्य कारितम् ।
नरायुतं तत्कुलजं भवतां शासनातिगम् ॥ ३७ ॥

घृत और मधुसे स्नान का फल

कृष्णचतुर्दशी को जो प्रजापति के लिंग को स्नान कराता है और पूजन करता है वह सब पापों से छूटजाता है ॥ ४३ ॥

ज्ञान व अज्ञान से मनुष्य जो पाप करता है वह सन्ध्या को घृतसे शंकर को स्नान कराने से नष्ट होजाते हैं ॥ ४४ ॥

जो दूध से स्नान कराता है उसको सात जन्म तक आरोग्यता, सुन्दर रूप आदि मिलते हैं ॥ ४८ ॥

घृत, क्षीर के देखते ही शिवजी प्रसन्न होजाते हैं शङ्कर के स्नान कराने से सबकी स्निग्धता होजाती है ॥ ५२ ॥

अग्निपुराण अध्याय ३८ और ३२६ से।

जो कृष्ण वासुदेव के मन्दिर को बनवाता है वह कुल सहित विष्णुलोक को जाता है और वह इस लोक तथा परलोक में पूजनीय होता है। और मन्दिर के बनवाने का प्रारम्भ करने से ही सातजन्म का किया पाप नष्ट हो जाता है. बनवानेवाला पुरुष स्वर्ग को जाता है नरक को कभी नहीं आता। वही सुकृति है और उसीसे ही कुल पवित्र है।

सकुलस्तस्य वै कर्त्ता विष्णुलोके महीयते ।
सएव पुण्यवान् पूज्य इहलोके परत्र च ॥ १९ ॥
कृष्णस्य वासुदेवस्य यः कारयतिकेतनम् ।
जातःस एवसुकृती कुलं तेनैव पावितम् ॥ २० ॥

सप्तजन्मकृतं पापं प्रारम्भादेव नश्यति ।
देवालयस्य स्वर्गीस्यान्नरकं न स गच्छति ॥ २१

मन्दिर का बनवानेवाला सौ कुल का उद्धार करके विष्णुलोक को जाता है। "कुलानां शतमुद्धृत्यविष्णुलोकंनयेन्नरः"

प्रतिदिन के यज्ञ करने से जो महाफल होता है वही फल विष्णु के मंदिर बनवाने से प्राप्त होता है।

अहन्यहनि यज्ञेन यजतो यन्महाफलम् ॥ ४५ ॥
प्राप्नोति तत्फलं विष्णोर्यः कारयतिकेतनम् ॥ ४६ ॥

अध्याय ३२६ से कि सम्पूर्ण यज्ञ, तप, दान तथा तीर्थ में स्नान करने और वेदों के पढ़ने से जो फल होता है उससे करोड़ गुणा अधिक शिवलिंग के स्थापित करने से प्राप्त होता है।

सर्वयज्ञतपोदाने तीर्थवेदेषु यत्फलम् ।
तत्फलं कोटिगुणितं स्थाप्यलिंगं लभेन्नरः ॥ १४ ॥

शालग्राम की पूजा का फल

(१) शालग्रामजी की मूर्त्ति जहां होती है वहां भगवान् रहते हैं। वहाँ पर स्नान और दान करना काशीजी से भी सौगुणा अधिक है ॥ ४३ ॥ पद्मपद्म उत्तरखण्ड अ० २३ ॥

(२) कुरुक्षेत्र, प्रयाग और नैमिषारण्य से करोड़गुणा पुण्य शालग्राम की मूर्त्ति के पूजन से होता है ॥ ४४ ॥

(३) मनुष्य ब्रह्महत्यादिक पापों को जो करता है वे सब शालग्राम की मूर्त्ति पूजन से शीघ्र नाश होजाते हैं ॥ ४६ ॥

ब्रह्महत्यादिकं पापं यत्किंचित्कुरुते नरः ।
तत्सर्वं नाशयेदाशु शालग्रामशिलार्चनात् ॥

चतुर्थ पातालखंड अध्याय २० में लिखा है कि पुरुष चाहे महापापी हो चाहे ब्रह्महत्यादि पापों से युक्त भी हो तो भी शालिग्रामशिला के स्नान का जल पीकर परमगति को जाता है।

अपि पापसमाचारो ब्रह्महत्यायुतोऽपि वा ।
शालग्रामशिलातोयं पीत्वा याति परांगतिम् ॥ २८ ॥

चतुर्थब्रह्मखंड अ० १६ से भगवान् को घी समेत लाई और कौड़ी देने का फल।

(१) जो मनुष्य कुआर के महीने में पौर्णमासी के दिन श्रीहरिजी को घी समेत लाई और खेलने के लिये कौड़ी भक्ति से देता है वह हरिजी के स्थान को जाता है वहां से फिर नहीं आता जो मनुष्य मोह से नहीं देता तिसके ऊपर भगवान् प्रसन्न नहीं होते ॥ १२ ॥ १३ ॥

(२) जो मनुष्य कुआर की पौर्णमासी के दिन जितनी कौड़ी भगवान् को देता है उतने ही दिन हरिजी के स्थान में बसता है ॥ १४ ॥

वराटिकां यावतीं यो हरये पौर्णिमा दिने।
तावद्दिनं हरेः स्थानं चाश्विने संवसेद्ध्रुवम् ॥ १४ ॥

इतिहास।

प्राचीन समय में करवीरपुर में एक दयारहित कालद्विज नाम शूद्र था जो स्वामी के कार्य का बिगाड़ने वाला था वह एक समय काल के गाल में आकर मरगया। तब यमदूत यमराज के पास लेगये उन्होंने उसके विषय में मंत्री से पूछा तब चित्रगुप्त ने कहा यह पापी दुराचारी और स्वामी के कार्यका नाश करने वाला है इसको अणुमात्र भी पुण्य नहीं इसलिये सौ मंवन्तर सांप की योनि में पत्थर के घर में जन्म लेकर निरंतर स्थित रहे ऐसा ही हुआ अर्थात् नरक में गिरा और पत्थर के घरमें सांप की योनि में उत्पन्न हुआ। एक समय में कुआर के महीने की पौर्णमासी के दिन वह सांप लाई और कौड़ी बिल से बाहर फेंकता हुआ वह भगवान् के आगे गिरती हुई तब हरिजी दयालु दुःख नाश करनेवाले आप ही शीघ्र उसके पाप को नाश कर देते हुए, काल प्राप्त होनेपर वह मरगया। यम के दूत आये और लेजाना चाहते थे कि इतने में विष्णु के दूत भी आगये और सुन्दर रथ में बिठा लेगये और यम के दूत भाग गये विष्णुदूतों से वेष्टित होकर साँप विष्णु मंदिर को जाता भया और वहांपर फिर लौटने से रहित होकर भगवान् के आगे स्थित होता हुआ जो मनुष्य भक्ति से भगवान् को घी समेत लाई और कौड़ी देता है उसको पुण्य को मैं नहीं जानता ॥ २८ ॥

भक्त्यायो हरये दद्याल्लाजांश्च सघृतान्द्विजः।
वराटिकां तस्य पुण्यं न जाने किं भवेद्ध्रुवम् ॥ २८ ॥

जो कोई पापनाशन इस अध्याय को सुनता है उसके पाप नाश होजाते हैं।

तुलसी महात्म्य।

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार अध्याय २४ से

(१) जहांपर तुलसी का वृक्ष स्थित होता है तहांपर ब्रह्मा, विष्णु, और महादेवादिक सब देवता स्थित होते हैं ॥ ५ ॥

(२) तुलसी के पत्ते में केशव भगवान्, पत्र के आगे ब्रह्माजी और पत्र के मूल में शिवजी सदैव स्थित रहते हैं ॥ ६ ॥

(३) लक्ष्मी, सरस्वती, गायत्री, चण्डिका तथा और सब देवियां तुलसी के पत्रों में बसती हैं ॥ ७ ॥

(४) इंद्र, यमराज नैर्ऋति, वरुण, पवन और कुबेर तिसकी डाल में बसते हैं ॥ ८ ॥

(५) सूर्यादिक सब ग्रह, विश्वदेवा, वसु मुनि, सब देवर्षि ॥ ९ ॥

(६) पृथ्वी में करोड़ ब्रह्मांडों के बीच में जितने तीर्थ हैं वे सब तुलसी के वृक्ष में जागृत होकर सदैव बसते हैं ॥ १० ॥

(७) जो भक्तिभाव से युक्त होकर तुलसी को सेवता है उसने तीर्थ और ब्रह्मादिक सब देवताओं का सेवन किया ॥ ११ ॥

(८) जो मनुष्य तुलसी की जड़ में उत्पन्न तृणों के समूहों को काट डालते हैं तो उनके शरीर में स्थित ब्रह्महत्या को भी भगवान् उसी क्षण नाश कर देते हैं ॥ १२ ॥

छिन्दन्ति तृणजालानि तुलसीमूलजानि ये।
तद्देहस्थां ब्रह्महत्यां क्षिणन्ति तत्क्षणाद्धरिः ॥ १२ ॥

(१२) जो अंजुली भर पानीसे सींचता है वह सब पापों से रहित होकर स्वर्ग को प्राप्त करता है ॥ १६ ॥

(१३) जो दूध से सींचता है तो निश्चय उसके घर में लक्ष्मीजी रहती हैं ॥ १७ ॥

(१४) जो मनुष्य तुलसी को प्रणाम करता है उसकी उमर, बल, यश, द्रव्य, और संतति बढ़ती है ॥ २४ ॥

तुलसीप्रणमेधस्तु नरोभक्तिसमन्वितः ॥
आयुर्बलंयशोवित्तं संततिस्तस्य वर्द्धते ॥

पीपल और आंवले का फल

पीपल के देखने, छूने और प्रणाम करने से भगवान् देह में स्थित सब पापों का नाश करते हैं ॥४७॥ पद्म अध्याय १२।

पीपल के वृक्षको देख कर जो प्रणाम करता है वह श्रेष्ठस्थानको जाता है और उसकी उमर बढ़ती है ॥ ४१ ॥

(१) जिस प्रकार विष्णुजी को तुलसी प्यारी है उसी भांति सब पाप का नाश करने वाला आँवला ॥ ४७ ॥ अध्याय २४ ॥

(२) तुलसी में जो २ देवता स्थित हैं वही सब आंवले में बसते हैं ॥ ४८ ॥

(३) जहाँ आंवला है वहाँ ही गंगादिक तीर्थ हैं ॥४६॥

(४) जहां आंवला और तुलसी नहीं होगा वह स्थान अपवित्र होता है।

धात्रीच तुलसीदेवी न तिष्ठे यत्र जैमिने।
स्थानं तदपवित्रंस्यान्न च क्रियाफलं लभेत् ॥

और क्रिया का फल नहीं मिलता और सब कर्म किया हुआ निष्फल जाता है ॥ ५३ ॥

न तिष्ठत्याश्रमेयस्य धात्री च तुलसीशुभा।
तेन कर्मकृतंसर्वं नूनं गच्छति निष्फलम् ॥ ५३ ॥

(५) जहाँ तुलसी और आंवला नहीं वहां लक्ष्मीजी नहीं रहतीं और उसने सब पापों को किया वहां ही सब पाप रहते हैं ॥ ५४ ॥

धात्र्या तुलस्या हीनं च निलयं यस्यभूसुर।
अलक्ष्मीः पातकं सर्वं कलिश्चतेन दूषितः ॥

मंत्रमहिमा

शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय १३ में (ओं नमः शिवः) इस मंत्र की बड़ी महिमा वर्णन की है और यह भी लिखा है कि इससे सब कार्य सिद्ध होते हैं इसके उपरांत जो और मन्त्रों में दोष हैं वे इसमें नहीं इसमें जाति आदिकी भी अपेक्षा नहीं अर्थात् कोई जातिका क्यों न हो। जैसा कि-

ये दोषाः सर्वमन्त्राणांनतेऽस्मिन्सम्भवन्त्यपि।
अस्य मन्त्रस्य जात्यादि ननपेक्ष्य प्रवर्त्तनात् ॥ १७४ ॥

अध्याय २३ में लिखा है कि ऐसी कोई वस्तु नहीं जो इससे न मिल सके यह सम्पूर्ण श्रेयका साधन है इसीसे दुर्भिक्षादि की शाँति करे।

दुर्भिक्षादिषु चात्यर्थं शान्तिकुर्यादनेन तु ॥ १३६ ॥

उपरोक्त मन्त्र सातकरोड़ मन्त्रोंमें महामन्त्र है जिसकी जिव्हा पर यह रहता है मानों उसके सब कार्य सिद्धि को प्राप्त होगये। उसीका जीवन सफल है। नीच-अधम-मूर्ख वा पंडित जो कोई पंचाक्षरी मन्त्र को जपता है वह पापों के पंजर से छूट जाता है।

जिह्वाग्रे वर्त्तते यस्य सफलं तस्य जीवितम्।

अन्त्ययो वाधमो वापि मूर्खो वा पण्डितोऽपि वा।

पञ्चाक्षरजपेनिष्ठो मुच्यते पापपञ्जरात्।

जो दूषित, कृतघ्नी, निर्दयी, दुष्टात्मा है तथा लोभी और जो कुटिलमन वाले भी मुझमें मन लगाते, भक्ति करते हैं उनको मेरी संसारभयतारिणी पंचाक्षरी विद्या है। हे देवी! मैंने पृथ्वीतल में एकवार प्रतिज्ञा की है कि कैसा भी पतित हो इस विद्या से मुक्त हो जाता है।

मयैवमसकृद्देवि प्रतिज्ञातं धरातले।

पतितोऽपिविमुच्यते तमद्भुतो विद्ययानय ॥

इस कारण तप, यज्ञ, व्रत, नियम, पंचाक्षर से अर्चन करने के कोटि अंश के भी समान नहीं।

तस्मात्तपांसि यज्ञाश्च व्रतानि नियमास्तथा,।

पंचाक्षरार्चनस्यैते कोट्यंशे नापिजो समाः॥

सदाचारहीन, पतित, अन्त्यजकी रक्षा करने को कलियुग में पञ्चाक्षर से बढ़कर कोई मन्त्र नहीं है।

सदाचारविहीनस्य पतितस्मान्त्यजस्य च।

चलते, खड़े होते अथवा स्वेच्छा से कर्म करते हुए अशुचि वा शुचि में भी यह मंत्र निष्फल नहीं होता।

गच्छतस्तिष्ठतो वापि स्वेच्छया कर्मकुर्व्वतः।

अशुचेर्वाशुचेर्वापि मन्त्रोऽयं च निष्फलः॥

जो पुरुष आचार रहित है अविशुद्ध षडध्व वालों का यदि गुरुने उपदेश न दिया हो तो भी यह मन्त्र निष्फल नहीं होता।

इसके विषय में लिंगपुराण और स्कंदपुराण के ब्रह्मोत्तरखंड अध्याय एक में बड़ी महिमा वर्णन की है-वहां एक इतिहास भी वर्णन किया है। मथुरा नगरी में दाशार्द नाम एक राजा था जिसका कलावती नाम एक कन्या से विवाह हुआ था। एक रात्रि को राजा ने रानी को बुलाया उसने इनकार किया। राजा काम के वश होरहा था रानी को बिना इच्छा के आलिंगन किया, जिसके करते ही रानी का शरीर लोहे के पिंडे के समान जलने लगा जिससे राजा का शरीर तप्त होगया इस हेतु राजा ने रानी को छोड़ दिया। उस समय रानी ने विनय की कि मुझे बालपन में दुर्वासा मुनि ने उपरोक्त पञ्चाक्षरी मंत्र का उपदेश किया था जिसके कारण मेरा शरीर निष्पाप होगया तब से मंत्रहीन और पापी पुरुष मुझे स्पर्श नहीं कर सकते। आप रजोगुणी हैं, मदिरापान और वेश्याओं का सेवन करते हैं, स्नान, संध्या, मंत्र का जप, शिव का आराधन आप कभी नहीं करते फिर हमारे आलिंगन की इच्छा क्यों करते हो। तब राजा ने कहा कि शिव के उस मन्त्र का मुझको भी उपदेश कर। रानी ने उत्तर में निवेदन किया कि स्त्री का गुरु पति होता है इसलिये मैं आपको मन्त्र का उपदेश नहीं कर सकती इसलिये आप अपने कुलगुरु के पास चलो। दोनों गर्ग मुनि के पास गये और सब वृत्तांत कहा तब गर्गमुनि दोनों को यमुना के तट पर लेगये। वहां एक उत्तम वृक्ष के नीचे बैठे। फिर यमुना में स्नान करा शिवपञ्चाक्षरी मन्त्र का जप किया उस मन्त्र के प्रभाव से गर्गमुनि के हाथ के स्पर्श से राजा के देह से करोड़ों काक जिनके पङ्ख जल रहे थे और बुरी भांति चिल्लाते हुए भूमि पर गिरने लगे और वहीं भी भस्म होने लगे, यह देख राजा, रानी को संदेह हुआ तब मुनि ने कहा कि शिवपञ्चाक्षरी मन्त्र तेरे हृदय में जाते ही अनेक जन्मों के पाप काकरूप होकर निकले और भस्म हुए, करोड़ों ब्रह्महत्या, अगम्यागमन, सुवर्ण की चोरी, भ्रूणहत्यादि लाखों पाप जो अनेक जन्मों के इकट्ठे होरहे थे वे सब शैवपञ्चाक्षरी मन्त्र के धारण करनेसे दूर होजाते हैं। हे राजा! ये तेरे करोड़ों जन्मोंके पाप दग्ध होगये।

इस मन्त्र के विषय में शिवपुराण धर्म संहिता अध्याय ५ में लिखा है कि जब महादेवजी ने शुक्राचार्य को पेट में धर लिया तब उन्होंने (ओं नमः शिवः) को ही जप कर शिव के उदर से लिंगमार्ग द्वारा निकल पड़े थे।

इमं मन्त्रवरं जप्त्वा शुक्रो जठरपञ्जरात्।
निष्क्रान्तो लिंगमार्गेण शम्भोः शुक्रमिवोत्कटम्॥ ११॥

धर्म संहिता अध्याय ३५ में लिखा है कि यह शिव का परम मंत्र सम्पूर्ण अर्थ साधक है, यह परमोक्ष, परशुद्धि, परधर्म और परम विभुरूप है।

इससे ब्रह्महत्यादि पाप, अगम्या में गमन करना, मद्यपान, सुवर्णकी चोरी, गर्भ-हत्या, गुरुभार्यामें गमन करना, विश्वासी मित्रको मारना, गुरु और पिताका मारने वाला, माता, स्त्री तथा गुरुवध के जो पाप हैं यह सब इस मन्त्रराज के स्मर्ण से ही भस्म होजाते हैं।

जो सैकड़ों, हज़ारों अद्भुत पाप हैं वह इस षडक्षरमन्त्र को सौवार जप कर शिव के मस्तक पर फूल धरे तो दूर होते हैं।

वह साधक करोड़ मन्त्र के अर्जन के पुण्यफल को पाता है जो तीनों सन्ध्याओं में सौ सौवार इस मन्त्र को यत्न से जपता है। वह संपुट अवरोहण को प्राप्त होकर फिर मृत्यु के वशीभूत नहीं होता। ललाट, मुख, हृदय, नाभि गुह्य में, बाहु हाथ के पार्श्वभाग में, पीठ, जानु, आँखमें, गुल्फ और चरण में, सृष्टिन्यास के क्रम से देहन्यास कर इस मन्त्र को स्मरण करे वह करोड़ों जन्म के सैकड़ों पापों से छूट जाता है। वज्र, ओले, महावर्षा, चोर और व्याघ्रादि के भय में तथा दूसरी व्याधियों में ज्वर कुष्ठ के भय में जिनसे दुःख हो उनसब रोगोंसे छूटजाता है। जो इसका जप करता है वह संग्राममें जय और अतुल सौभाग्य को पाता है ॥ ४३ ॥

रोगैर्विमुच्यते सर्वैर्येभ्यो दुःखमिहागतम्
संग्रामे जयमाप्नोति सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥४३ ॥

साधक दिन रात मानसी जप करें। सब अवस्था में इसका जप करने से सिद्धि को प्राप्त होजाता है। तीनों कालों में भार्या के सहित मृत्युञ्जय यंत्रारूढ़ होकर साधक न उपवास, न मौन, न ब्रह्मचर्य, न आस्तिका में प्रयत्न करे किंतु इसी मन्त्र के सहित सब कार्य में आरूढ़ हो तो सिद्ध होजाता है।

नोपवासं न मौनं च ब्रह्मचर्यं न चास्तिकम् ॥ ४५ ॥
सर्वकर्मप्रवृत्तस्तु सिद्ध्यत्येव न संशयः ॥ ४६ ॥

धनके नाश न होने और नाश हुए के प्राप्त होने का सरल उपाय।

मत्स्यपुराण अध्याय ४२ में लिखा है कृतिवीर्य के पुत्र का नाम सहस्रबाहु था। जिसने अपने धनुषबाण से ही समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वी को विजय कर लिया था। जो मनुष्य प्रातःकाल सहस्रबाहु राजा का नाम लेगा उसके धनका कभी

नाश नहीं होगा और पाया हुआ धन मिल जाता है और जो कोई पवित्र होकर यथार्थरीति से इसके जन्म की कथा को वर्णन करेगा वह स्वर्गलोक को प्राप्त होगा।

यस्तस्यकीर्तयेन्नाम कल्पमुत्थाय मानवः।
न तस्य वित्तनाशः स्यान्नष्टञ्च लभते पुनः॥
कार्तवीर्य्यस्य यो जन्म कथयेदिह धीमतः।
यथावत् स्विष्ट पूतात्मा स्वर्गलोकेमहीयते ॥५२॥

लक्ष्मी के मिलने, कारागार से छूटने और शत्रुओं के मारने आदि का सरल उपाय।

शिवपुराण—ज्ञानसंहिता अध्याय २९ में लिखा है कि जिसको लक्ष्मी की इच्छा हो वह शंकर पर एक लाख शंखपुष्पी के पुष्पों को चढ़ावे। इतनी पूजा से कारागार से छूट जाता है और राज्य की इच्छा वाले पुरुष को पार्थिव पूजा करना चाहिये। और दसकरोड़ पुष्पोंसे शिवजी संतुष्ट होजाते हैं। जिसकी प्रधान होने की इच्छा हो पांच करोड़ से पूजा करे। रोग से मुक्त होने वाला पचास हजार और कन्याकी इच्छावाला पच्चीस हज़ार से। विद्या चाहनेवाला साढ़े बारह हज़ार से और शत्रु संकट होने पर दस सहस्रसे और शत्रुउच्चाटन के लिये भी इतनी ही। मारनमें चार लाख और मोहन में दो लाख। अधिपति के जप करने में कोटि पूजा और राजों के वशीकरण में दस सहस्र और यश के निमित्त भी प्रेम से पूजा करनी उचित है। वाहन की प्राप्ति के लिये सहस्र लिंगका पूजन करना और मुक्ति की इच्छा हो तो पाँच करोड़ शिवलिंगका पूजन और ज्ञान की इच्छा वाला एक करोड़ और शिवदर्शन की इच्छा वाला पचास लाख शिवका पूजन करे। आयु की इच्छा वाला दूर्वा से। पुत्र की कामना वाला धतूरे से। अगस्त के फूलों से यश और तुलसी का पूजन करे तो भक्ति मुक्ति की प्राप्ति होती है। आक के फूल की पूजा शत्रुओं को मृत्यु देने वाली है। कनेर के फूल रोगनाशक। आभूषण की इच्छा होतो दुपहरिया के फूलों से। वाहन के लिये जाई और अलसी के फूलों के पूजने से विष्णु का प्यारा होता है। शमीपत्र से पूजे तो मुक्त होता है। चमेली के पुष्पों की पूजा करने वालों के घरमें धानों का अभाव नहीं होता। कर्णिकार से पूजे तो वस्त्रोंकी सम्पत्ति और

निर्गुण्डी के फूलों से पूजन करने में निर्मल मन होता है। तिल के फूल चढ़ाने से मुक्ति, काली राई के फूल शत्रुओं को मारने वाले हैं।

धर्मसंहिता अध्याय २८ में लिखा है कि जिस प्रकार दही में घृत, पर्वतों में हिमालय इसी भाँति यह सब स्तोत्रों का स्तवराज है। जो कोई शिव के एक सहस्र और आठ नाम का पाठ करता है उसको परमसिद्धि मिलती है।

धान्य फल।

चावल चढ़ाने से लक्ष्मी। एक लक्ष तिल चढ़ाने से हित होता है। यव-पूजा से स्वर्गसुख बढ़ता है। लक्ष गेहूँ चढ़ाने से सन्तान बढ़ती है। मूंग से पूजन करने से सुख, लक्ष उर्द से पूजन करे तो रोग नाश होता है। शत्रु के मारने के निमित्त एक लाख राई और एक लाख सरसों से शत्रु की मृत्यु होती है, मिरच से भी शत्रु का नाश होता है।

धारा फल।

जल धारा ज्वर शान्ताय-सन्तान के लिये घृत धारा इसी से प्रमेह रोग की शांति होती है। नपुंसकरोग भी जाता है। बुद्धि की जड़ता के दूर करने के लिये दुग्ध धारा। शत्रुओं को दुःख देने के निमित्त तैल धारा। सुगंधित तैल-धारा से भोग की वृद्धि होती है। सरसों के तैल की धारा से शत्रु का नाश हो जाता है। शहत की धारा राजयक्ष्मा रोग नाश करती है। गन्ने के रस की धारा सब दुःख के हरने वाली है। गङ्गाजल की धारा से मुक्ति मिलती है।

पद्मपुराण सप्तम क्रियायोगसार अध्याय १२ से विष्णु भगवान्‌की फूलोंसे पूजाका फल

जो पुरुष चैत्र में टेसू के फूलों से पूजा करता है उसका यमराज नाम नहीं लेता। तिल के फूलों से पूजा करने वाले का पृथ्वी में फिर जन्म नहीं होता। अशोक के फूलों से पूजा करने वाला आपदा में नहीं पड़ता। जो शाण्डिल्या के अखण्ड पत्रों और धतूरा और मदार के फूलों से पूजन करता है वह संसाररूपी समुद्र से पार होजाता है। जो विष्णु को उत्तम केले के फल देता है उसकी इन्द्रादिक सब देवता दिन रात वन्दना करते हैं। गोपालरूपी विष्णु को जो चैत्र के महीने में गेहूँ का पिष्टक देता है वह सब पापों से छूट जाता है। जो वैशाख में यवअन्न को देता है उसका फल कोई पंडित नहीं कह सकता क्योंकि इसका फल नाशरहित है। जो कार्त्तिक में कमल के पत्तों से नहीं पूजता उसके जन्म २ में लक्ष्मी घर में स्थित नहीं रहती। जो कमल के बीज भेट

करता है वह प्रत्येक जन्म में शुद्ध ब्राह्मण के कुल में उत्पन्न होता है फिर वह चारों वेदों का मित्र, धनवान्, बहुत पुत्र वाला, कुटुम्बों का पालन करने वाला होता है। जैमिनि कमल के फूल के समान फूल नहीं है जिससे गोविन्दजी का पूजन कर पापी भी मोक्ष पाता है। जो एक ही कमल भगवान् को देता है उसका भयदायक संसार में जन्म नहीं होता।

चम्पाके फूलोंका फल।

जितने चम्पा के फूल भगवान् को दिये जाते हैं उतने हज़ार युग देनेवाला विष्णुजी के मन्दिर में स्थित होता है।।

सुमेरु पर्वत के समान सोना देकर जो फल होता है वह एक ही चम्पा के फूल से भगवान् का पूजन कर होता है।

जिसने चम्पा के फूलों से विष्णुजी का आराधन नहीं किया वह रत्न और सुवर्ण आदि से जन्म २ में हीन होता है।

पद्मपुराण ब्रह्मखण्ड अध्याय ३ में लिखा है कि अगस्त के फूलों से जो पूजन करता है वह देवताओं के दुर्लभ मोक्ष को पाता है। जो घी से युक्त सुन्दर रस को भगवान् को देता है वह सब पापों से छूट भगवान् के स्थान को जाता है जो कार्तिकमें आकाश में दीप देता है वह ब्रह्महत्यादिक पापोंसे छूटजाता है।

इतिहास।

एक समय में एक ब्राह्मण हरिजी को घी से पूर्ण दीपक दे घरको गया वहां घी खाने के लिये एक मूसा आया जब तक वह खाने का आरम्भ करना चाहता था तब दीपक अधिक जलने लगा तब अग्नि के डरके कारण वह भागा भगवान् की कृपा से उसके सब पाप नष्ट हो गये। फिर सांपने खालिया वह मर गया यमके दूत आये और यमपुर लेजाना चाहते थे इतने में विष्णु के दूत आये उन्होंने कहा कि इसको छोड़ दो यह विष्णुलोक जायगा तब उन दूतों ने पूंछा कौन पुण्य है यह तो महापापी है तब विष्णु के दूतों ने कहा कि इसने वासुदेव के आगे दीपक को प्रज्वलित किया है उसी पुण्य से विष्णुलोक को लिये जाते हैं जो बिना इच्छा के भी विष्णु के दीपक को प्रज्वलित करता वह करोड़ जन्मों के इकट्ठे किये पापों को छोड़कर भगवान् के स्थान को जाता है जो भक्ति से कार्त्तिक के दिनों में भगवान् को दीप देता है उसके पुण्य को हरिके बिना कोई नहीं कह सकता-यह सुनकर यमराजदूत चले गये।

सर्वहत्यामोक्षप्रायश्चित्त।

लिङ्गपुराण अध्याय ९५ में कहा है कि अघोरेभ्यो घोरेभ्यः इत्यादि

हमारा यह मन्त्र एक लाख जपने से ब्रह्महत्या दूर होती है उसमें आधा जप करने से वाचिक पाप उससे आधा मानस और चारगुणा करने से क्रोध करके किये सब पातक उपपातक दूर होते हैं। लक्ष जप करने से मातृहत्या दूर होती है—गौ हत्या, कृतघ्नता, स्त्रीघातक और भी अनेक पापों से युक्त मनुष्य दशहज़ार जप करने से निष्पाप हो जाते हैं।

गोघ्नश्चैव कृतघ्नश्च स्त्रीघ्नः पापयुतो नरः।
आयुता घोरमभ्यस्य मुच्यते नात्र संशयः ॥९॥

पैष्टी सुरा पीनेवाला लक्ष जप करने से। वारुणी पीनेवाला पचास हज़ार जप कर और बिना स्नान किये भोजन करने वाला भी एक सहस्र जप करके शुद्ध होता है। ब्राह्मण का धन हरने वाला, सुवर्ण चुराने वाला, दश-लक्ष जप करके शुद्ध होता है। गुरु की स्त्री से गमन करने वाला, ब्राह्मण को वध करने वाला भी दस लक्ष में और पापी पुरुषों के संसर्ग से जो पाप होते हैं वह पाप दस हज़ार के जप से जाते हैं।

गुरुतल्परतो वापि मातृघ्नो व नराधमः।
ब्रह्मघ्नश्च जपेदेवं मानसं वै पितामह ॥१३॥
सम्पर्कात् पापिनां पापं तत्समं परिभाषितम्।
तथाप्यमुत्र कालेण पातकाद्वै प्रमुच्यते ॥१४॥

बड़े पातक की निवृत्ति के लिये लक्ष अथवा चार लक्ष या आठ लक्ष वाचिक जप। महापातक से आधा जप। उपपातक दूर करने के अर्थ और बिना जाने किये पाप दूर होने को उपपातक के जप से आधा जप करें।

संसर्गात् पातकी लक्षं जपेद्वै मानसं धिया।
उपांशु मष्टतुर्द्धा वै वाचिकश्चाष्टधा जपेत् ॥१५॥
पातकादर्द्धमेवस्यादुपपातकिनां स्मृतम्।
तदर्द्धं केवले पापे नाल कार्य्यविचारणा ॥१६॥

राजाको छोड़कर अन्य शत्रुओं पर विजय पाने का उपाय।

लिंगपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय पचास में लिखा है। कोई मनुष्य जब अपने मारने को आवे तो उसके लिये यह विधान करना चाहिये ब्राह्मण पर यह प्रयोग कभी न करे जब शत्रु अपने को दबाले और अधर्म युद्ध होने लगे तब राजा इस विधान को करावे तो बहुत शीघ्र शत्रु निग्रह हो जाय परन्तु इस प्रयोग को क्रूर-

स्वभाव अर्थात् दयाहीन, ब्राह्मण द्वारा करावे प्रयोग करने वाला ब्राह्मण प्रथम एक लाख जप अघोर मंत्र का कर तिलों का दशांश हवन करे और अघोर मन्त्र करके एक लक्ष श्वेत पुष्प भी महादेव पर चढ़ावे तब उसको मन्त्रसिद्धि होती है उसका किया विधान भी सफल होता है। बाणलिंग अग्नि अथवा दक्षिणमूर्ति शिवपर लवपुष्प अर्पण करे इस प्रकार सिद्धमन्त्र और शिवभक्त ब्राह्मण प्रेत स्थान में अथवा मातृका स्थान में बैठे अपने राजाके कल्याणके अर्थ इस विधिको करे पूर्व से ईशान पर्यन्त आठों दिशाओं में आठ त्रिशूल गाड़कर अति भयंकर वेषधार मध्यमें बैठे और सबके नाश करनेहारे अघोर परमेश्वरका ध्यान करे और अपने रूपको भी करोड़ प्रलयाग्नि के समान प्रकाशमान ध्यावे और अघोर परमेश्वर की आठों भुजाओं में त्रिशूल, कपाल, पाश, दंड, धनुष, बाण, डमरू और खड्गका ध्यान करे और यह भी ध्यावे कि जिनका कंठ नील वर्ण दृष्टि अति क्रूर मुख बड़ी दंष्ट्राओं से अति भयानक, तीन नेत्र, हुँ फट्कार के शब्दसे दशों दिशा भर रही है नाग पाश करके मुकुट बांध रखता है वृश्चिक और सर्पों के भूषण पहिने हैं नीलांजनके पर्वतके समान जिनका वर्ण, चिताकी भस्म शरीर पर लपेट, सिंहका चर्म ओढ़े हाथीका चर्म पहिने भूतप्रेत पिशाच और डाकिनियोंसे चारों ओर वेष्टित है,इस भांति अतिभयंकर अघोर परमेश्वरका ध्यान कर उच्छ्वास मात्र करके प्राणायाम करे और महामुद्रा बाँध सब कर्म करे। प्रेतस्थान में पूर्वदिशा चारों दिशा और मध्य में पांच कुंड बनवाय चिताग्नि का स्थापन करे। मध्य के कुंड में सिद्धमन्त्र आचार्य और दशाओं के कुंडों पर चार साधक हवन करने बैठें और त्रिशूल चारों ओर गाड़ लेवें। बत्तीस अक्षरों से युक्त अघोर परमेश्वर का ध्यान कर बहेड़े के काष्ठ की द्वादशांगुल प्रमाण राजा के शत्रु की मूर्त्ति बनाय कुंड के नीचे उस मूर्त्ति को अति क्रोध से गाड़े उस मूर्त्ति का सिर नीचे और पाद ऊपर करे। तुषों सहित चिता की अग्नि को कुंडों में स्थापन कर प्रज्वलित करे और सर्प कंचुक, तुष, कपास के बीज एक रक्त और तेल का हवन करे परन्तु तेल अपने हाथसे बना लेवे कोल्हू कृष्ण-चतुर्दशी से अष्टमी पर्य्यन्त नित्य अष्टोत्तर शत हवन प्रज्वलित अग्नि में करे इस विधि के करने से राजा के सब शत्रु सकुटुम्ब यमलोक को जाते हैं। इसी मन्त्र से मनुष्यों का कपाल लेकर उसमें मनुष्यों के नख, केश, अंगार, सर्पका केंचुक तुष, पुराने वस्तु का टुकड़ा, राजमार्ग की धूल, घरमें झाड़ू की धूल विषयुक्त के दाँत, वृषके दांत, गौ के दांत, व्याघ्र के दांत और विडाल, नकुल और कृष्णमृग के दांत और शूकर की दंष्ट्रा स्थापन कर एकसौ आठ बार अघोर-मन्त्र से कपाल का अभिमंत्रण कर मृतक के वस्तु से वेष्टित करे और जब शत्रु को अष्टम सूर्य्य अथवा अष्टम चन्द्र आवे तब उस कपाल को शत्रु के देश नगर घर क्षेत्र अथवा स्मशान में गड़वा देवे तो उस स्थान और परिवार सहित

शत्रु का नाश होजाय राजा जिस समय युद्ध में जाने लगे उस समय आचार्य्य राजा के शत्रु की मूर्त्ति को अति उत्तम भूमि पर लिख वितान तोरण दर्भमाला आदि से उस स्थान को शोभित करे पीछे अघोर मन्त्र पढ़ अपने दहिने चरण से शत्रु की प्रतिमा के मस्तक में क्रोध से ताडन करे। इस विधि के करने से राजा के शत्रु का नाश हो जाता है। परन्तु जो दुर्बुद्धि ब्राह्मण क्रोध से अपने देश के राजा पर यह अभिचार कर्म करे वह अपना और कुटुम्ब का नाश करता है इस कारण मन्त्र औषधि आदि से अपने देश के राजा की भली भाँति रक्षा करे।

अग्नि पुराण के अध्याय १४२ में युद्ध विजय के अर्थ लिखा है कि निम्न लिखित मन्त्र के जप करने से विजय होती है शस्त्र चलाने की आवश्यकता नहीं, किंतु मन्त्र द्वारा ही सिद्धि हो जाती है।

"ओं नमो भगवति! वज्र शृङ्खले! हन २ ओं भक्ष २ ओं खाद २ ओं अरे रक्तपिब कपालेन रक्ताक्षि! रक्त पटे! भस्मालिप्त शरीरे! वज्रयुधे! वज्रप्राकारनि चिते! पूर्वदिशं बंध २ ओं दक्षिणां दिशं बन्ध २ ओं पश्चिमां दिशं बन्ध २ ओं नागान् बन्ध २ नागपत्नी बन्ध २ ओं असुरान् बन्ध २ ओं यक्षराक्षसपिशाचान् बन्ध २ ओं प्रेतभूतगन्धर्वादयोयेकेचि-दुपद्रवास्तेभ्यो रक्ष २ ओं ऊर्द्ध रक्ष २ अधो २ ओं क्षुरिकं बन्ध २ ओं ज्वल महाबले! घटि २ ओं मोटि २ सटावलि वज्राग्नि वज्र-प्रकारे! हुंफट् ह्रीं हं श्रीं फट् ह्रीं हः फूं फें फः सर्वग्रहेभ्यः सर्वव्या-धिभ्यः सर्वदुष्टोपद्रवेभ्यो ह्रीं अशेषेभ्यो रक्ष २॥"

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ८० में लिखा है कि बहुत मन्त्र और बहुत व्रतों से क्या है (ॐ नमोनारायणाय) यह मन्त्र सब अर्थों का साधन करने वाला है।

किंतेन मंत्रैर्बहुभिः किंतेन बहुभिर्व्रतैः।
ॐ नमोनारायणायेति मंत्रः सर्वार्थसाधकः॥१०३॥

पद्मपुराण सप्तम क्रियायोगसार अध्याय १५ में लिखा है कि राम ये दो अक्षर सब मन्त्रों से अधिक हैं जिनके उच्चारण मात्र ही से पापी श्रेष्ठ गति को प्राप्त होता है।

रामेत्यक्षरयुग्मंहि सर्वमंत्राधिकं द्विजः।

यदुच्चारणमात्रेण पापीयाति परांगतिम् ॥८८॥

चतुर्थ पातालखंड अध्याय ८० में लिखा है कि नाना प्रकार के अपराधों से युक्त भी प्राणी हो उसको चाहिये कि राम, कृष्णादि नामों का स्मरण करता रहे क्योंकि कलियुग में तरने के दो उपाय मुख्य हैं एक गंगा स्नान करना व दूसरा हरिका नाम लेना क्योंकि हज़ारों हत्यायें सहस्रों उग्र पाप व कोटि गुरु की स्त्रियों के संग सम्भोग चोरी करना ऐसा ही और भी बड़े छोटे पाप भी हरि के प्रियगोविन्द इस नाम से दूर हो जाते हैं ॥१२॥

हत्यायुतं पापसहस्रमुग्रं गुर्वंगना कोटि निषेवणं च।

स्तेयान्यथान्यानि हरेः प्रियेण गोविन्दनाम्नान च संति भद्र ॥१२॥

अध्याय ८७ में लिखा है कि गोविंद का नाम ब्याज से भी निकले त निस्संदेह पापों को भस्म कर देता है। दश सहस्र हत्या व सहस्र बड़े पाप व एक नहीं कोटि गुरु-स्त्रियों के संग भोग करना अनेक प्रकार की चोरियां गोविन्द के प्रिय नाम के उच्चारण से तुरन्त नष्ट हो जाते हैं ॥ २३ ॥ २३ ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय १३२ में लिखा है कि अजामिल अपने धर्म को छोड़ कर पाप ही करता था परन्तु अन्त समय में नारायण पुत्र को स्मरण कर निश्चय मुक्ति को प्राप्त हो गया ॥४२॥

स्तोत्र माहात्म्य।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ७१ में लिखा है कि एक समय नारदमुनि ब्रह्मा के दर्शन के लिये मेरु पर्वत पर गये और उनसे कहा कि नाश रहित भगवान् के नाम की महिमा वर्णन कीजिये। तब ब्रह्मा ने कहा कि सब को झूठ जान कर हरि के नाम जपे तो सब पापों से छूट विष्णु पद को प्राप्त होता है ॥११॥

मिथ्याज्ञात्वा ततः सर्वं हरेर्नाम पठन् जपन् ॥

सर्वपापविनिर्मुक्तो याति विष्णोः परं पदम् ॥११॥

नाम उच्चारण से भारी पाप छूट जाते हैं। जो राम २ यह बारंबार कहे तो चाण्डाल भी हो तो निस्संदेह पवित्रात्मा हो जावे।

सच्चाण्डालोपि पूतात्मा जायते नाऽत्र संशयः ॥२१॥

कुरुक्षेत्र, काशी, गया, द्वारिका ये सब तीर्थ नाम के उच्चारण मात्र से ही उसने कर लिये और जो कृष्ण २ यह जपे वा पढ़े तो इस लोक को छोड़ कर वह विष्णु जी के समीप आनन्द करे और आनन्द से प्रसिद्ध यह सदैव जपे वा पढ़े तो कलियुग में वह भगवान् का भक्त मनुष्य महा पापों से छूट जावे। सत्युग में ध्यान, त्रेता में यज्ञ, द्वापर में पूजा करने से जो फल मिलता है वही कलियुग में नाम लेने से। इसी प्रकार मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कलङ्की दश अवतार इनके नाम मात्र लेने से सदा ब्राह्मण का मारने वाला शुद्ध हो जाता है और सवेरे विष्णु का नाम जपने से निस्संदेह वह नारायण ही हो जाता है।

प्रातः पठन् जपन् ध्यायन् विष्णोर्नाम यथा तथा।
मुच्यते नात्र संदेहः स्वयं नारायणो भवेत् ॥७८॥

इससे अधिक मैं नहीं जानता जो अधिक सुनने की इच्छा हो तो कैलाश पर जाओ जो सब भक्तों में विष्णु के श्रेष्ठ भक्त हैं। नारद वहां गये दंडवत कर पास बैठे तो उन्होंने कहा कि कलियुग में मनुष्य थोड़ी उमर होकर अधर्म में नित्य रत रहते हैं। नाम में उनकी निष्ठा नहीं होती। ब्राह्मण पाखण्डी अधर्म में सदा रत, संध्या से हीन, व्रतों से भ्रष्ट, दुष्ट मलीन रूप रहते हैं। इसी प्रकार क्षत्री, वैश्य, शूद्र द्विजों से बाहर हैं जो कलियुग में धर्म अधर्म को नहीं जानते इसलिये नाम का माहात्म्य आपसे सुनने को आया हूं यह सुन प्रसन्न हो महादेव जी बोले कि विष्णु के हजार नाम गोप्य हैं जिसको सुन मनुष्य दुर्गतिको नहीं प्राप्त होतेहैं। हे नारद! एकबार पार्वतीजीने पूछा था तुम क्या जपते हो भस्म रमाये, जटा रखाये, मृगछाला विछाये क्यों रहते हो तुम सब देवों के देव हमारे स्वामी संसार के नाथ हो उस समय जो कुछ पार्वती से कहा था वही कहता हूं महादेव बोले। वह साक्षात् पिता सदा के बन्धु भगवान् हैं हम सदा भक्त वे हमारे स्वामी हैं। फिर वह विष्णु के सहस्र नाम सुनकर नैमिषारण्य तीर्थ पर गये जहां बहुत से ऋषि थे उन सबने आदर सत्कार कर कहा कि तुम्हारे प्रताप से हमने पुराण सुने अब बताइये कि सब पापों का किस भाँति नाश हो।

त्वत्प्रसादाच्च देवेश! पुराणानि श्रुतानि च।
ब्रह्मन्केनप्रकारेण सर्वपापं क्षयो भवेत् ॥८२॥

दान तपस्या तीर्थ तप यज्ञ ध्यान इन्द्रियनिग्रह शास्त्रसमूहों के बिना कैसे मुक्ति मिले।

विना दानेन तपसा विना तीर्थतपो मखैः ।
विना दानैर्विना ध्यानैर्विना चेंद्रियनिग्रहैः ॥
विना शास्त्रसमूहैश्च कथमुक्तिरवाप्यते ॥८३॥

तब नारदजी ने उपरोक्त वृत्तांत सब कहा तब महादेव जी ने पार्वती से कहा कि वेद, पुराण के जानने वाले काशी आदि तीर्थों में स्नान करने वाले, गया श्राद्ध जप, तप, यम, नियम गुरुकी सेवा, वर्णाश्रम मुक्त से धर्म ज्ञान आदि करोड़ों जन्म के उत्तम चरित्रों से विष्णु सब ईश्वरों के ईश्वर पुराण पुरुषोत्तम सब भावों से आश्रित होकर श्रेष्ठ कल्याण को न प्राप्त होते थे और न मुझे तो भला मुझसा योगी ज्ञान वैराग से रहित ब्रह्मचर्य सेवन सब धर्मों को त्यागे हुए केवल विष्णुजी के नाममात्र के कहने वाले जिस गतिको सुखसे प्राप्त होते हैं उस को सब धर्म करने वाले नहीं प्राप्त होते ।

अनन्यगतयो मर्त्या भोगिनोपि परंतपे ।
ज्ञानवैराग्यरहिता ब्रह्मचर्यादिवर्जिता: ॥९८॥
सर्वधर्मोज्झिता विष्णोर्नाममात्रैकजल्पिन ।
सुखेनयां गतिंयांतिनतां सर्वेपि धार्मिकाः ॥९९॥

इतना कहकर महादेव जी ने मुख्य विष्णु महाराज के सहस्र नामों को वर्णन किया ।

अध्याय ७२ में लिखा है कि जम्बू दीप में पृथ्वी में जितने तीर्थ हैं वे सब तीर्थ विष्णुजी के सहस्र नाममें है ।

गंगा, यमुना, त्रिवेणी गोदावरी, सरस्वती नदी और सब तीर्थ वहीं पर वास करते हैं जहां पर विष्णुजी का सहस्र नाम स्थित है । १० ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय २० में लिखा है कि जिस स्तोत्र से राजा दशरथ ने शनैश्चर की स्तुति की उस स्तोत्र को जो मनुष्य एक या दो वार पढ़ेगा वह क्षण भरमें पीड़ा से छूट जावेगा ।

देवता-असुर-मनुष्य, सिद्ध विद्याधर राक्षस इनके जन्म बारहवें चौथे और आठवें स्थान में मैं प्राप्त हूंगा तो मृत्यु को दूंगा ।४२।

परन्तु जो फिर श्रद्धा से युक्त पवित्र और एकाग्रचित्त होकर शमी के पत्रों से लोहे की दूसरी मूर्ति को पूजन कर उन्हें तिल लोहा दक्षिणा सहित काली गौ और बैल को ब्राह्मण को विशेष कर शनिश्चर के दिन ही में दे और

स्तोत्र से पूजन जप करे तिनको मैं कभी पीड़ा नहीं करता ।४६।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय ७८ मे अपामार्जन स्तोत्र का वर्णन है जिसके लिये ७९ अध्याय में बहुत कुछ महिमा वर्णन की है। उसी में लिखा है कि यह स्तोत्र रोग और ग्रहोंसे पीड़ित बालकों को शांति देने वाला है। इसके पढ़ने से भूतग्रह विषनाश होजाता है।

वामनपुराण ४६ मे वेनस्तोत्र वर्णन किया है। इसके विषय में लिखा है कि जिस प्रकार सब देवताओं मे महादेव श्रेष्ठ हैं उसी भाँति सब स्तोत्रों में वेनस्तोत्र है जो यश-राज्य सुख ऐश्वर्य धन मान अर्थ और विद्या का देने वाला है। रोगसे दुःखित दीन चोर और राजा के भय से छूट जाते हैं और इसी स्तोत्र के प्रभाव से इसी देह करके श्रेष्ठ वर्ण को प्राप्त होजाता है। ११।

यथा सर्वेषु देवेषु विशिष्टो भगवाञ्छिवः ।
तथास्तवो वरिष्ठोऽयं स्तवानां वेननिर्मितः ॥७॥
राजकार्यविमुक्तो वा मुच्यते महतो भयात् ।
अनेनैवतु देहेन वर्णानां श्रेष्ठतां व्रजेत् ॥११॥

इस स्तोत्र के प्रताप से मन और वाणी से किये पाप सब नष्ट हो जाते हैं। १२।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ७२ में लिखा है जो रामरक्षा स्तोत्र का पाठ करते हैं वे पुण्यभागी होते हैं।

अध्याय ७६ में लिखा है आभ्युदयिक और और्ध्वदैहिक स्तोत्र का पाठ करते हैं तो ब्राह्मण का मारने वाला भी पापसे छूट जाता है।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय १५८ में लिखा है कि जो कोई आदित्य भास्कर, भानु, रवि, विश्वप्रकाशक, तीक्ष्णांशु, मार्तण्ड, सूर्य, प्रभाकर, विभावसु, सहस्राक्ष और पूषण इस प्रकार के इन बारह सूर्यों के नामों को जो बुद्धिमान् मनुष्य पढ़ता है वह धन, पुत्र और पौत्रों को प्राप्त होता है और जो एक एक नाम का आश्रय कर जो मनुष्य पृथ्वी में पूजन करता है वह सात जन्म तक धन से युक्त और वेद का पारगामी ब्राह्मण होता है-क्षत्रिय राज्य को, बनियाँ धनको और शूद्र भक्ति को प्राप्त होता है इससे इस श्रेष्ठ सूक्त का जपना योग्य है।

एकैकं नाम आश्रित्य योऽर्चयेत नरो भुवि ।
सप्तजन्मभवेद्विप्रो धनाढ्यो वेदपारगः ॥ १२ ॥

क्षत्रियो लभते राज्यं वैश्योधनमवाप्नुयात् ।
शूद्रो वै लभते भक्तिं तस्मात्सूक्तं परं जपेत् ॥ १३ ॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण ब्रह्मखंड अध्याय २ में कृष्णस्तोत्र के विषय में लिखा है कि जो उपरोक्त स्तोत्र को तीनों संध्याओं में पढ़ता व सुनता है उसके पापका नाश हो जाता है और पुत्रार्थी को पुत्र, भार्यार्थी को भार्या, जिसका राज्य जाता रहा हो उसको राज्य, धन जिसका नष्ट हुआ हो उसको धन, विपत्तियों से ग्रस्त को छुटकारा और रोगी को निरोगता तथा कैदी को नियमपूर्वक एक वर्ष तक सुनने से छुटकारा मिलता है ।

नारायणकृतं स्तोत्रं यः शृणोति समाहितः ।
त्रिसन्ध्यञ्च पठेन्नित्यं पापं तस्य न विद्यते ॥ १४ ॥
पुत्रार्थी लभते पुत्रं भार्यार्थी लभते प्रियान् ।
भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं धनंभ्रष्टधनो लभेत् ॥ १५ ॥
कारागारे विपद्ग्रस्तः स्तोत्रेण मुच्यते ध्रुवम् ।
रोगात्प्रमुच्यते रोगी वर्षंश्रुत्वा तु संयतम् ॥ १७ ॥

प्रिय पण्डितजी ! आपने सुना कि मन्दिर बनवाने, प्रतिमाप्रतिष्ठा कराने, प्रणाम करने, चरणामृत पीने, घृत-मधु आदि से स्नान कराने, पूजन करने, तुलसी, पीपल, आंवले इत्यादि के दर्शन करने से बड़े २ पाप अर्थात् ब्राह्मणों का द्रव्य चुराना, मित्रों का नाश करना, झूंठ बोलना, पराई स्त्रियों के साथ रति करना, मदिरा पीना इत्यादि नष्ट होजाते हैं । इसी प्रकार मन्त्र जपने और नाना प्रकार के फूल चढ़ाने, स्तोत्र पाठ करने से राज्य, धन, ऋतु इत्यादि कार्यों की सिद्धि होती है । फिर क्या कारण है कि भारत प्रतिदिन गिरता चला जाता है । इसके उपरान्त प्राचीनकाल में भी यह पुराण उपस्थित न थे और यदि थे तो बड़े २ पापियों को आधीन करने के लिये देवताओं ने क्यों नहीं अघोरेभ्यो० इत्यादि मन्त्रों और स्तोत्रों को पढ़ अपने कार्य्य की सिद्धि की ? रावण और कंस इत्यादि के मारने के लिये श्रीराम और श्रीकृष्ण महाराज को क्यों जन्म लेना पड़ा । अमृत का घड़ा दैत्यों से लेने के लिये मोहिनीरूप धरना पड़ा. मैं कहां तक आपको बताऊं जब २ देवतों पर भीड़ पड़ी तब २ ब्रह्मा, विष्णु, शिव इत्यादि के पास गये जिन्होंने उनके नाना प्रकार से काम किये जो पुराणों

से प्रकट हैं फिर मन्त्र स्तोत्र कहां रहे। इसके उपरांत नानारोग मन्त्रों के जपसे जाते रहते हैं तो परमात्मा ने औषधियों को क्यों बनाया। लक्ष्मणजी के शक्ति लगने पर श्रीरामचन्द्रजी ने सुषेण हकीम को क्यों बुलाया। हनुमान्जी को औषधि लेने को क्यों भेजा। जब बड़े २ पाप मूर्त्तिपूजादि से ही जाते हैं तो फिर पुराणों में धर्मपालन के लिये क्यों शिक्षा है श्रीकृष्ण और श्री रामचन्द्रजी महाराज ने धर्म के दश लक्षणों और योगादि की क्यों महिमा की। सदाचारादि के गुण क्यों गाये। इसके अतिरिक्त यदि विजय इन्हीं मन्त्रों इत्यादि बातों से प्राप्त होती थी तो राजा दशरथ इत्यादि ने पुत्रेष्टियज्ञ क्यों किये, और धनकी प्राप्ति के लिये पुरुषार्थ और व्योपार इत्यादि की क्या आवश्यकता। शत्रुओं पर विजय पाने के लिये श्रीरामजी ने लङ्का पर क्यों चढ़ाई की। महाभारत का घोर संग्राम क्यों हुआ। श्रीकृष्ण महाराज जरासन्ध के सन्मुख से क्यों भागे। सच तो यह है कि इन्हीं लटकों ने भारतवासियों को तमाम कर दिया। वेदों में उपदेश है कि विद्या और ब्रह्मचर्य तथा योगाभ्यास से शरीर और आत्मा के बलको वृद्धि कर याथातथ्य का विचार और उत्तम सत्संग में रह धर्म के दशों अङ्गों को पालनकर, पुरुषार्थ द्वारा धनादि पदार्थों का संग्रह करें।

जो पुरुष मन, वच, कर्म से कभी भी किसी प्रकार के पाप करने की इच्छा नहीं करता उसी को सर्व प्रकार के सुख और आनन्द मिलते हैं जैसा कि य० अ० ४० मं० ३ में कहा है।

असुर्य्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
तांस्तेप्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥ ३॥

जो मनुष्य मन वाणी, और कर्म से निष्कपट हो उत्तम आचरण करते हैं वे ही देव और आर्य्य हैं। वही जगत् को पवित्र करते हुये अतुल सुखों को भोगते हैं और जो इसके विपरीत कार्य्य करते हैं वे ही असुर, राक्षस, पिशाचादि हैं वह कभी अविद्यारूपी सागर से पार हो आनन्द नहीं प्राप्त कर सकते।

इसलिये पुराणों में भी लिखा है कि विना धर्म के कोई कार्य सिद्ध नहीं होता और यजन, तप, दान, इन्द्रियों का दमन, क्षमा, ब्रह्मचर्य्य, साधुओं का संग, उनकी सेवा, गुरुओं की टहल यह धर्म के द्वार हैं जैसाकि मत्स्यपुराण अध्याय २११ वा २१२ में लिखा है।

वामनपुराण अध्याय १४ में लिखा है कि अहिंसा, सत्य, चोरी का त्याग, दान, क्षमा, इन्द्रियों का दमन, शांति, कृपणता, शौच, तप, इन दश लक्षणों से युक्त धर्म का सबको सेवन करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय १६ में लिखा है कि यथार्थ बोलना, शुद्ध रहना, अन्य का दुःख सहन करना, क्रोध को रोकना, धनका देना, आनन्द से रहना, टेढ़ा न बोलना, मनको निश्चल रखना, बाह्य इन्द्रियों को रोकना, स्वधर्म त्याग न करना सब में समदृष्टि सा रखना, हानि लाभ में उदासीन रहना, सत्शास्त्रों का विचार करना, ईश्वर को मानना अर्थात् नास्तिक न होना, तृष्णा का त्याग संग्राम में उत्साह, प्रभाव, चतुराई स्मरण, स्वतन्त्र रहना, क्रिया करने में चतुर, स्वच्छ रहना, व्याकुल न होना, निष्ठुर न होना, बुद्धि का प्रकाश, विजयी रहना, उत्तम स्वभाव, सहनशक्ति, पराक्रम, देह में बल, गम्भीर रहना, चञ्चल न होना, सब में श्रद्धा, यशकार्यों को करना, सम्मान योग्य कार्यों को करना घमंड न करना, यह गुण और भी महागुण महत्व की इच्छा रखने वालों को करने योग्य हैं। और स्कंद ११ अध्याय १९ में कहा है हिंसा न करना, सत्यबोलना, मन से भी पराई वस्तु की चोरी न करना, किसी वस्तु पर आसक्त न होना, लज्जा धर्म में विश्वास, ब्रह्मचर्य, मौन, स्थैर्य, क्षमा, अभय यह बारह संयम. शौच, जप, होम, श्रद्धा, अतिथिसेवा, तीर्थयात्रा, परोपकार, संतोष और आचार्य की सेवा. इन नियमों को नित्य सेवन करे तो सब कार्य सिद्ध होजाते हैं। जैसा कि:—

अहिंसासत्यमस्तेयमसंगो ह्रीरसंचयः।
आस्तिक्यं ब्रह्मचर्यं च मौनं स्थैर्यं क्षमाऽभयम्॥३३॥
शौचं जपस्तपो होमः श्रद्धाऽऽतिथ्यं मदर्चनम्।
तीर्थाटनं परार्थेहा तुष्टिराचार्यसेवनम्॥ ३४ ॥
एते यमाः सनियमा उभयोर्द्वादशस्मृताः।
पुंसामुपासितास्तात यथा कामं दुहंति हि ॥ ३५ ॥

पद्मपुराण पातालखंड अध्याय ८४ में लिखा है कि जो मनुष्य भक्ति से परमात्मा की पूजा करते हैं वह मन, वच और कर्म से अहिंसा, सत्य, चोरी का त्याग, ब्रह्मचर्य, शुद्धता, स्वल्पभोजन करना, वेदों का पढ़ना, चुगली न करना आदि उत्तम व्रतों को धारण करते हैं उन्हीं को पुत्र, स्त्री, दीर्घायु, बल, राज्य, स्वर्ग, मोक्ष और अनेकान वांछित पदार्थ मिलते हैं।

श्रीमान् अब आप पर प्रकट हो गया कि उपरोक्त लेख स्वार्थियों ने अपने स्वार्थ साधन के अर्थ लिखे हैं इसलिये इन पर विचार कर वेदोक्त विधि से परमात्मा का ध्यान कीजिये। पुराणों में जहाँ तहाँ यह भी लिखा है कि हे धरणी इन पापात्मा पुरुषों की की हुई पूजा को ग्रहण नहीं करते।

पण्डितजी—बस सेठजी अब इस विषय को समाप्त कीजिये हमने इतने ही जान लिया ।

सेठजी—बहुत अच्छा—ओ३म् शम् ।

पण्डितजी आदि सब महाशय चल दिये ।

सेठजी—सब महाशयों को नमस्ते की ।

पण्डितजी—ने आशीर्वाद दिया अन्य सब महाशयों ने यथायोग्य कहा—सेठजी भी अपने गृह को चले गये ।

इति सप्तम परिच्छेदः



अष्टम परिच्छेदः ।

आर्यसेठ-नियत समय के व्यतीत होने पर और अन्य महाशयगणों में से बहुधा जनों के आजाने पर कहा कि आज श्रीमान् पंडितजी अभी तक नहीं पधारे क्या कारण ।

अन्य सज्जन महाशय—सेठजी साहिब कोई ऐसा ही कारण आगया होगा वरनह आज श्रीमान् कदापि न रुकते क्योंकि पंडितजी कल मार्ग में कहते थे पुराणों में कैसी २ बातें लिखी हैं जो बुद्धि में नहीं आतीं अब हमको अवतार विषय सुनने की बड़ी रुचि है इसलिये मैं कल शीघ्र आऊंगा आप सब सज्जन महाशय भी नियत समय पर अवश्य आजावें जिससे फिर कथा के आरम्भ में विलंब न हो ।

लाला जानकीप्रसाद सेठ—पधारे और यथायोग्य के पश्चात् कहा कि श्रीमान् पण्डितजी की माताजी के सिर में दर्द होता है इससे वह कुछ विलंब में आयेंगे ।

अन्य महाशय—इधर उधरकी बातें करने लगे आध घंटा व्यतीत होने के पश्चात् श्रीमान् पण्डितजी पधारे ।

सेठजी और अन्य सभ्य महाशयों ने—यथा योग्य कहा पण्डितजी ने सब सज्जनों को आशीर्वाद दिया और विराजमान हुए ।

पण्डितजी—ने कहा कि मेरी माताजी के शिर में पीड़ा होजाने के कारण मुझको विलंब होगया इसलिये आप क्षमा करें और सेठजी अब आप अवतार विषय में जो कुछ कहना चाहें संक्षेप से कहिये ।

सेठजी और महाशय—आपकी माताजी की पीड़ा परमेश्वर दूर कर आनंद देंगे ।

सेठजी—जो आपकी आज्ञा है मैं उसी का पालन करूंगा ।

श्रीमान्—परमात्मा न कभी कर्म करता है न जन्म लेता है-फिर उसकी पूजा कहां ! इस पर भी आपका यही विश्वास है तो सुन लीजिये । पुराण, एक स्वर होकर कह रहे हैं कि जब जब धर्म की हानि होती है तब २ भगवान् हरि आत्मा को प्रकट करते हैं ।

जैसा श्रीमद्भागवत स्कंद ६ अध्याय २४ में लिखा है-।

यदा यदाहि धर्मस्य क्षयोवृद्धिश्च पाप्मनः।
तदा तु भगवानीश आत्मानं सृजते हरिः ॥ ५६ ॥

वेसाही मार्कण्डेय पुराण अध्याय ४ में लिखा है।

श्रीमद्भागवत स्कंद १० अ० ३७ में नारदजी ने कहा है कि राक्षसोंके नाश के लिये धर्ममर्यादा की रक्षा के लिये अवतार लिया है।

सत्वं भूधर भूतानां दैत्य प्रथम रक्षसाम्।
अवतीर्णो विनाशाय सेतूनां रक्षणाय च ॥ १३ ॥

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अ० ५ में लिखा है कि जब विष्णु ने लिंग की पूजा की और शिव प्रसन्न हुए तब शंकर ने कहा कि तुम सब लोक में मान्य और पूज्य होगे और ब्रह्मा के बनाये जगत् में जिस समय दुःख हो उस समय तुम सब दुःखों के दूर करने में तत्पर हो और अनेक अवतारों को धारण करके उत्तम कीर्त्ति का विस्तार और संसार के उद्धार के लिये तुम लीला करो ॥ १५ । १६ । १७ ॥

तस्मात्त्वं सर्वलोकेषु मान्यः पूज्यो भविष्यसि।
ब्रह्मणा निर्मिते लोके यदा दुःख प्रजायते ॥ १५ ॥
तदा त्वं सर्वदुःखानां नाशनेतत्परो भव।
विविधानवतारांश्च गृहीत्वा कीर्त्तिमुत्तमाम् ॥ १६ ॥

पद्मपुराण पाताल खंड अध्याय २२ में लिखा है कि तुम्हारा जन्म कभी नहीं होता, न है। जगत्पते! कभी तुम्हारा अन्त नहीं होता है। या हे विभो वृद्धि, क्षय वा बन्धन तुम में नहीं हो तो भी भक्तों की रक्षा करने के लिये व धर्मरक्षा करने के लिये जन्मकर्म को करते हो ॥ ३१ । ३२ ॥

तव जन्म तु नास्त्येव नांतस्तव जगत्पते।
वृद्धिक्षयपरीणामास्त्वयि संत्येवनो विभो ॥ ३१ ॥
तथापि भक्तरक्षार्थं धर्मस्थापन हेतवे।
करोषि जन्मकर्माणि ह्यनुरूप गुणानि च ॥ ३२ ॥

श्रीमान् पंडितजी! यदि हम इस बात को मान भी लें कि भगवान् का जन्म बिना कर्म किये पापियों के मारने के लिये होता है तो क्या इस कल्प में

सृष्टि की आदि से आज तक संसार के सब भागों में इसी एक भारत में सम्पूर्ण पापी उत्पन्न हुए जिनके नाश करने के लिये यहां ही भगवान् के सब अवतार हुए। यदि आप विचार पूर्वक पुराणों का पाठ करें तो प्रत्यक्ष प्रकट होजाता है कि परमात्मा के अवतार धारण करने का कारण धर्मरक्षा के सिवाय ऋषियों के शाप आदि का कारण भी हैं देखिये।

देवीभागवत स्कंद ४ अ० १० में लिखा है कि जब शुक्र की माता ने कहा कि मैं अभी इंद्र सहित विष्णु को अपने तपोबल से भक्षण करे लेती हूँ तब विष्णु ने सुदर्शनचक्र से उसका सिर काट डाला तब भृगुजी ने कहा कि तुमने ब्राह्मणी को मार डाला है इसलिये जाओ तुम्हारे अवतार मृत्युलोक में बारम्बार हुआ करेंगे।

इसके उपरान्त पद्मपुराण द्वितीयखंड अ० १७ में लिखा है कि ब्रह्माजी महाराज पुष्कर क्षेत्र में यज्ञ कर रहे थे जहां विष्णु महादेव इत्यादि देवता भी उपस्थित थे जब यज्ञ का समय आया और सावित्रीजी को आने में देर हुई तब इंद्रने एक योग्य कन्या को (जो गुण कर्म में दूसरी लक्ष्मी थी) लाकर उनके सम्मुख खड़ी करदी जिसका विष्णुकी सम्मति से ब्रह्माने गान्धर्व-विवाह कर यज्ञका आरम्भ कर दिया इतने में सावित्रीजी आईं और सब व्यवहार को जान विष्णुजी को शाप दिया कि जाओ मृत्युलोक में भृगु के शाप से जो तुम्हारे अवतार होंगे उनमें एक अवतार में तुमको स्त्री का वियोग सहना पड़ेगा और बड़े क्लेश के पीछे स्त्री मिलेगी।

भार्यावियोगजं दुःखं तदा त्वं तत्र भोक्ष्यसे॥ १५२॥

श्रीमद्भागवत स्कंद १ व २ में नीचे लिखे अवतार लिखे हैं सुनिये।

स्कन्द प्रथम में पुरुष, २ वाराह, ३ नारद, ४ नारायण, ५ कपिल, ६ दत्तात्रेय, ७ यज्ञ, ८ ऋषभ, ९ पृथु, १० मत्स्य, ११ कूर्म, १२ धन्वन्तरि, १३ मोहिनी, १४ नृसिंह, १५ नृसिंह, १६ वामन, १७ परशुराम, १८ व्यास, १९ रामचन्द्र, २० श्रीकृष्ण, २१ बलदेव, २२ बुद्ध, २३ कल्कि,॥

द्वितीय स्कन्द में वाराह, २ यज्ञ, ३ कपिल, ४ दत्तात्रेय, ५ कुमार, ६ नारायण, ७ ध्रुव, ८ पृथु, ९ ऋषभ, १० हयग्रीव, ११ मत्स्य, १२ कूर्म, १३ नृसिंह, १४ हरि, १५ वामन, १६ हंस, १७ मनु, १८ धन्वन्तरि, १९ परशुराम, २० राम, २१ कृष्ण, २२ व्यास, २३ बुद्ध, २४ कल्कि॥

गरुड़पुराण अध्याय ८ श्लोक १० और ११ में लिखा है कि मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, तथा वामन, परशुराम, रामचन्द्र, बुद्ध और कल्कि यह दश

नाम पंडितों के सदा स्मरण करने योग्य हैं।

मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नारसिंहश्च वामनः।

रामो रामकृष्णश्च बुद्धः कल्की तथैव च ॥ १० ॥

एतानि दशनामानि स्मर्तव्यानि सदा बुधैः ॥ ११ ॥

ऐसा ही शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय ९ और वाराहपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ४ में लिखा है।

पंडितजी श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध में २२ और द्वितीय में २४ अवतार लिखे हैं अर्थात् पुरुष, नारद और मोहिनी अवतार नहीं लिखे इसी प्रकार प्रथम में कुमार, ध्रुव, हरी, हंस, और मनु पाँच अवतारों का वर्णन नहीं है, अब आप ही विचार लें कि एक ही व्यासजी जो स्वयं परमात्मा के अवतार और त्रिकालदर्शी इसके लिखने वाले फिर इस भेद का क्या कारण अब आप बतलाइये कि आप २२ मानेंगे वा २४। हमारी समझ में २७ अवतार मानने चाहियें परन्तु शोक है कि २७ अवतार कोई पौराणिक नहीं मानते इसके अतिरिक्त पंडितजी परमात्मा ने सबसे श्रेष्ठ योनि मनुष्य की बनाई परन्तु पुराणों के लेखानुसार जब स्वयं परमेश्वर ने अवतार लिये तो मनुष्य योनि के अन्य वाराह, मत्स्य, कूर्म योनियों में भी अवतार लिया। श्रीमहाराज सत्य तो यह है कि। "विनाशकालेविपरीतबुद्धिः" -

अर्थात् विनाशकाल आने पर बुद्धि उलटी हो जाती है जिसके कारण भली बुरी और बुरी भली जान पड़ती है जैसाकि सनातनधर्मी भाई इस समय निन्दा को स्तुति और स्तुति को निन्दा समझ कर कार्य कर रहे हैं और कराने की चेष्टा में लगे रहते हैं और यथार्थ का कुछ विचार नहीं करते।

देखिये श्रीमान् अवतार के अर्थ उतरने के हैं क्योंकि अवतार शब्द अव उपसर्ग पूर्वक "तृ" धातु से घञ् प्रत्यय करने से बनता है इसलिये जिन जिन मनुष्यों में विशेष गुण देखे उन्हीं को पौराणिक पंडितों ने अवतार मान लिया इसी कारण इनमें मतभेद है। श्रीमद्भागवत स्कन्द १ अध्याय ३ में यह भी लिखा है कि सतोगुणी हरि के असंख्य अवतार हैं जिस भाँति कि अगम्य जल वाले सरोवर से हज़ारों नदियां बहती हैं। जैसाकि—

अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सत्वनिधेर्द्विजाः।

यथाऽविदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः॥ २६ ॥

अब कहिये आप असंख्य अवतार मानेंगे या २२ या २४ वा दस इसके अतिरिक्त श्रीमद्भागवत स्कंद १ अ० ८ श्लोक ३० पर भी दृष्टि डालिये जो साफ़ २ कह रहा है कि विश्वात्मन् अकर्ता होने पर भी आपका आत्मा से कर्म करना और जन्मरहित होने पर भी आप वाराह, मत्स्यादि तिर्यङ् (नीच) योनियों में जन्म लेना तथा रामचन्द्र और वामन आदि का रूप धारण करना अत्यन्त आश्चर्य जनक और कथन मात्र है।

इस पर भी आप परमेश्वर के अवतार मानते हैं तो यह बतलाइये कि नारद महाराज किस प्रकार परमेश्वर के अवतार हैं, जब कि इनके पूर्व जन्म दासी पुत्र का वृत्तांत श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ५ में लिखा है।

अहं पुरातीत भवेऽभवे मुने दास्यास्तु कस्याश्चन वेदवादिनां॥२३॥

इसके उपरांत पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय २४१ में महादेवजी ने पार्वतीजी से कहा है कि श्रीराम और श्रीकृष्ण यह दोनों अवतार उपासना करने के योग्य हैं क्योंकि वह उत्तम गुणों से परिपूर्ण जिनकी ऋषियों ने भी उपासना की और जो मोक्ष के दाता हैं जैसा कि—

उपास्यौ भगवद्भक्तैर्विप्रमुख्यैर्महात्मभिः।
रामकृष्णावतारौ तु परिपूर्णौहि सद्गुणैः।
उपास्य मानावृषिभिरपवर्गप्रदौ नृणाम्। ८१॥

क्या पण्डित जी अन्य अवतार उपासना के योग्य नहीं। खैर, कुछ हो इसका भी न्याय आप ही कीजिये। अब हम आपको श्रीकृष्ण और श्रीरामचन्द्र के गुणों का संक्षेप कीर्तन सुनाते हैं जिस पर पौराणिक महाशय ईश्वर के अवतार ही मानते हैं—

तदन्तर कपिल, पृथु, दत्तात्रेय, व्यास, नारद, वामन, मोहनी, परशुराम और बलदेव जी महाराज के वृत्तांत अत्यंत संक्षेप से सुनाऊंगा। जिनके चरित्रों ने परमात्मा के गुणों में भी धब्बा लगा दिया और अवतारियों को देव पदवी से भी गिरा दिया तिस पर भी आप यही कहते हैं कि आर्य लोग अवतारों की निन्दा करते हैं इस लिये यह नास्तिक हैं। कृपा कर सुन लीजिये फिर न्याय कीजिये।

श्रीकृष्ण महाराज॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९६ में लिखा है कि कृष्ण और बलदेवजी विष्णु महाराज के एक काले बाल और एक श्वेत बाल के अवतार हैं जैसा कि-

तयोरेको बलदेवो बारवयोऽसौ श्वेतस्तस्य देवस्यकेशः कृष्णो द्वितीयः केशवः सम्बभूव] केशोयोऽसी वर्णतः कृष्ण उक्तः ॥३३॥

विष्णु पुराण अंश ५ अ० १ में पराशर जी कहते हैं कि जब देवताओं ने भगवान की स्तुति की तब इन्होंने एक सफेद दूसरा काला बाल उखाड़ कर उनसे कहा कि यह मेरे बाल भूमंडल पर अवतार लेकर भूमि का भार और पीड़ा दूर करेंगे। हे देवो, देवता के समान जो देवकी नाम वसुदेव की स्त्री है उसका आठवां गर्भ यही मेरा बाल होगा और वह पृथ्वी में अवतार लेकर कंस को मारेगा।

तस्यायमष्टमो गर्भो मत्केशो भवितासुराः ॥ ६३ ॥
अवतीर्य च तत्रायं कंसघातयिता भुवि ॥ ६४ ॥

विष्णुपुराण--अंश ५ के प्रथम अध्याय में लिखा है कि कृष्ण विष्णु महाराज के अंश का अंश है जैसा कि अंशांशावतारः'।

देवीभागवत—स्कंद ४ अध्याय १९ श्लोक ३४ में लिखा है कि यदुकुल में विष्णु अंशमात्र से वासुदेव का बेटा होगा। जैसा कि —

अंशेन भविता तत्र वसुदेव सुतो हरिः ॥३४ ॥

शिवपुराण—ज्ञानसंहिता अध्याय ६७ में शिवजी ने अर्जुन से कहा है कि कृष्ण मेरे ही अंश से उत्पन्न है वह तुम्हारा कार्य करेंगे।

कृष्णं च कथयिष्यामि साहाय्यान्ते करिष्यति।
सोवैममाँश भूतश्च सतं कार्यं करिष्यति॥

ऐसा ही ब्रह्मपुराण अध्याय ७२ श्लोक ५२में लिखा है वायुसंहिता अध्याय २५ में लिखा है कि श्रीकृष्ण ने स्वेच्छा से अवतार धारण किया था कारण कि वे सनातन वासुदेव हैं।

स्वेच्छाया ह्यवतीर्णोऽपि वासुदेवः सनातनः ॥५३॥

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण— कृष्ण जन्मखण्ड के अध्याय ४, ५, ६ और ७ से जान पड़ता है इन्हीं श्रीकृष्ण जी ने जिन्होंने ब्रह्मा, विष्णु और महेश को उत्पन्न किया, पृथ्वी का भार उतारने के लिये जो इन तीनों देवनों से नहीं हो सकता था मथुरा में देवकी और वसुदेव के यहाँ जन्म लिया कृष्ण जन्मखण्डके अ० ६ से ज्ञात होता है कि कृष्णअवतार का कारण राधिकाजी का स्नेह है जैसा कि—

तव हेतोर्गमिष्यामि कृत्वा कंसभयं छलम् ॥ २२६ ॥

प्रकृतिखण्ड अध्याय ३० में यम ने सावित्री से कहा है कि सब ईश्वरों के ईश्वर, सब कारणों के कारण सब के आदि स्वरूप सब की आत्माओं में वास करने वाले, सब देवताओं से पूजनीय श्रीकृष्ण ही हैं। वे माया से अनेक रूपों को धारण करते हैं। यथार्थ में वह निर्गुण हैं जो कोई इनका अन्य देवताओं के साथ सम ता करता है वह ब्रह्महत्या को पाता है। १५४। १५५॥

सर्वेश्वरेश्वरे कृष्णे सर्वकारणकारणे।
सर्वाद्ये सर्वदेवानां सेव्ये सर्वान्तरात्मनि ॥ १५४ ॥
माययाऽनेक रूपे वाप्येक एव हि निर्गुणे।
करोत्यन्येन समतां ब्रह्महत्यां लभेत्तु सः ॥ १५५ ॥

भगवत्गीता अध्याय ७ में कृष्ण महाराज ने कहा है कि मैं सम्पूर्ण जगत् का उत्पन्न करने वाला तथा नाश करने वाला हूँ। अयं अर्जुन! मुझसे परे अथवा बड़ा और कुछ नहीं है। यह सब जगत् मुझ में ऐसे वर्त्तमान है जैसे धागे में मणिसमूह।

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥
मत्तः परतरन्नान्यत्किञ्चिदस्ति धनंजय।
मयि सर्वमिदम्प्रोतं सूत्रेमणिगणाइव ॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द १ अध्याय ३ में लिखा है कि सब अंश कला अवतार हैं पर श्रीकृष्ण स्वयं भगवान हैं जैसा कि—

एतेचांशकलाः सर्वेः कृष्णास्तु भगवान् स्वयम् ॥

अब श्रीमान् इनके चरित्र जानने के लिये श्रीमद्भागवत स्कन्द १० पर दृष्टि डालिये क्योंकि इसी पुराण से महात्मा व्यास की शांति हुई थी।

(१) श्रीकृष्ण महाराज ने मिट्टी खाते समय अपनी माता को तीनों लोक अपने मुख में दिखलाये।

(२) गोपियों के दूध माखन चुरा २ कर खाना, कंस राजा के धोबी से कपड़ों को मांगना और जब उसने उनको न दिये तब उसको वहीं मार डालना फिर वस्त्र पहन कर किसी से माला चन्दन ले आप धारण करना।

(३) गोपियाँ श्रीकृष्ण को उपपति जार समझती थीं न कि पारब्रह्म। और उसी जार बुद्धि से परमात्मा को प्राप्त हुईं।

कृष्णां विदुः परं कान्तं न तु ब्रह्मणया मुने ॥ १२ ॥

तमेव परमात्मानं जारबुद्ध्यापि संगता ॥

स्कन्द १० अ० २८। ११ ॥

(४) जिस समय गोपियां जमुना स्नान को गईं तो कृष्ण महाराज उनके वस्त्र और चीर उठाकर कदम पर चढ़ गये और उनके मांगने पर भी वस्त्र न दिये फिर जलसे बाहर अपने सन्मुख खड़ा कर लिया फिर उनको वस्त्र दिये यह बात अभी तक प्रसिद्ध है और अभी तक यात्रियों को यह वृत्तांत सुनाया जाता है।

(५) अजगरों और राक्षसों को मारा, गोवर्द्धन को अंगुली पर उठाया, जरासिंध से १७ बार हार अठारहवीं बार द्वारिका भाग कर बचे फिर भीमसेन को साथ लेजाकर जरासिंध से मल्लयुद्ध कराकर उसको मरवाया।

(६) इसके उपरांत जब पाण्डव द्रोणाचार्य्य को न जीत सके तो कृष्ण महाराज ने युधिष्ठिर से झूठ बुलवाया कि आपका पुत्र मारा गया तब द्रोणाचार्य यह सुन मूर्छित हो गिर पड़े फिर कृष्ण और पांडवों ने उनको मार डाला।

(७) श्रीकृष्ण महाराज की १६००० रानियां लिखी हैं फिर प्रत्येक के दश सन्तान होना बतलाया है इस हिसाब से १ लाख ६० हज़ार पुत्र हुये जैसा कि-श्रीमद्भागवत पूर्वार्द्धस्कन्द १० अध्याय ६१ में लिखा है—

एकैकशस्ताः कृष्णस्य पुत्रान्दशदशाऽबलाः।

अजीजनन्ननवमान् पितुः सर्वात्म सम्पदा ॥ अ० ६१ ॥

पत्न्यस्तु षोडश सहस्रमनङ्गबाणैर्यस्येन्द्रियं विमथितुं करणै-र्नशेकः ॥

हरिवंशपुराण में १ लाख सन्तान लिखी है!

दशायुत समाख्याता वासुदेवस्य वै सुता ॥ अ० १०३ ॥

(८) अब पंडितजी महाराज और सुनिये शिवपुराण वायुसंहिता अ० १ में लिखा है कि श्रीकृष्ण महाराज ने एक वर्ष शिवका उग्रतप कर महेश्वर का दर्शन पाया जिससे उनके सब अमंगल दूर हो मायामय सब कर्म्म मिट गये और निर्मल हो गये तब पार्वती और महादेव के वर से साम्ब पुत्र को पाया।

तपश्चकारपुत्रार्थं साम्बमुद्दिश्य शंकरम् ।
तपसातेन वर्षान्ते दृष्ट्वादेवं महेश्वरम् ॥ २० ॥
साम्बंसगणमव्यग्रोलब्धवान्पुत्रमात्मनः ।
यस्मात्साम्बोमहादेवः प्रददौ पुत्रमात्मनः॥ २१ ॥

(६) शिवपुराण धर्मसंहिता अ० ८ में लिखा है कि जिस समय दैत्यों में मुख्य दैत्य युद्ध में निहत हुये तब विष्णु स्त्रियों को हरण कर पाताल में स्थित हो प्रसन्न हुये वही त्रेतामें रामरूप होकर जानकी को प्राप्त कर स्त्री के विलास धन और पुत्रोंसे तृप्त न हुये स्त्री सहित वनवासी होने के कारण कलियुग में फिर केशव ने जन्म ग्रहण किया जिन्होंने बाल्यावस्था में गोपियों के साथ विहार किया, उन्होंने गोपालों के दश सहस्र पुत्रों की उत्पत्ति की फिर युवावस्था को प्राप्त हो रुक्मिणी के साथ विवाह कर प्रद्युम्नादि पुत्रों को उत्पन्न किया फिर नरकासुर को मार सोलह हज़ार रानियों को हरण किया और उनसे रति फल भोगकर नब्बे सहस्र पुत्रों को उत्पन्न किया और इस प्रकार से स्त्रियों से तृप्ति न हुई तब रात्रि में धैर्य्यच्युत हो राधिका नामी स्त्री से विहार किया इस प्रकार से नित्य ही स्त्रीजनों से प्रेम किया।

सहस्राणि ससर्जाशु मत्स्येचाऽडमहाद्भुतम् ।
स्त्रीणां तथापि नो तृप्तो दिव्यनां तुरतैर्यदा ॥ ६८ ॥
तदा राधास्त्रियं कांचिन्निशिधैर्यो दधर्षयत् ।
तथापि परनारीणां लंपटो नित्यमेवहि ॥ ६६ ॥

(१) पद्मपुराण पंचमपातालखंड अध्याय ७४ में लिखा है कि अर्जुन ने कृष्ण महाराज से प्रार्थना की आप मुझको वह आनन्द दिखलाइये जो आज किसीने न देखा हो इस पर एक सरोवर में स्नान कराये वह स्त्री होगये फिर उन्होंने उसी रूपमें श्रीकृष्णजी और राधा को देख स्त्री रूपी महाराज अर्जुन कामवश होगये इस दशा को श्रीकृष्ण महाराज जान अर्जुन रूपी स्त्री का हाथ पकड़ वनको लेगये और जैसा चाहा वैसा विहार करते रहे यद्यपि वह योगी-

श्वर थे फिर उससे कहा कि पश्चिम वाले सरोवर में स्नान करो स्नान करतेही फिर अर्जुन होगये। इन उपरोक्त बातों को विचारिये।

रामावतार।

(१) वाल्मीकि रामायण में लिखा है रामजी का अवतार नारद मुनिके शापसे हुआ।

(२) जब रामचन्द्र महाराजने धनुष तोड़ा तब परशुरामजी आये और उनसे वार्तालाप हुआ परन्तु एकने दूसरे को जब कि दोनों अवतार थे नहीं पहचाना अन्त को जब उनके तरकस को श्रीराम ने चढ़ा दिया तब उनको श्रीराम का अवतार जान पड़ा।

(३) जब श्रीराम दंडक वन में गये तो उन्होंने अगस्त्य मुनिका स्थान सुतीक्ष्ण से पूंछकर जाना था।

(४) रावण की बहन शूर्पणखा रामसे विवाह करना चाहती थी तब उन्होंने कहा कि तू लक्ष्मणजी के पास चली जा उनका अभी विवाह नहीं हुआ परन्तु ब्रह्मवैवर्त्तपुराण से प्रकट होता है कि उनका विवाह होचुका था जब वह उनके पास गई तो फिर रामजी ने सेन देकर लक्ष्मण से उसके नाक कान कटवा लिये जिससे रावण और रामका वैर होगया।

(५) जब रावण के कहने पर मारीच हरिण बनकर आया तो रामजी ने उसको नहीं जाना।

(६) जब सीताका हरण होगया तो उन्होंने यह नहीं जाना कि रावण लेगया या कौन ? क्योंकि वह वन २ ढूंढ़ते हुये पम्पापुर पहुंचे जहां हनूमान से भेंट हुई जिसने सुग्रीव से मिलाया वहां उसने वैरी बालि को छलसे मारा।

(७) जब राम, लक्ष्मण, मारीच को मार करवापिस आये और वहां सीता को न देखा तो अत्यन्त शोक से संतप्त होकर रोदन किया॥ २६०॥

(८) जब सीता को ढूंढ़ते हुए श्रीराम लक्ष्मण गोदावरी पर पहुंचे तब उससे पूछते हुए कि हे प्रिय! तुम हमारी सीता को जानती हो जब वह न बोली तो उसको शाप दिया कि तुम्हारा जल रक्त होजावे तब वह मुनियों को साथ लेकर उनके पास गई जिन्होंने कहा कि यह आप के चरण कमलों से उत्पन्न हुई है शाप के योग्य नहीं है तब उसको शाप से मुक्त किया।

(९) देवी भागवत स्कन्द ३ अ० १९ में लिखा है कि रामजी जब वालि को मार कर एक वर्ष वहां रहे तब एक दिन राम ने लक्ष्मण से कहा कि विना

जानकी के हमारा जीवन अति ही दुर्लभ है और न उनके बिना हम अयोध्या को जायेंगे । देखो राज गया, वनवास हुआ, पिता मरे, स्त्री हरी गई, देखिए दुष्ट भाग्य अब क्या करता है देखो होनहार नहीं मिटता राजा मनु के वंश में जन्म लेकर ऐसे वनवास के दुःख भोग रहे हैं तुम भी हमारे साथ में रह सब दुःख उठाते हो और नानाप्रकार के कष्ट भोगते हो, हमारे समान इस कुल में कोई भी दुःखी न हुआ न होगा क्या करें इस दुःखसागर से तरने का कोई उपाय नहीं । यहां वन में न द्रव्य है न सेना जिसके ऊपर कोप करें तुम्हीं अकेले साथी हो जो जैसा करता है वैसा भोगता है देखो सीता दुष्ट रावण के यहाँ कैसे जीवेगी। स्त्री के साथ रखने से हम ऐसे ऐश्वर्यवान् को भी दुःख हुआ तो फिर सामान्य मनुष्य की क्या गणना है । तब लक्ष्मणजी ने कहा धीरज को धारण करो रावण से सीता ले आवेंगे जो आपत्ति और सम्पत्ति में धीरज धरते हैं वही धीर कहाते हैं अल्पबुद्धि लोग दुःखों से दुःखी होकर दुःखों को भोगते हैं सुख दुख को दैवाधीन समझ कर दुःख को त्यागो, जिसकाल से राज गया, सीता हरी गई इसी काल से सीता मिलेगी ।

देखो अकेले राजा रघु ने दशों दिशाओं को जीत लिया था उन्हीं के वंश में आप हैं फिर क्यों सोच करते हो इसी प्रकार दोनों भाई बातें कर रहे थे कि आकाश से नारद मुनि आये जिनकी पूजा की तब उन्होंने कहा कि आप प्राकृत मनुष्यों की भांति क्यों शोक करते हो आपका जन्म सीता हरण और रावण के मारने के लिये हुआ है क्या आप नहीं जानते पूर्व समय में सीता एक मुनि की कन्या थी वह वन में तपस्या करती थी तब रावण ने प्रार्थना की कि आप हमारी भार्या हूजिये तब उसने न माना और हठसे पकड़लिया तब उन्होंने शाप दिया कि जा तेरे नाश के निमित्त हम पृथ्वी पर उत्पन्न होंगी । जब हमको लेजावेगा तब तेरा नाश हो जायगा । वही लक्ष्मी का अंश जानकी उत्पन्न हुई है वह अपने नाश के निमित्त उनको लेगया है अजन्मा आप हैं तिसका जन्म भी इस दुष्ट के मारने के निमित्त देवताओं की प्रार्थना करने पर राजा दशरथ के यहां हुआ है आप परमेश्वर और सीता परमेश्वरी, इससे आप धीरज धारण कीजिये मैं रावण के नाश का उपाय बताता हूँ आप क्वार मास के नवरात्रि का व्रत कीजिये हम करा देंगे सब कार्य सिद्ध हो जावेंगे । पूर्व समय में ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र ने यह व्रत किया था यह सुन कर नारद की विधि के अनुसार व्रत किया तब भगवती सिंह पर चढ़कर आई और कहा कि तुम नारायण हो वानरों की सहायता लेकर रावण को मारो ।

(१०) अग्निपुराण अध्याय १० में लिखा है कि जिस समय हनूमानजी

ने लङ्का से लौटकर मणि रामचन्द्रजी को दी उस समय उन्होंने विरह में दुखित होकर रोदन किया।

(११) सीता की ख़बर पाने पर सुग्रीवादि की सहायता लेकर लङ्का पर चढ़ाई की।

(१२) जब रामचन्द्र समुद्र पर पहुंचे तो पार उतरने के लिये मार्ग नहीं पाया। इसके विषय में पद्मपुराण षष्ठ खंड अ० ४४ में लिखा है कि राम ने लक्ष्मणजी से कहा है कि अब क्या करें तब लक्ष्मणजी ने कहा कि यहां से २ कोस पर वकदाल्भ्य मुनि और अन्य उत्तम ब्राह्मण रहते हैं उनके समीप चल कोई उपाय पूंछकर कार्य करिये। यह सुन श्रीराम उनके समीप गये और वृत्तान्त कहा तब मुनि ने कहा कि तुम एकाग्र मन होकर इस व्रत को करो जो फागुन के कृष्णपक्ष में विजया एकादशी होती है।

एकाग्र मनसो भूत्वा व्रतमेतत्समाचर।
फाल्गुनस्या सिते पक्षे विजयैकादशी भवेत् ॥ २४ ॥

जिसके व्रत से आपकी जीत होगी वानरों समेत समुद्र को तर जाओगे।

तस्या व्रतेन हेराम! विजयस्ते भविष्यति।
निःसंशयं समुद्रत्वं तरिष्यसि सवानरः ॥ २५ ॥

फिर उन्होंने सब विधि सुनाई जिसको सुन उसी समय रामजी ने यथोचित व्रत किया और करने ही से राम की जीत हुई।

इति श्रुत्वा ततोरामो यथोक्तमकरोत्तदा।
कृते व्रते स विजयी बभूव रघुनन्दनः ॥ ३६ ॥
प्राप्ता सीता जिता लंका पौलस्त्यो निहतो रणे ॥ ३७ ॥

(१३) तुलसीकृत रामायण में लिखा है कि उन्होंने महादेव की स्थापना कर पूजा की तब समुद्र आया फिर उनका कार्य सिद्ध हुआ।

(१४) इसी भांति संग्राम के समाचार अंगदादि वानरों द्वारा मिला करते थे।

(१५) जब लक्ष्मणजीके शक्ति लगी तो राम ने बड़ा विलाप किया फिर विभीषण की सम्मति के अनुसार वैद्य को बुलाकर औषधि कराई।

(१६) जब राम ने रावण को मार सीताजी से भेंट की उस समय उन्होंने बहुत निन्दित वचन कहे तब सीता भी अग्नि में प्रवेश कर गई तब

महादेव आदि देवता रामजी के समीप आये और बहुत कुछ राम और सीता की प्रशंसा की, इतने में अग्नि शरीर धारण कर आया और कहा कि इस सीता को लो यह पापरहित है मैं सत्य २ कहता हूँ तब अग्नि के ऐसा कहने पर इसको ग्रहण किया।

(१७) रावण को मार कर १२ वर्ष पश्चात् अयोध्या में आकर राजा होकर राज्य करने पर लोकापवाद के भय से गर्भवती सीताको बनोवास किया। फिर निकाली हुई सीता वाल्मीक ऋषि को दो पुत्र सौंप राम के चरणों का ध्यान कर पृथ्वी छिद्र में प्रवेश कर गई। तब वह ईश्वर होने पर भी शोक को न रोक सके, क्या यही ईश्वरावतार का चिन्ह है। जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कन्द ९ अ० ११ में लिखा है।

हत्वा मधुवने चक्रे मथुरा नाम वै पुरीम्।
मुनौ निक्षिप्य तनयौ सीताभर्त्रा विवासिता॥ १५॥
ध्यायंती रामचरणौ विवरं प्रविवेश ह।
तच्छ्रुत्वा भगवान् रामो रुधन्नपि धियाशुचः॥ १६॥

रामचन्द्र जी ने ब्रह्महत्या दूर करने के अर्थ अगस्त मुनि की आज्ञानुसार अश्वमेध यज्ञ किया।

पद्मपुराण पञ्चम पाताल खण्ड अ० ६ में लिखा है कि जब अगस्त्य मुनि रामचन्द्र जी के यहाँ गये तब उनको मालूम हुआ कि रावण ब्राह्मण था तब बहुत विलाप कर कहा कि हम स्त्री के पीछे वेद शास्त्र के विवेकी ब्राह्मण के कुल का नाश कर दिया भला हमारे समान दुर्मति, बुद्धिहीन कौन होगा।

अहो मे पश्यताज्ञानं विमूढस्य दुरात्मनः।
यद्ब्राह्मण कुलेरूढं हतवान्कामलोलुपः॥७॥
महिलार्थेत्वहं विप्रं वेद शास्त्र विवेकवान्।
हतवान्वाऽवकुलं बुद्धिहीनोति दुर्मितिः॥ ८॥

इक्ष्वाकु के वंश में किसीने ब्राह्मण को दुर्वचन नहीं कहा देखो जो ब्राह्मण पूजा के योग्य थे उनको मारा हमारे पापको कुम्भीपाक न सह सकेगा और कोई तीर्थ भी ऐसा नहीं जो हमको पवित्र करने में समर्थ हो। न यज्ञ न तप न दान न देवता की प्रतिमा आदिक ऐसी है जो ब्राह्मण मारने वाले को पवित्र कर सके। इस लिये आप कृपा करके कोई व्रत, तप, दान बतलाइये जो हमारे पापों को भस्म करे।

इक्ष्वाकूणां कुले जातु ब्राह्मणो न दुरुक्ति भाक् ।
ईदृशं कुर्वता कर्म मयै तत्सकलंकितम् ॥ ६ ॥
ये ब्राह्मणास्तु पूजार्हं दान सम्मान भोजनैः ।
ते मया निहता विप्राः शरसंघात संहितैः ॥ १० ॥
कांल्लोकान्न गमिष्यामि कुंभीपाकोपि दुःसह ॥ ११ ॥
न तादृशं तीर्थ मस्ति यन्मां पावयितुं क्षमम् ।
न यज्ञो न तपो दानं न वाप्येव व्रतादिकम् ॥ १२ ॥
ब्रह्म हिंसाहशं मह्यं यादृशं पापदाहकम् ।
व्रतं दानं मखं किंचित्तीर्थ माराधनं महत् ॥ २७ ॥

जिस से हमारी विमल कीर्त्ति हो जो सब लोगों को पीछे से पवित्र करे चाहे वह लोग पापाचरण से पापी हो गये हों, ब्रह्महत्या से उनकी दीप्ति जाती रही हो वह सबको पवित्र करे ।

येन मे विमला कीर्त्तिर्लोकान्वै पावयिष्यति ।
पापाचारासकालुष्यान्ब्रह्महत्या हतप्रभान् ॥ २८ ॥

तब अगस्त जी ने कहा कि जो अश्वमेध यज्ञ करता है वह सब पापों से छूट जाता है । तब श्री राम ने अश्वमेध यज्ञ किया । ऐसा ही पद्म पुराणपाताल-खण्ड अध्याय ३ में लिखा है ।

सर्वं सपापंतरति योऽश्वमेधं यजेत वै ।
तस्मात्त्वं यज विश्वात्मन्वाजिमेधेन शोभिना ॥३१॥
अगस्त्य वाक्याच्छ्रीरामो विप्रहत्यापनुत्तये ।
यागंकरोति सुमहान्सर्व संभार संभृतम् ॥४॥

कहिये पण्डित जी यह कार्य ईश्वरावतार के हैं कदापि नहीं इसी से तो हम कहते हैं ईश्वर कभी अवतार नहीं लेता—यह सब लेख हमारे शत्रुओं ने पुराणों में लिख दिये जिसके कारण अन्य कौमें पढ़ २ कर हंसती हैं । इस लिये आप सब को परमेश्वर के अवतार न मानने चाहियें असल में यह सब धर्मात्मा पुरुष थे जिन्होंने संसार को बड़े २ धार्मिक उपदेश दिये ।

कपिल अवतार।

कर्दम ऋषि प्रजापति देवहूती को भगवान वर देकर (कि मैं तुम्हारे यहां जन्म लूंगा) अंतर्द्धान हो गये तो कर्दम ऋषि ने देवहूती से कहा कि तुमने मेरे साथ बहुत तपस्याकी और असंख्य कष्ट उठाये अब मैं चाहता हूं कि तुझको सुख दे आनन्द उठाऊं। तब देवहूती ने कहा मुझे आनन्दकी इच्छा नहीं किंतु आप के चरणसेवा की इच्छा रहती है। परन्तु कर्दम ऋषिने न माना और सरोवर में स्नान करने की आज्ञा दी और उसने ऐसा किया तब तो स्नान करते ही सोलह वर्ष की सुन्दरी होगई। उसके साथ ही हज़ार लड़कियां तालाब में से निकलीं और वहां सोने के महल रत्नों से जड़े हुए बन गये जो अपनी सुन्दरता में वैकुंठ को लजाते थे फिर कर्दम ऋषिने भी उसी तालाब में स्नानकी जिससे वह भी सोलह वर्ष के जवान पट्ठा होगये फिर वह दोनों उस स्थान पर विषय-भोग और नाना प्रकार के सुख भोगते रहे। उनके पास एक विमान था जिसके ऊपर वह दोनों बैठकर देवलोक, भूलोक, पाताललोक इत्यादि में यात्रा किया करते थे कहीं भी कोई रोक इनके लिये नहीं थी इस प्रकार भोग करते हुए बहुत दिनोंके पीछे देवहूती ने कहा कि अब भोग और सुख बहुत हो चुका अब जैसा श्रीभगवान् का वर है वैसा मेरे पुत्र उत्पन्न हो इतने कहने की देर थी कि तुरंत नारायण का अंश उसके गर्भ में आगया। ब्रह्माजी ने उसी समय आकर सूचना दी कि तुम्हारे घर अवतार नारायण का होगा और कपिलदेवजी परम योगी श्वर जटाधारी जन्म लेंगे। संसार में तुम्हारा नाम स्मरण रहेगा।

श्रीमहाराज! इस भागवत ने हर स्थान पर ईश्वरी नियम को तोड़ कर सत्यधर्म की कुदशा करदी। मेरी समझ में अब गङ्गास्नान की कुछ आवश्यकता नहीं वरन् उस सरोवर की खोज करनी चाहिये क्योंकि यदि वह मिल गया तो दरिद्र दूर हो जायगा हमारे वृद्ध सोलह वर्ष के जवान पट्ठा बन जायंगे सहस्त्रों दासियां भी मिलेंगी साथही सोने के भवन रत्नों से जड़ित बन जायंगे। सत्य तो यह है कि अविद्या ने जिनके नेत्रों का प्रकाश खोदिया हो वह क्या देख सकते हैं। पक्षपात ने जिनका मन फेर दिया वह सत्य झूठ की परीक्षा कहांसे करें। ब्रह्मांजी की साक्षी के सन्मुख भला कौन इसको असम्भव बतला सकता है। परन्तु सत्य किसी प्रकार मारा नहीं जाता इसलिये आप भी इसमें से सत्य को ग्रहण कीजिये।

राजा पृथुका अवतार।

जब राजा वेन ब्राह्मणों के श्रापसे मर गया तब उसकी माताने कहा कि उसके शरीर को जलाना नहीं जिन्होंने इसको मारा है वह आप ही जिलावेंगे,

ब्राह्मणों ने विचार किया कि मृतक को जिलाना ठीक नहीं परन्तु अपने ब्रह्मतेज से इसके शरीर से एक बेटा उत्पन्न करेंगे वह राज्य करेगा और इन तीनोंने उसकी जांघ मथन की इससे एक ऐसा पुरुष उत्पन्न हुआ जिसकी भयानक सूरत, छोटा डील और छोटी गर्दन वाला था-उत्पन्न होते ही उसने कहा कि मुझको क्या आज्ञा है ब्राह्मणों ने देखा कि इसका स्वरूप राज्य के योग्य नहीं है तब उससे कहा कि भीलों पर जाकर सर्दारी करो इतना सुनते ही चला गया और फिर उसी मृतक शरीर की दाहिनी जङ्घासे एक स्वरूपवान् पुरुष और एक परमसुन्दरी स्त्री निकली, पुरुष का नाम पृथु रक्खा, स्त्री से कहा कि तू इसकी भार्य्या है इसके पश्चात् जब ब्राह्मणों ने ज्ञानदृष्टि से देखा तो ज्ञात हुआ कि यह पुरुष नारायण का अवतार है और स्त्री लक्ष्मी है। अधर्मी राजा का सिंहासन इसको शोभा न देगा। कुबेर से कहा तू इसके लिये ऐसा सिंहासन ला जो रत्नों और मणियों से जड़ा हो। उसने उसी समय आज्ञा पालन की और वरुण ने छत्र, वायुने चंवर लाकर अर्पण किया और सब देवताओं में जिनके पास जो कुछ राज्य का सामान था लाकर राजा के सम्मुख रक्खा अब बन्दीजनों ने (जिनको भाट व कवि जो इन्हीं ब्राह्मणों के गोल में से थे) राजा की प्रशंसा करनी प्रारम्भ की और बड़े २ राजाओं का उदाहरण देने लगे परन्तु राजाको यह बात अप्रिय ज्ञात हुई उसने कहा कि अब तक मुझसे कोई अच्छा काम नहीं हुआ व्यर्थ प्रशंसा अच्छी नहीं यह हंसी है। एक नारायण की स्तुति करनी चाहिये जो सबको प्रत्येक आवश्यक पदार्थ देता है परन्तु बन्दीजनों ने कहा कि तुम नारायण के अवतार हो तुम वे काम करोगे जो अब तक किसीसे नहीं हुये प्रथम हमारी जिह्वासे बुरे वचन निकलते रहते हैं इसलिये हमको उचित है कि हम अपनी वाणी को आपकी प्रशंसा से पवित्र करें।

जब बहुत समय राजा पृथु को राज करते होगया। एक दिन सम्पूर्ण प्रजा एकत्रित होकर राजाके पास आ निवेदन करने लगी कि हे महाराज! आप हमारे राजा हो हमारे शरीर इस प्रकार जल रहे हैं जैसे कोई सूखे पेड़ों में आग लगा देता है हम भूख के मारे व्याकुल हैं हमारे भोजन अन्न और फल हैं। उसको भी पृथिवी अपने गर्भ में चुरा लेगई। पेड़ों पर फल भी नहीं आने देती। पृथिवी पर बीज हम डालते हैं परन्तु कुछ नहीं जमता। हम क्या खायें, क्या करें, कहां जायें। राजा वेन अधर्मी था इसी कारण पृथिवीने ऐसा किया। आप धर्मात्मा राजा हो, हमारी रक्षा करो। राजा पृथुको यह बात सुनते ही क्रोध आया और धनुष बाण लेकर कहा कि पृथ्वी को मारूंगा और बाणको चढ़ाकर चाहा था कि पृथ्वी के खण्ड खण्ड करूं कि इतने में पृथ्वी गौ का रूप धारण कर सामने आई राजा ने गौ के मारने का भी कुछ दोष न समझा। अब पृथिवी दौड़ी और राजा भी उसके पीछे भागा।

जब पृथ्वी ने देखा कि कहीं शरण नहीं मिलती तब राजा से कहा कि स्त्री और गौके मारने का बड़ा पाप है मारना उसको चाहिये जिससे कुछ दुःख पहुंचे याद मुझको मार डाला तो संसार किस पर बसेगा राजा ने एक न मानी और कहा तुझ को अवश्य मारूंगा और इस संसार को अपने योगबल से महाप्रलय तक जल पर स्थित रक्खूंगा। यह सुनकर पृथिवी डर गई और सोचा जो कुछ यह कहते हैं वही करेंगे। अंतको राजा से कहा मेरे ऊपर पहाड़ बहुत हैं वह भी कहीं थोड़े कहीं अधिक। लोग भी ऊपर नीचे बस रहे हैं इसी लिये मुझको दुःख हो रहा है ऊंच नीच को बराबर करो और मुझको दुहिये (जैसे गायका दूध निकाला करते हैं) मैं सब औषधियां दूंगी।

यह सुनकर पृथु उठ खड़ा हुआ और जितने बड़े पहाड़ पृथिवी पर थे सबको धनुष बाण की नोक से उठाकर उत्तराखण्ड की ओर डाल दिया और जो छोटे २ रह गये उनको उसी धनुष की नोक से पृथिवी पर कूट दिया जो नीचे उतर गये। देखिये पण्डित जीपहाड़ कैसे धनुष की नोक से उठ कर चले गये।

नोट—पृथिवी सब अन्न औषधि और फलों को अपने गर्भ में ले गई हम से क्या—किसी हिंदू से ही पूछो तो वह भी कभी इसकी सत्यता पर प्रतीति न करेंगे। यों तो यह अन्न और फल सब पृथिवी के गर्भ में हैं खेती के नियम के अनुसार यदि पृथिवी को ठीक करके बीज डाला जाये और समय पर वर्षा हो या कुवें या नहर का पानी दिया जावे तो सम्भव नहीं कि पृथिवी अन्न और फल न देवे। पुराणों की समझ में जैसा अग्नि, वायु जानदार हैं और उनके देवता पृथक् २ स्थापित किये गये हैं वैसे ही पृथिवी को भी उन्होंने प्राणदार समझा। कल्पना करो पृथिवी उस समय गौरूप बन गई तो यह संसार किस पर रहा? इसके अतिरिक्त उन्हीं पुस्तकों में और बहुत से उदाहरण विद्यमान होंगे जब पृथ्वी को कष्ट हुआ वह गौ रूप धारण कर के निवेदन करने के लिये देवताओं के पास गई। अब की बार अपनी विद्या के प्रतिकूल ऐसे बल में आई कि आप ही अपने पेट में सब पदार्थों को ले गई। फिर एक राजा वेन अधर्मी या अन्यायी था उसी को क्यों कष्ट देती जहाँ वह बैठा या खड़ा हुआ था वहीं पृथिवी फट जाती और वह भीतर धसजाता सम्पूर्ण प्रजा को कष्ट क्यों दिया जैसा कि पृथिवी का औषधियों को गर्भ में ले जाना या इसका गौका रूप धारण करना गप्प है वैसे ही राजा पृथु का सारे संसार को अपने योग बल से जल पर रखना। यदि जल पर संसार ठहर सकता तो पृथिवी रचने की क्या आवश्यकता थी।

दत्तात्रेय ।

जब अत्रिजी को संसार उत्पन्न करने की आज्ञा हुई तब स्त्री पुरुष दोनों ने विचार किया कि उत्तम संतान हो उसके लिये उन्होंने सौ वर्ष तक तप किया परन्तु तपस्या में किसी का नाम नहीं लिया इस लिये ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों देवताओं ने आकर दर्शन दिये तब अत्रि ने वर मांगा कि हमारे यहां सुपात्र संतान हो। अतः विष्णु के अंश से दत्तात्रेय और महादेव की कृपा से दुर्वासा और ब्रह्मा की कृपा से चंद्रमा उत्पन्न हुए परन्तु शोक इतना कि इन तीनों में से दत्तात्रेय जी महाराज की अवतारों में गणना हुई और अन्य की नहीं। जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कंद दो में लिखा है; और मार्कण्डेय पुराण अध्याय १७ में लिखा है कि अत्रिऋषि ने विष्णु को प्रसन्न कर दत्तात्रेय को उत्पन्न किया जो साक्षात् विष्णु के अवतार थे जो अत्रि के दूसरे पुत्र कहलाये।

विष्णुरेवावतीर्णोऽसौ द्वितीयोऽत्रेः सुतोऽभवत् ॥ ७ ॥

एक दिन योगीजी बहुत मुनियों के लड़कों के साथ एक तालाब पर स्नान करने को गये और पानी में गोता लगा कर अन्तर्धान होगये। तब ऋषिकुमार उनके दर्शनों की इच्छा से तालाब के किनारे खड़े रहे देवताओं के सौ वर्ष पीछे महात्मा जी उसी तालाब से एक स्त्री समेत निकले कि स्त्री देखकर मुझको त्याग कर चले जायंगे। तो मैं अकेला होकर यहां रहूँगा अब इस पर भी उन्होंने उनका साथ न छोड़ा तब उस स्त्री के साथ वहां शराब पीने लगे।

ततः सहतया भार्य्या मद्यपानमथा पिबत् ॥ २२ ॥

जब वह शराब पीकर मस्त हुए तब उसी स्त्री के साथ गान और नृत्य करने लगे तब ऋषिकुमार उनको छोड़कर चल दिये।

सुरापानरतन्तेन सभार्य्यं तत्यजुस्ततः ।
गीतवाद्यादि वनताभोगसंसर्गदूषितं ॥ २३ ॥

दत्तात्रेय स्त्री के साथ वहां रहने लगे जहां वह शराब पीते परन्तु उनको दोष नहीं लगता था क्योंकि वे योगी थे।

मन्यमाना महात्मानं तपसह वहिष्क्रियं ।
नावापादोषं योगीशो वारुणीं सपिवन्नपि ॥ २४ ॥

उधर दैत्यों के डरके कारण देवता लोग उनके पास गये और उनसे प्रार्थना की तब दत्तात्रेय जी ने कहा कि मैं तो दीवाना हूँ मुझसे क्या चाहते हो,

तब उन सबों ने कहा कि राक्षसों ने सब राज्यकर यज्ञभाग भी छीन लिया है इस लिये हमारी रक्षा और उनके वध करने का यत्न कीजिये तब दत्तात्रेय जी ने कहा कि मैं मद्य पीता और उच्छिष्ट इत्यादि खाता पीता हूं और जितेन्द्रिय भी नहीं हूं तो ऐसे उन्मत्त से आप लोग शत्रुओं के जीतने की इच्छा क्यों करते हो। मार्कण्डेय अ० १८ श्लोक २८ ॥

मद्यासक्तोऽहमुच्छिष्टो न चैवाहं जितेन्द्रियः।
कथमिच्छथमत्तोऽपिदेवाश्शत्रुपराभवं ॥ २८ ॥

देवताओं ने कहा कि महाराज तुम सब दोषों से रहित हो तुमको कोई दोष नहीं और जगत् के नाथ हो और सब विद्या और ज्ञान प्रवेश होने से तुम्हारा चित्त शुद्ध है इसको दत्तात्रेयी ने सुनके कहाकि यद्यपि मुझको समदर्शी विद्या प्राप्त है पर इस स्त्री की सङ्गति से उच्छिष्ट हो रहा हूं।

सत्यमेतत् सुराःविद्या ममास्ति समदर्शिनः।
अस्यास्तु योषितः सङ्गादहमुच्छिष्टतांगतः॥ ३६ ॥

स्त्री के हरवक्त संभोग के दोष से मैं सेवा योग्य नहीं हूं यह सुन फिर—

स्त्रीसम्भोगोहि दोषाय सातत्येनोपसेवितः।
एवमुक्तास्ततो देवाः पुनर्वचनमब्रुवन् ॥ ३१ ॥

उन देवताओं ने कहा कि आप निर्दोष हैं तब उन्होंने हंसकर कहा कि यदि आपको यह मेरी मत पसंद है तो तुम असुरों को युद्ध के लिये मेरे सन्मुख बुलाओ उनका तेज बल नष्ट होजावेगा। देवताओं ने उनको बुलाया और युद्ध करते हुए महात्मा के समीप आये जहां महात्मा के बायें ओर सर्वाङ्गसुन्दरी चन्द्रवदनी मदनी बैठी थी जिस को देखकर कामदेव की उत्तेजना हो व्याकुल हो गये और लड़ाई का ध्यान छोड़ उस स्त्री को डोलीमें बिठाकर अपने घरकी ओर ले चले। तब महात्मा दत्तात्रेय जी ने कहा कि अब तुम अस्त्र शस्त्रों से मार गिराओ क्योंकि मैंने अपनी दृष्टिसे उनके तेज को हीन कर दिया है और स्त्री-हरण के पाप से उन लोगों का सब पुण्य जल गया इसलिये वह सब पराक्रम हीन हो गये।

परदाराव मर्षाच्च दग्धपुण्याहतौ जसः। ५४ ॥

देवताओं ने अस्त्र शस्त्र, लेकर युद्ध में उनका नाश कर दिया और लक्ष्मी जी वहां से अन्तर्धान होकर दत्तात्रेय जी के पास आ विराजीं।

कहिये पण्डितजी कैसा अच्छा उपाय है।

व्यास महाराज ।

व्यास जी महाराज के विषय में पौराणिक बड़ी २ प्रशंसा करते हैं और ईश्वर का अवतार मानते हैं वहाँ वे उनको अठारह पुराणों का कर्त्ता और एक वेद के चार करने वाला भी मानते हैं तिसपर उन्हीं पुराणों में लिख मारा है कि जब उन्हों ने सत्तरह पुराण बना लिये तिस पर भी उनकी आत्मा को शांति नहीं हुई । एक दिन सोच में बैठे हुए थे कि नारद मुनि आए और उनकी उपशोक दशा को देख कर कहा कि तुम यदि अपनी आत्मा की शांति चाहते हो तो श्रीकृष्ण महाराज के गुणों का कीर्तन करो तब उन्होंने श्रीमद्भागवत पुराण को बनाया जिससे उनकी शान्ति हुई—देखिये पण्डित जी यह तो आपके परमेश्वर के अवतारों की दशा है—प्रथम तो स्वयं परमेश्वर के अवतार तिसपर वेद का ज्ञान लेते हुये भी सत्रह पुराणों को बनाया जिस पर भी उनकी आत्मा को शांति नहीं हुई यह कैसे शोक की बात है क्या ईश्वर अवतारियों की आत्मा को भी ज्ञान की आवश्यकता होती है—यदि आवश्यकता ही हो तो वेद जो ईश्वरीय ज्ञान है फिर उससे उनकी शांति क्यों नहीं हुई-एक वेद के चार क्यों किये। फिर सत्रह पुराण भी जो बनाये जिनसे संसार के पाप तो कटे परन्तु उनके रचयिता व्यासजी को अशांति ही रही यह क्या तमाशे की बात नहीं है ।

देवीभागवत—स्कंद १ अध्याय १० व १४ में लिखा है कि व्यासजी ने सौ वर्ष तक मेरुपर्वत पर एकाक्षरी मंत्र जप भगवती और शिव का ध्यान किया तब शिवजी उनके पास गये और कहा कि तुम्हारे सब गुण सम्पन्न पुत्र उत्पन्न होगा । एक दिन अरणी सहित गुप्त अग्नि को अग्नि की इच्छा करके मथने लगे उसी समय पुत्र होने की इच्छा भी चित्त में स्मरण हो आई कि जिस प्रकार मंथन और अरणी के संयोग से अग्नि उत्पन्न होती है उसी भांति हमारे पुत्र क्यों नहीं उत्पन्न होसका इतने में घृताची नाम अप्सरा दिव्य रूप धारण किये हुये आकाश में दीख पड़ी । मुनिकामातुर हो चिंता करने लगे कि मुझको सौ वर्ष तपस्या करते हो गये परन्तु तो भी काम सता रहा है द्वितीय इससे गृहस्थाश्रम के आनन्द भी प्राप्त न होंगे यह तो काम के पीछे आकाश को चली जायगी इस लिये हमारे योग्य नहीं । वह अप्सरा शापके भय से शुकी का रूप धारण कर निकल गई तब व्यास जी बड़े विस्मित हुए और मन खींचने पर भी न खिचा और उनका ···················अरणीमें पात होगया वह अरणी को अधिक मथने लगे तब उसमें व्यास जी के आकार का पुत्र उत्पन्न हुआ और शुकी को देख कामातुर हुए थे इस लिये उसका नाम शुक रक्खा ।

पण्डित जी-यह व्यास अवतार की दशा । प्रथम परमेश्वर के अवतार फिर भी पुत्र की इच्छा, जिसके लिये शिव और देवी का ध्यान, फिर कामातुर

होना, फिर अरणी मथन से ··· ··· पात होना रज से शुक की अद्भुत उत्पत्ति होना।

नारद।

इनके विषय में सम्पूर्ण पुराण एक स्वर होकर कह रहे हैं कि यह देवताओं और राक्षसों के समाचार इधर उधर पहुंचाया करते थे तथा बहुधा उपदेश भी किया करते थे इसके उपरांत राजा अम्बरीष की कन्या का विवाह अपने साथ होने के अर्थ विष्णु के पास गये थे और कहा था कि उस कन्या को पर्वत ऋषि भी चाहते हैं इस लिये आप उनका मुंह बन्दर का सा कर देना परन्तु जब पर्वत ऋषि विष्णुजी के पास गये और सब वृत्तांत कहा तो उनके कहने से नारद का मुंह लंगूर का सा बना दिया जब यह दोनों स्वयंवर में गये तो लड़की इनका मुंह बन्दर का सा देखकर डर गई और उसने इन दोनों को छोड़ अन्य से विवाह कर लिया परन्तु शोक तो यह है कि अवतारी होने पर भी उनको यह खबर नहीं हुई कि मेरा मुंह कैसा बना दिया है जब नदी के पानी में परछाईं पड़ी तब ज्ञात हुआ। इसके उपरान्त पद्मपुराण से प्रकट होता है कि विष्णु महाराज ने उनको स्त्री बना दिया और वह बहुत काल तक स्त्री बने रहे सन्तान भी हुई परन्तु उन्होंने विष्णु महाराज की माया को स्वयं अवतारी होने पर भी नहीं जाना।

विष्णुपुराण अं० १ अध्याय १५ से विदित होता है कि जब दक्ष ने प्रजा बढ़ाने के लिये ५००० पुत्रों को उत्पन्न किया जिनको नारद महाराज ने बहका दिया वह सब पृथ्वी के नापने आदि के लिये चले गये तब दक्ष ने १००० पुत्रों को और उत्पन्न किया उनको भी बहका दिया इस कारण दक्ष ने शाप दिया कि जाओ तुम्हारा यह शरीर छूट जावे फिर गर्भवास हो।

श्रीमद्भागवत स्कंद ६ अध्याय ५ श्लोक ४३ में लिखा है कि दक्ष महाराज ने कहा कि हे मूढ़ फिरते २ लोकों में तेरा एक जगह पैर न ठहरेगा अर्थात् भ्रमण ही करता रहेगा।

तंतुकृत नयतस्त्वमभद्रमचरः पुनः। तस्माल्लोकेषु ते मूढ़ न भवेद्भ्रमतः पदम्॥

वामनावतार।

जब दैत्यों ने देवताओं को नाना प्रकार के दुःख दिये तब श्री भगवान् अदिति के गर्भसे उत्पन्न हो देवताओं से कहने लगे हम क्या कार्य करें तब सबने कहा कि

आप राजा बलि से तीनों लोक मांग कर हमको दे दीजिये-देवताओं के कहने पर वामन जी आठ ऋषियों समेत वहां गये राजा बलि ने उनको फूलों के आसन पर बिठला, विधि से पूजा और प्रार्थना कर कहा कि आप अपने पधारने का कारण कहिये तब वामन जी ने कहा कि तीन पांव अग्निकुण्ड के लिये पृथ्वी दीजिये और कुछ नहीं चाहता। पद्म पद्म उत्तरखण्ड अ० २४० श्लोक १६।

अग्नि कुण्डस्य पृथिवी देहि दैत्य ते मम।

तब राजा ने प्रसन्न होकर कहा आप लीजिये इतने कहते ही छोटे रूपको छोड़ त्रिविक्रम देह को धारण कर सब कुछ उसका एक ही पग में नाप सब इन्द्र को दे दिया और बलि को रसातल पहुंचा दिया, कहिये श्रीमान् यही परमेश्वरी लीला है ? कि देवताओं की सहायता बिना झूंठ बोले वामन महाराज न कर सके जो साक्षात् नारायण के अवतार थे। क्या इसी का नाम सर्वशक्तिमानता है इसके उपरांत ईश्वर संसार का मित्र तिस पर चालाकी से देवताओं से मित्रता और दैत्यों से वैर क्या यही परमात्मापन है।

मोहिनी अवतार।

समुद्रमथन करने पर जब दैत्यों ने धन्वन्तरिजी के हाथ से अमृत का पूर्ण कलश छीन लिया तो श्री भगवान् ने मोहिनी (स्त्री की) मूर्ति बन दैत्यों को मोहित कर उनसे अमृत ले देवताओं को अमृतपान करा दिया। इसी रूप के देखने की जब इच्छा महादेवजी ने प्रकट की उस समय विष्णु महाराज ने गम्भीर भाव से हंस कर कहा कि यदि आपके देखने की इच्छा है तो दिखलाऊंगा यह रूप काम का बढ़ाने वाला है इसी से कामी जन बड़ा मान करते हैं चुनांचे जब मोहिनी रूप को दिखलाया महादेव जी मोहित हो गये।

परशुराम जी।

इनके पिता का नाम जमदग्नि और माता का नाम रेणुका था। जमदग्नि जी के पास एक कामधेनु गाय थी जिसको कीर्त्तवीर्य ने चाहा, महात्मा ने देने से इन्कार किया तब बल से राजा ने लेना चाहा उस समय कामधेनु ने सींगों और खुरों से उसकी सेना का नाश कर दिया। तब राजा ने क्रोध में आकर महात्माजी को मारडाला इधर परशुरामजी ने तपकर भगवान् से वरदान पाकर महाबली कीर्त्तवीर्य की सेना को मार उस राजा को भी मारडाला और इधर उधर के क्षत्रियों का भी नाश कर दिया फिर अश्वमेध यज्ञ कर के सात-

नोट—पण्डित जी ! क्या यही परमेश्वर के कर्त्तव्य हैं, क्या जीतका इससे अच्छा और कोई नुस्खा सर्वशक्तिमान् के पास न था।

द्वीप वाली पृथ्वी को ब्राह्मणों को दान कर दिया इन्होंने श्री रामचन्द्र को धनुष के तोड़ने पर बहुत कुछ कहा था फिर उनको भगवान् का अवतार जान आप तपस्या को चले गये।

बलदेव जी

इनके विषय में श्रीमद्भागवत स्कंद १० उत्तरार्द्ध अध्याय ६१ में श्लोक २७ से ३७ तक लिखा है, कि कलिंगदेश के राजा ने रुक्मी से कह बलदेव को पांसे के खेल में लगाया और यह जुआ इतना बढ़ा कि अन्त को बलदेव ने क्रोध में आकर दश करोड़ मोहरें दाव पर लगाईं और बलदेवजी महाराज की जीत हुई, परन्तु छल से रुक्मी कहने लगा कि हम जीते। दोनों में विवाद होने लगा उसका फ़ैसला आकाशवाणी ने किया कि धर्म से बलदेवजी की जीत हुई तो भी उन्होंने न माना और बलदेवजी की हंसी की। बलदेवजी ने फिर उन सबको मारा और द्वारिका को चले गये।

विष्णुपुराण अंश ५ अ० २५ में लिखा है कि बलदेवजी ने वन में आकर गोपियों के साथ मदिरापान किया।

विचरन् बलदेवोपि मदिरागंधमुद्धृतम्।
आघ्राय मदिरातर्षमवापाथपुरातनम् ॥ ५ ॥

भागवत स्कन्ध १० उत्तरार्द्ध अ० ६५ में लिखा है कि बलदेवजी मथुरा आये और दो मास ठहरे और वन में मीठो मद्य की गंध लेते २ स्त्रियों सहित मद्य पिया।

तं गंधं मधुधाराया वायुनोपहृतं बलः।
आघ्रायोपगतस्तत्र ललनाभिः समं पपौ ॥ २० ॥

नोट—क्रोध में आकर कीर्त्तवीर्य की सेना और राजा के अतिरिक्त आपने बिना अपराध के हज़ारों क्षत्रियों को सिवाय नाना के कुल के नाश किया। क्या ठीक था शायद इसी पर इनको उपास्य नहीं माना जैसा कि पद्मपुराण अध्याय २४१ में लिखा है कि परशुरामजी शक्ति के प्रवेश के कारण उपास्य नहीं श्रेष्ठ ब्राह्मण महात्मा भगवद्भक्तों को रामकृष्णजी के अवतारों की उपासना करने योग्य है क्योंकि इनमें अच्छे गुण होने के कारण ऋषियों ने उपासना की है और यही मोक्ष देने वाला है। "नोपास्यं हि भवेत्तस्य शक्त्यावेशान्महात्मनः" परन्तु गरुड़ और शिवपुराणादि में इनके नामस्मरण के लिये आज्ञा है। श्रीमान् क्या। कहें कहीं कुछ कहीं कुछ, तिस पर भी पुराण व्यासजी कृत माने जाते हैं।

इसके उपरांत व्रज की स्त्रियों के साथ विलास करने से जिनका चित्त चलायमान है व्रज में रमण करते जिस प्रकार एक रात्रि व्यतीत हुई उसी भांति सब।

एवं सर्वानिशायाता एकैव चरतो व्रजे।

रामस्याक्षिप्तचित्तस्य माधुर्यैर्व्रजयोषिताम् ॥ ३२ ॥

मार्कण्डेय पुराण जिल्द १ अ० ६ जब कौरव और पांडवों का युद्ध हुआ तब बलदेवजी ने किसी की ओर न होकर अपने स्वामियों सहित द्वारिकापुरी को पहुंच कर वहां मधुपान किया।

गत्वा द्वारवतीं रामो हृष्टपुष्ट-जनाकुलाम्।

त्वगन्तव्येषु तीर्थेषु पपौ पानं हलायुधः ॥ ६ ॥

यानी बलदेवजी मधुपान किये हुये वहां से रेवत नाम वन में गये उसमें रेवती नाम एक स्त्री जो मदयुक्त और अप्सरा के समान रहती थी उसका हाथ पकड़ लिया।

पीतपानो जगामाथ रैवतोद्यान भूद्धिमन्।

हस्तौ गृहीत्वा समदां रेवतीमप्सरोपमां ॥ ७ ॥

उसको साथ लेकर एक वनमें पहुंचे जहां नाना प्रकार के पक्षी बोल रहे थे वृक्ष फलों से लदे हुए थे उसको देखते हुए ऐसे स्थान पर पहुंचे जहां अनेक ऋषि आसनों पर बैठे जिनके बीच में सूतजी बैठे हुये कल्याणमयी कथा सुना रहे थे। ब्राह्मणों ने बलदेव जी को देखा जिनकी आंखें शराब के नशे में सुर्ख हो रहीं हैं जब मुनियों ने उनको नशे में देखा तो सिवाय सूतजी के, और सबों ने शीघ्र उठकर बड़े आदर, मान से बलदेवजी का पूजन किया।

दृष्ट्वा रामं द्विजाः सर्वे मधुपाना रुणे क्षणं ॥२७॥

बलदेव जी सूतजी के न उठने और आदर न करने से क्रोध में आकर मारे गुस्से के आंखें फड़कने लगीं उसी दशा में जैसे राक्षसको मार देते हैं उसी भांति सूतजी को मार डाला।

ततः क्रोधसमाविष्टो हली सूतं महाबलः।

निर्हन्यात् विवृत्ताक्षः क्षोभिता शेषदानवः ॥२६॥

तब ब्रह्मघात देखकर मुनिलोग अपनी २ मृगछाला लेकर वनसे निकल गये और बलदेवजी जिनकी आकृति दीवानों कीसी होरही थी सोचने और

पछताने लगे यह बड़े पाप की बात है कि ब्राह्मण के स्थान में बिना अपराध के हमने सूतजी को मारा कि जिसके कारण ब्राह्मणों ने इस वनको छोड़ दिया।

ब्राह्मस्थानं गतो ह्येष यत्सूतो विनिपातितः।
तथा हीमे द्विजाः सर्व्वे मामवेद्य विनिर्गताः॥३२॥

जिस प्रकार सड़े मुर्दे में दुर्गन्धि आती है उसी भांति ब्रह्मघात के पाप से मेरा शरीर दुर्गन्धि करता है यह कर्म मुझसे बहुत बुरा हुआ अब कहां जाऊं, क्या करूं।

शरीरस्य च मे गंधो ह्स्ये वा सुखावहः।
आत्मानं चावगच्छामि ब्रह्मघ्नमिव कुत्सितं॥३३॥

ऐसी ईर्षा और नशा घमण्ड और असावधानी को धिक्कार है कि जिसमें पड़कर मैंने ऐसा भारी पाप किया॥ ३४॥

धिगमर्षं तथामद्यमतिमानमभीरुतां।
यैराविष्टेन सुमहन्मया पापमिदं कृतं॥ ३४॥

अब मैं इस पापके दूर करने के लिये बारह वर्ष तक व्रत और इस बुरे कर्म का उत्तम प्रायश्चित्त करूंगा।

तत्क्षयार्थं चरिष्यामि व्रतं द्वादशवार्षिकम्।
स्वकर्म्मख्यापनं कुर्व्वन् प्रायश्चित्तमनुत्तमम्॥ ३५॥

इतना कहकर वह तीर्थयात्रा को गये और पापको दूर किया। ऐसा ही श्रीमद्भागवत स्कन्द ७ वा ६ में भी लिखा है।

"हा" ऋषिसन्तान! क्या वास्तविक तू इस घोरनिद्रा में पड़ी रहेगी इन निंदितशत्रुनिर्मित पुराणों को व्यास प्रणीत कहकर अपने पूर्वजों की कब तक निन्दा सुनती रहेगी। हे परमात्मन्! अब आप ही सुमति प्रदान कीजिये। हे जगदीश्वर! आप बुद्धि के भंडार हैं उस भंडार में से बुद्धि देकर हमारे बेड़े को पार लगाइये।

नोट—जिनको अंशावतार कहते हैं वही बलदेव जो हमारे सनातनी भाई ईश्वर के भी बड़े भाई जिनको कि जगन्नाथ कहते हैं उनके इन चरित्रों (शराब पीकर अप्सराओं के साथ रमण, निरपराधी सूत का वध) पर ध्यान दें कारण कि यदि हम कुछ इस पर टिप्पणी चढ़ावेंगे तब तो आप कहेंगे कि हमारे इष्टदेव की निन्दा करते हैं परन्तु अब आप ही सत्यका अवलम्बन करके विचारिये तो सही कि यह कथा उनकी निन्दा करती है व प्रतिष्ठा? क्योंकि उनके चरित्र ही यहाँ स्वयं साक्षी हैं॥

श्रीमान् पंडितजी—सेठजी मेरे मनको इस विषय को इतना ही सुन शांति होगई इसलिये अब इसको समाप्त कीजिये।

सेठजी—बहुत अच्छा-ओ३म् शम्।

पंडितजी—महाराजने कहा कि आपको उपरोक्त विषयों के सुनाने में बहुत परिश्रम करना पड़ा है इसलिये अब पन्द्रह दिन के लिये विश्राम दीजिये।

द्वितीय—मुझको एक कार्य के लिये बाहर जाना है।

तृतीय—लाला जानकीप्रसादजी इलाहाबाद आयेंगे।

चतुर्थ—लाला श्यामलाल व लाला केसरीमल व भोलानाथ व पंडित घासीराम व लाला बांकेलालजी को सम्बन्धियों में आनेकी आवश्यकता है।

पञ्चम—जगन्नाथ व बाबू हजारीलाल व केदारनाथ लाला बद्रीप्रसादजी व मुंशी लक्ष्मीनारायण व मुंशी श्यामसुन्दरलाल व मुंशी प्यारेलाल व नाज़िर साहिब व छदम्मीलाल गायक हरिद्वार आदि स्थानों में जाने वाले हैं। इसलिये भी इस कार्य को बन्द करना होगा।

लाला मोहनलाल—ने कहा कि यथार्थ में हम सबको आवश्यक काम हैं।

पंडितजी—सेठजी हम सब आपको इस परिश्रम का धन्यवाद देते हैं और आशा है कि उपरोक्त विषयों पर विचार करने से प्रत्येक को अधिक लाभ होगा।

सेठजी—मैं इस योग्य नहीं यह सब आपकी बड़ाई है हां मैं अपने परिश्रम को उसी समय सफल समझूंगा जब भारतके प्रत्येक स्त्री और पुरुष मेरे अभिप्राय को जान इस पर सच्चे मनसे विचार कर लाभ उठायेंगे यदि सब सज्जन महाशयों की यह सम्मति है और आवश्यक कार्य हैं तो मुझको स्वीकार है आज ता० २३ जून है इस हेतु अब ता० ८ जौलाई से कथा का आरम्भ होगा।

सब सज्जन महाशय चल दिये।

आर्य्यसेठ—ने नमस्ते की।

पंडितजी—ने आशीर्वाद दिया और अन्य सभ्य पुरुषों ने यथायोग्य की सेठजी भोजनों को गये।

नैपथ्यमें—पुराणों की लीला अपार है देखिये आगे क्या २ निकलता है यथार्थ में तो पुराणो में कहीं कुछ कहीं कुछ। इतने में तीन मार्ग आगये और महाशयगण अपने २ मार्ग को तीन टोलियों में विभाजित हो चल दिये सबने आपस में यथायोग्य कहा।

एक टोलीके मनुष्योंकी बात चीत।

पण्डित प्यारेलाल—पंडितजी अब तक आपकी समझ में क्या आया।

पंडितजी—अभी कुछ न पूछिये मैंने एक दिन अपने मित्रोंके साथ विचार किया था उस समय लाला भोलानाथ और मथुराप्रसाद और लाला प्रयागनरायनजी भी उपस्थित थे परन्तु उत्तर कोई यथार्थ न देता था अप्रसन्नता की झलक झलकती थी अब हम जाते हैं। यात्रा में हमको यदि किसी योग्य पुरुष से भेट हुई तो अवश्य ही विचार करेंगे फिर आपसे कहेंगे।

मुंशी बिहारीलालजी—ने कहा कि सेठजीने पुराणों की वेदविरुद्ध बातों का पुराणों से ही निश्चय कर दिया इसलिये हमारी समझ में तो यह सब पुराण महर्षि व्यासकृत नहीं जान पड़ते।

इतने में श्रीमान् का स्थान आगया—और नमस्कार कर चल दिये।

❀ इति अष्टमपरिच्छेदः ❀

पुराणतत्त्व-प्रकाश का प्रथम भाग समाप्त-



गृहस्थाश्रम

वेद और पुराणों के अन्तर और पुराण-महात्म्य को बतलाता है।

गृहस्थाश्रम

में अष्टांग योगादि और सत्संग का बड़े ज़ोरदार लफ़्ज़ों में वर्णन है।

गृहस्थाश्रम

हर एक प्रकार के शाक, अन्न, फल, दूध, दही, घी, मसाला, तैल आदि के गुण और अवगुणों को बतलाता है।

गृहस्थाश्रम

में कपड़े काटने- सीने और रंगने की रीतों का वर्णन है।

इसी का पाठ कर

आप घर बैठे प्रत्येक प्रकार के रसोई के पदार्थ सब किस्म की मिठाई, पकान्न, अचार, चटनी, मुरब्बा आदि का स्वाद चखिये।

गृहस्थाश्रम

में प्राचीन और वर्तमान समय की वीर और विदुषी स्त्रियों के ५० । ६० जीवनचरित्र है।

यही नहीं

किन्तु स्त्रियों के कठिन रोग और बाल रोगों की चिकित्सा- अंजन- मंजन सुहाग सोंठ का नुसखा- केश उत्तम करने के उपाय, कृमिनाशक-लोजम्बराज चूर्ण- बवासीर का इलाज आदि अनेक रोगों की औषधियों का इसमें वर्णन है ॥

गृहस्थाश्रम

में ही शारीरक- सामाजिक और आत्मिक उन्नति के उपाय बड़े परिश्रम से चरकसुश्रुत- वेद- शास्त्र- स्मृति और पुराणों की सहायता से लिखे गये हैं। पतिधर्म- पतिपत्नीधर्म- संस्कार- त्योहार- आर्यशब्द- ज्योतिष- व्रत- तपस्या- आवागमन- नित्यकर्म धर्म माहात्म्य आदि गृहस्थसंबन्धी कोई ऐसा विषय नहीं जिसका इसमें आन्दोलन न किया गया हो। कागज़ सफेद और ६०० पृष्ठ के होने पर भी मूल्य १॥) मात्र सच मानिये। इतनी उपयोगी, इतने पृष्ठ की ऐसे अल्प मूल्य पर भारत वर्ष में कोई पुस्तक नहीं मिलेगी ॥

नारायणीशिक्षा अर्थात् गृहस्थाश्रम की कातिल सम्मतियां

श्री० एन० निरञ्जन स्वामी फाइफमेजर बूशियर—

इसके पढ़ने से आत्मा को जितना आनंद मिला वह किसी प्रकार नहीं लिख सकता, वास्तव में आपने गागर में सागर को भरने का यत्न किया है योग्य गृहस्थ आपकी इस पुस्तक को पढ़े विना धन्यवाद दिये नहीं रह सकता।

श्री० पं० विदेशीलालजी शर्मा—डर्बान (नेटाल, अफ्रीका)

जिस तरह धातु में सुवर्ण, वृक्षों में आम, रसों में मिश्री, दुग्ध में घृत, मीठे में शहद, जीवों में मनुष्य, पुष्टियों में ब्रह्मचर्य, प्रकाश में सूर्य श्रेष्ठ है वैसे ही आपकी पुस्तक नारायणी शिक्षा सम्पूर्ण स्त्रियों के लिये उपयोगी है। मैं आशा करता हूं कि विचार-शील पुरुष अवश्य इस अमूल्य पुस्तक से लाभ उठा कुटुम्बियों सहित आनंद भोगने की चेष्टा करेंगे। (अन्य प्रशंसापत्रों को स्थालाभाव से नहीं छाप सकते।)

श्री० पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, सम्पादक सरस्वती प्रयाग

सरस्वती भाग १० संख्या ७ में प्रकाशित करते हैं कि नारायणी शिक्षा—प्रकाशक बा० चिम्मनलाल वैश्य, पृष्ठ संख्या ६१२। साचां बड़ा कागज अच्छा, छपाई बंबई टाइप की, मूल्य सिर्फ १॥) " इस इतनी सस्ती परन्तु उपयोगी पुस्तक का दूसरा नाम गृहस्थाश्रम शिक्षा है। पुस्तक कोई ३० भागों में विभक्त

है । गृहस्थाश्रम से सम्बन्ध रखने वाली शिशुपालन, शरीर रक्षा, ब्रह्मचर्य, विवाह, पति पत्नी धर्म, नित्य कर्मादि कितनी ही बातों का इसमें वर्णन और विचार है । श्रुति, स्मृति, उपनिषद्, पुराणादि से जगह जगह पर विषयोपयोगी प्रमाण उद्धृत किये गये हैं । पुस्तक में सैकड़ों बातें ऐसी हैं जिनका जानना गृहस्थ के लिये बहुत जरूरी है । इस पुस्तक को लोगों ने इतना पसन्द किया है कि आज तक इसके ६ संस्करण हो चुके हैं । इसी प्रकार सम्पादक आर्यमित्र-सद्धर्मप्रचारक-इन्दु, वेदप्रकाश आदि तथा श्री० बा० गोविन्दजी मिश्र ६५ । ३ बड़ा बाजार कलकत्ता श्री० बा० बच्चू लालजी गुप्त हरीसनरोड कलकत्ता । श्री बा० नन्दलालसिंहजी बी० ए० एस० सी एल० एल० बी० । श्री बा० गोकुलासवजी हेडमास्टर होशियारपुर । श्री० बा० प्रतापनरायण सिंहजी गाजीपुर स्वामी श्रद्धानन्दजी, स्वामी नित्यानन्दजी, स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी, स्वामी अनुभवानन्द जी, श्री० पं० शीतलप्रसाद जी डिप्टीकलेक्टर, श्री० बा० कृपालसिंहजी डिप्टी इन्स्पेक्टर, बा० मथुराप्रसादजी सबइंजीनियर, बा० सालिग रामजी सुपरवाइजर, बा० शम्भूनारायणजी करिया, बा० मैथिल दीन साहू इटावा, बा० मोहनसिंहजी साधूसिंहजी देहरादून, बा० वीरवर्मा देहरादून, श्री० नाथूरामजी आचार्य, ला० रामप्रसादजी बड़ाबाजार भरतपुर, श्री० बाबूरामनरायन जी तिवारी बनारस श्री० बा० विष्णुलाल जी साहब शर्मा एम. ए. लवजज बरेली । श्री० बा० रामचरनलाल जी असिस्टेन्ट सर्जन सरधना (मेरठ) श्री० रामदयाल जी शाहपुरा बा० सालिगराम जी सुपर्वाइजर दफ्तर मर्दुमशुमारी मिर्जापुर । बा० गंगाप्रसाद जगन्नाथ जी हलद्वानी, पं० देवदत्त जी शर्मा आमाघाट गाजीपुर, बा० उदयनारायन बलदेवप्रसादजी दानसाह इटावा आदि २ महानुभावों के सहस्रों प्रशंसा पत्र आचुके हैं ॥

पुत्री उपदेश।

अर्थात् नारायणी शिक्षा का दूसरा भाग मूल्य १) मात्र

इसमें बतलाया गया है कि भाग्य क्या है? उसको कौन बनाता है। गृहस्थाश्रम से शान्ति और सुख के साधन क्या हैं? गृहप्रबन्ध की उत्तम मीमांसा क्योंकर हो सकती है। धन की प्राप्ति क्योंकर हो सकती है और उसके सदुपयोग करने की विधि। नर नारियों के मुख्य कर्तव्य क्या हैं? संसार में कीर्ति ही अमर है, कीर्ति कैसे प्राप्त होती है और वह अमर कैसे होती है। मान का अधिकारी कौन है? राजा की आवश्यकता और प्रजा का धर्म। गृहस्थ के मुख्य उद्देश्य क्या हैं? और वंश की उन्नति कैसे हो सकती है। मनुष्य जीवन सफल क्योंकर हो सकता है। माता पिता भाई बहन पति पत्नी में जो खटपट बनी रहती है इस का परिणाम क्या होता है और उसके दूर करने के उपाय क्या हैं? परिवार में प्रत्येक का क्या अधिकार है? मर्यादा क्या वस्तु है? अनधिकार चेष्टा से क्या हानियाँ होती हैं। इत्यादि विषयों की आलोचना अच्छे प्रकार की गई है।

इसकी बाबत लोगों की सम्मतियां

बा० पूर्णचन्द्रजी B. S. c. & L. L. B. आगरा।

वास्तव में पुत्री उपदेश कन्याओं और स्त्रियों के लिये अत्यन्त शिक्षा-पूर्ण पुस्तक है। स्त्रियों के लिये जितनी बातें आवश्यक तथा उपयुक्त हैं उनपर शास्त्रों तथा नीतिज्ञों के वचन लिखकर उनको भलीभांति समझाया है। बहुत सी बातें जो बहुधा स्त्रियां जानती भी हैं परन्तु उनके कारण तथा उपयोग से अनभिज्ञ हैं उनका साफ २ निर्णय इस पुस्तक में किया गया है यह एक इस पुस्तक में विशेष गुण है। लेखक महाशय का उद्योग सराहनीय है, यदि यह पुस्तक विवाह के उपहार में तथा कन्या पाठशालाओं में पारितोषिक के रूप में दीजावे तो इसका वास्तविक उपयोग हो सकता है। कागज़ छपाई आदि अच्छी है। मूल्य १) डाक व्यय।-)

श्री० सम्पादक महोदय 'प्रतिभा' सनातनधर्म प्रेस मुरादाबाद

"गृहस्थाश्रम जिन बातों से सुखद होता हैं इस पुस्तक में प्रायः उन सब बातों का थोड़ा बहुत वर्णन है- ब्रह्मचर्य की महिमा अच्छी तरह समझाई है। हृदय की पवित्रता और व्यवहार शुद्धि पर भी लेखक ने अपने ढंग पर खूब लिखा है। अपने देश की बहुत सी बातों का दूसरे देशों से मिलान करके अपने देश की हीनता दिखाई है जिसे पढ़कर अपनी अवस्था का बहुत कुछ ज्ञान हो जाता है ऐसे ही अनेक काम के विषयों की इसमें चर्चा है पुस्तक लेखक आर्यसमाजी विचार के पुरुष हैं पर उनकी इस पुस्तक से सब विचार की स्त्रियां और पुरुष भी लाभ उठा सकते हैं,,

श्रीमती सम्पादिका 'स्त्रीदर्पण' इलाहाबाद।

इस पुस्तक में लेखक ने अपनी पुत्री को उपदेश दिये हैं परंतु वे सभी पुत्रियों क्या, उनकी माताओं को भी पढ़ने योग्य हैं। सभी सांसारिक बातों का निर्णय इन उपदेशों में है······पुस्तक अपने ढंग की अच्छी है सच्चे जीवनचरित्र आदि बहुत से हितकर विषयों के कारण स्त्री पुरुषों दोनों के काम की है।

भारत के प्रसिद्ध उपदेशक श्री पं० हरिशंकर मुरार व्यास।

गृहस्थाश्रम के दूसरे भाग को मैंने आद्योपान्त पढ़ा सुन्दर लेख शक्ति उच्च भाव मनोहर वाक्य रचना बतला रही है कि लेखक का जीवन पवित्र है यदि प्रत्येक गृह में इस पुस्तक का नियम पूर्व स्वाध्याय हो तो निःसंदेह पुत्र पुत्रियों का जीवन आदर्श बन सकता है इसलिये मैं, ओर के साथ प्रत्येक गृहस्थ से प्रार्थना करता हूं कि इस उपयोगी पुस्तक को मंगाकर अपने गृहों की शोभा को बढ़ावें।

उपमंत्री आ० प्र० नि. सभा संयुक्त प्रान्त।

वास्तव में यह पुस्तक स्त्रियों और कन्याओं के लिये अत्यन्त शिक्षापूर्ण है उनके लिये जिन २ बातों का जानना जरूरी है वे सब बातें इस पुस्तक में अच्छे प्रकार वर्णन की गई हैं लेखक महाशय का उद्योग सराहनीय है।

श्री स्वामी अच्युतानन्द जी सरस्वती।

यह पुस्तक धार्मिक सुधार के लिये अत्युत्तम पुस्तक है जो आर्य देवियां अपनी ससुराल को विवाहित होकर जाती हैं उनको इस पुस्तक को अपने साथ अवश्य रखना योग्य है तथा प्रत्येक गृहस्थी मे इस पुस्तक की एक २ प्रति रहनी चाहिये।

४—लालित्यता में सब से बढ़ चढ़ कर है।

इसकी भाषा की लालित्यता तथा सरलता विषयों की गम्भीरता वाक्यों की मधुरता की प्रशंसा हम क्या करें किन्तु भारतीय एवं विदेशीय महानुभावों के प्रशंसापत्रों का सार उद्धृत करते हैं

श्री० पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी, सम्पादक
सरस्वती, प्रयाग

स्वामीदयानन्द सरस्वती के जितने जीवन चरित्र प्रकाशित हो चुके हैं उनमें से श्रीयुत लेखराम जी का उर्दू में लिखा हुआ जीवनचरित्र सर्वश्रेष्ठ है। उसी के आधार पर सरस्वतीन्द्रजीवन लिखा गया है। आपने लेखराम जी की पुस्तक से प्रायःसारी मुख्य मुख्य घटनाओं की सामग्री उद्धृत करके इस पुस्तक की रचना की है। इसके सिवाय मास्टर आत्माराम जी तथा लाला राधाकृष्ण जी के लेखों से भी आपने सहायता ली है। पुस्तक में स्वामीजी के साधारण चरित्र के अतिरिक्त उनके शास्त्रार्थ, उनके धर्मोपदेश और उनके ग्रन्थ निर्माण आदि की भी बातें हैं। पुस्तक बड़े २ कोई ४०९ पृष्ठों में समाप्त हुई है। टाइप अच्छा. कागज मोटा है। स्वामीजी, पं० लेखरामजी, और पण्डित गुरुदत्तजी विद्यार्थी के हाफ़टोन चित्र भी पुस्तक में हैं। इस पर भी इतनी बड़ी पुस्तक का मूल्य सिर्फ १॥) है। महात्मा जन चाहे जिस देश, जाति. धर्म और सम्प्रदाय के हों उनका चरित्र पढ़ने से कुछ न कुछ लाभ अवश्य ही होता है। जो ऐसा समझते हैं उन्हें स्वामी जी का चरित्र भी पढ़ना और अपने संग्रह में रखना चाहिये।

श्री० पं० विष्णुलाल जी एम० ए० सबजज।

मैंने आपके छपाये सरस्वतीन्द्रजीवन को पढ़ा। पण्डित लेखराम जी स्वर्गवासी के संगृहीत चरित्रों को छोड़ शेष अब तक जितने छपे हैं उनसे इस में अधिक हाल पाये। वास्तव में आपने उर्दू के सारगर्भित लेखों की (जिनके आनंद से विना उर्दू जानने वाले वञ्चित रहते थे) भाषा करके बड़ा उपकार किया है। मैं समझता हूं कि आपने इस इतिहास के लिखने में श्रीस्वामी जी के कार्यकाल को यथाक्रम रक्खा है। पुस्तक की छपाई अति सुन्दर है और चित्र भी सर्वाङ्ग उत्तम हैं। मूल्य १॥) अधिक नहीं है। मैं आप की इस कार्य पूर्ति का धन्यवाद देता हूं।

श्रीमान् पं० निरंजनदेव शर्मा उप० श्रीमती प्रतिनिधिसभा

मैंने इस जीवन को विचार पूर्वक पढ़ा बड़ा ही रोचक है। इस पर भी भाषा सरल अनेकान विषय इसमें ऐसे हैं जो अभी तक नागरी के जीवन चरित्रों में नहीं छपे। कम पढ़े मनुष्य और स्त्रियां भी भले प्रकार समझ सकती हैं। इसकी उत्तमता वास्तव में पढ़ने से प्रतीत होगी सच तो यह है कि अनेक प्रकार उत्तम और तीन मनोहर चित्रों सहित होने पर भी इस पुस्तक का मूल्य १॥) सजिल्द १।॥) है अतः मैं आर्य पबलिक तथा अन्यान्य श्रेष्ठ पुरुषों से सिफारिश करता हूं कि एक एक जिल्द मंगा कर आप देख अपनी पुत्रियों, स्त्रियों, और पुत्रों को अवश्य दिखलावें।

श्रीमान् पं० सदानन्द जी पेशकार तहसील किचहा जि० नैनीताल ।

मैं आप के सरस्वतीन्द्रजीवन को देख हार्दिक धन्यवाद देता हूं। दरअसल यह पुस्तक अति सराहनीय है। तिस पर भी मूल्य बहुत सस्ता है।

श्री पं० भवानीदयालजी

सम्पादक हिन्दी- नेटाल साउथ अफ्रीका

वर्तमान भारत के जन्मदाता महर्षि दयानन्द सरस्वती के विस्तृत जीवन वृतान्त का यह तृतीय संस्करण है इसमें महर्षि के एक भव्ययोगासनारूढ़ चित्र के अतिरिक्त धर्मवीर पं० लेखराम जी और पण्डित गुरुदत्त के चित्र भी सुशोभित हैं। प्रवासी भारतीयों को महर्षि दयानन्द का परिचय देना मानों दिवस के मध्याह्न काल में दीपक का प्रकाश करना है प्रत्येक धर्म और प्रत्येक सम्प्रदाय के भारतवासी उनके पुनीत नाम से परिचित हैं। महर्षि दयानन्द उस समय संसार के रंगमञ्चपर आये जिस समय संसार के अधिकांश प्राणी प्रकृतिवाद से तबाह हो रहे थे। महर्षि दयानन्द ने, परमात्मा प्रकृति और जीवात्माका सच्चा ज्ञान प्रकाशकर मानव जाति का जो कल्याण किया वह भारतवर्ष के ही नहीं प्रत्युत संसार के इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्णाक्षरों में सदैव अंकित रहेगा अहा! उस महान् पुरुष के आत्मिक बल पर तो जरा विचार कीजिये जब कि भारत के भिन्न २ सम्प्रदायों और

पंथों के तीस करोड़ मनुष्य एक ओर खड़े होते हैं और उनके अंध श्रद्धा और अंध विश्वास पर प्रहार करके वैदिक धर्म और आर्यसभ्यता के प्रचार के अभिप्राय से दूसरी ओर खड़ा होता है एक लंगोटबंद सन्यासी। अतएव ऋषि दयानंद जी की जीवनी संसार के धार्मिक इतिहास में एक अपूर्व घटना और आर्य जाति की एक अमूल्य सम्पत्ति है। हमने महर्षि के अनेक जीवन पढ़े किंतु तिलहर ज़िला शाहजहांपुर यू० पी० निवासी।

श्री० मुं० चिम्मनलाल जी कृत

सरस्वतीन्द्र जीवन अति उत्तम है उसमें श्री पण्डित लेखरामजी लिखित जीवन चरित्र की प्रायः सभी बातें आगई हैं तथा अन्य कतिपय ज्ञातव्य घटनायें भी संकलित हैं लेखक ने इसे अत्यन्त परिश्रम से लिखा है भाषा भी सरल और रोचक है छपाई आदि भी अच्छी है और यह बृहद् ग्रंथ इस योग्य है कि प्रत्येक गृहस्थ के गृह की शोभा बढ़ावें।

अन्य आदर्श जीवन-चरित्र

दशरथ =) राम =) लक्ष्मण ।-) भरत -)॥ युधिष्ठिर ।) अर्जुन =) भीमसेन =) द्रोणाचार्य्य =) विदुर =) धृतराष्ट्र =) पं० गुरुदत्त -) महात्मा पूर्णभक्त -)॥ महारानी मन्दालसा ।)॥

हमारे छोटे २ जीवनों की बाबत देखिये लोग क्या कहते हैं
बाबू नंदलालसिंह जी, बी. एस. सी., एल. एल. बी. उपमंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा, यू० पी०—

दशरथ, राम, लक्ष्मण, भरत ये चारों जीवनचरित्र रूप से श्रीयुत ······ गुप्तजी ने प्रकाशित किये हैं, आर्य भाषा की सेवा जिस प्रकार मुंशीजी करते हैं उसे प्रत्येक भाषाभाषी जानता है।

लालाजी के पुस्तक का उद्देश्य मुख्यतया बालक और बालिका एवं स्त्रियों का हित होता है, ये भी इसी विचार से लिखी गई हैं, इंगलिश में इस प्रकारकी

पुस्तकें निकालने का क्रम प्रचलित ही था परन्तु आर्यभाषा में भी वही बात देखकर प्रसन्नता होती है। वास्तव में आदर्श पुरुषों के चरित्र का पाठकों के हृदयों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। विदुर, धृतराष्ट्र युधिष्ठिर, दुर्योधन ये चार महाभारत के पात्रों के सम्बन्ध में लिखी गई हैं। महाभारत विस्तृत ग्रन्थ को सम्पूर्ण तथा देखे बिना किसी भी व्यक्ति का पूरा हाल ज्ञात नहीं हो सकता परन्तु उक्त ग्रन्थ को सम्पूर्ण देखना सहज काम नहीं लेकिन यह कठिनता इनसे दूर हो गई। चरित्रलेखक ने जहां अपने "नायकों" की प्रशंसा की है वहां तत्सम्बंधी प्रत्येक घटना को ठीक एवं स्पष्ट भी बहुत कुछ करने का ध्यान रक्खा है। जो लेखक के लिये आवश्यक है। छपाई साफी, मूल्य स्वल्प है॥.

श्रीयुत सम्पादक आर्यमित्र आगरा—

तिलहर के महाशय ....जी वैश्य ने महात्मा विदुर, युधिष्ठिर, तपस्वी भरत जी के जीवनचरित्र लिखकर प्रकाशित किये हैं इस प्रकार के ऐतिहासिक चरित्रों से आर्य साहित्य को बहुत लाभ पहुंच सकता है इन की भाषा सरल और रोचक है, तिस पर भी मूल्य अति स्वल्प है। वास्तव में आपका यह प्रयत्न अत्यन्त प्रशंसनीय है।

श्रीयुत सम्पादक भास्कर मेरठ, भाद्रपद ३—

तिलहर निवासी महाशय........ ने इन जीवनों को लिख कर प्रकाशित किया है। इस तरह के ऐतिहासिक चरित्रों से आर्य सभा के साहित्य को बहुत लाभ पहुंचने की सम्भावना है। आपका यह प्रयत्न श्लाघनीय है।

श्रीमान सम्पादक भारतोदय ज्वालापुर।

तिलहर के मुन्शी........जी को प्रायः आर्यसमाज में सब ही जानते हैं आपने अनेक उपयोगी सामयिक पुस्तकों को प्रकाशित कर अच्छा नाम पाया है। आपकी नारायणी शिक्षा आदि प्रसिद्ध पुस्तकें हैं ही। अब आपने छोटे २ जीवन चरित्रों के प्रकाशित करने का काम बांधा है। इन छोटी और स्वल्प मूल्यवाली पुस्तकों से सर्वसाधारण को अच्छा लाभ पहुंच सकता है, अतः यह प्रत्येक हिन्दू और आर्य घरों में अवश्य होनी चाहियें। लेकिन आपको विज्ञापन की सचाई जब ही मालूम होगी जब आप स्वयं इनकी प्रतियां मंगा कर देखेंगे।

श्री पं० भवानीदयाल जी नेटाल (साउथ अफ्रीका)

आदर्श जीवन चरित्र जिनके नाम ऊपर दिये गये हैं उनसे भारत का बच्चा बच्चा परिचित है किन्तु उनमें कौन से विशिष्ट गुण थे इसे बहुत कम लोग जानते हैं। उपर्युक्त पुस्तकों में उन्हीं गुणों के दिग्दर्शन कराये गये हैं जिससे अलंकृत होने के कारण आज उनके नाम इतिहास के पन्नों पर चमक रहे हैं और युगयुगान्तर तक आर्यजाति के हृदय को अपने प्रकाश से आलोकित करते रहेंगे। प्रवासी भारतियों के बच्चे जितने नेपोलियन और नेलसन की घटनाओं से परिचित हैं उतने अपने देश के महापुरुषों से नहीं। अतएव इन पुस्तकों को मंगा कर अपने बालकों के हाथों में देना प्रत्येक माता पिता का कर्तव्य है इससे उनके हृदयों में पूर्वजों के प्रति श्रद्धा और भक्ति के भाव जागृत होंगे। और साथ ही अपने जीवन को आर्यत्व के सांचे में ढालने में सहायता मिलेगा······उपरोक्त पुस्तकों में जहां जीवनियों का संकलन है वहां समय की अवस्था पर भी प्रकाश डाला गयाहै जिससे पुस्तकों की उपयोगिता बढ़ गई है। वास्तव में पूर्वजों का इतिहास ही भावी राष्ट्र का पथप्रदर्शक होता है इसलिये मैं बलपूर्वक अनुरोध करता हूं कि उपरोक्त जीवनों को वेग मंगाकर घर घर में प्रचार कीजिये।

अन्य उपयोगी पुस्तकें

क्या हम रामायण पढ़ते हैं

आपने अब तक अनेकों तरह की रामायण पढ़ी परंतु जब आप एक बार इसे पढ़ेंगे तब आपको मालूम होगा कि यथार्थ में आप रामायण पढते हैं या नहीं? मूल्य =)

गर्भाधानविधि—यह चौदहवीं बार छप चुकी है। इसमें धातु और उसके गुण, स्त्री-प्रसंग, गर्भविधान, उत्तम संतान की विधि, गर्भ परीक्षा उसकी रक्षा, गर्भ में पुत्र और पुत्री की पहिचान, गर्भवती का कर्त्तव्य, गर्भपात के लक्षण और उसकी चिकित्सा, प्रसवकाल में प्रसूत की रक्षा, स्त्री पुरुषों में संतान होनेके कारण के अतिरिक्त शिशुपालन और अनेक कठिन रोगों की चिकित्सा का वर्णन है। मूल्य ≡)

वीर्यरक्षा—यह पुस्तक सुख की खानि है अवश्य आप देख कर संतानों को दिखाइये और उनको भयानक रोगों से बचाइये; क्योंकि वीर्य्य रक्षा करना ही सुखों का मूल है। शोक कि सन्तानें इसके लाभों को न जान कर कुमार्गियों के संग पड़कर कुसमय कुरीतों से वीर्य्य का सत्यानाश कर भारत को गारत करते चले जाते हैं। मूल्य =)॥ यह ६ वीं बार छपी है॥

हम शीघ्र क्यों मरते हैं?—वर्त्तमान समय में मौत का औसत २३ वर्ष पर आगया है जिसके कारण भारत में रात दिन रुदन मचा रहता है। अनेकान पुरुष इसके लिये ज्योतिषियों से जप कराते और गंडे तावीज बाँधते हैं परन्तु फिर भी अल्पायु में मरते चले जाते हैं। इस दुःख से बचने के लिये मैंने चरक सुश्रुत और वेद के अनुसार सच्चे नुसखे और पथ्या- पथ्य लिखा है। देखिये, अमल कीजिये, ताकि भारत से ये दुख चले जावें। मूल्य -)॥

सत्यनारायण की प्राचीन कथा—मित्रों सहित सुनिये। देखिये कैसी अच्छी और उपयोगी कथा है आठवीं बार छपी है मूल्य =)॥

मौत का डर—इसके पढ़ते ही पढ़ते देखिये मनमें क्या २ लहरें उठती हैं। मूल्य=) यथार्थ शांति निरूपण।) शांति शतक =) संध्या दर्पण -)। द्वैत प्रकाश -)। संसार फल -) ईश्वर सिद्धि)॥। प्रेमपुष्पावली -)॥। महात्मा पूरण भक्त की कथा -)॥ नीत्युक्त स्त्रीधर्म =) स्मृत्युक्त- स्त्रीधर्म -)॥ चित्रशाला)॥। संध्या)। मूर्त्तिपूजा विचार)। हवन- विधि)। स्त्री ज्ञान गजरा प्रथम भाग)॥ द्वितीय भाग -)॥

प्रेम धारा।

इसको उपन्यासों का सितारा शिक्षा का भंडारा धर्म का पिटारा प्रेम और मेलकी अमृतधारा क्रोधादि शत्रुओं को नष्ट करने का द्वारा—अविद्यान्धकार दूर करने का कुठारा और पाठ करने वाले युवा और युवतियों के जीवन को आदर्श बनाने द्वारा कह सकते हैं। मूल्य केवल ॥।) डा० महसूल।-) न्यारा है। द्वितीय एडीशन छप कर तैयार है॥

इसके विषय में विद्वानों की सम्मतियां

श्रीयुत सम्पादक नागरीप्रचारक लखनऊ—

प्रेमधारा स्त्रीजाति के उपकारार्थ कासगंज निवासी बाबू.........ने प्रकाशित की है नर व नारियों के लाभार्थ अनेकान उपदेश ग्रन्थ के रोचक तथा प्रसङ्ग में दिये गये हैं, अवश्य ही इसको पढ़ कर बालिका और महिलाओं का विशेष उपकार होगा। धर्म — मार्ग सिखाने के निमित्त इस प्रकार के ग्रन्थों का प्रचार करना सरल उपाय है। ईश्वर प्रार्थना के सब श्लोक बहुत ही ललित दिये गये हैं। हम ग्रन्थ कर्ता को, उनके उत्तम और समाज सुधार के लिये यत्न करने के निमित्त बारम्बार प्रशंसा करते हैं।

श्रीमती हरदेवी जी धर्म पत्नी बा० रोशनलाल जी— बैरिस्टर एटला लाहौर—तथा सम्पादिका भारतभागिनी—

मैंने इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ा, स्त्री और कन्याओं को बड़े धार्मिक उपदेश मिलेंगे यह पुस्तक बहुत ही प्रशंसा के योग्य है और विशेष कर आर्य कन्याओं के लिये तो पथ दर्शक तथा अमूल्य रत्न है।

बाबू भूरालाल स्वामी असिस्टेन्ट स्टेशनमास्टर निम्बाहेड़ा

मैंने आपकी बनाई हुई प्रेमधारा को पढ़ा, पढ़कर बड़ा चित्त प्रसन्न हुआ ईश्वर ने आपको इसी योग्य बनाया है कि आप अपनी अमृतरूपी लेखनी से मनुष्यों की अज्ञानरूपी निद्रा को छिन्न कर रहे हैं। आपके वक्तासमर्थ हैं। तो निबन्ध को पढ़ कर मुझसा अज्ञानी इसके महत्त्व जानने व वर्णन करने में भी इतना ही कहूंगा कि यह मूर्ख नर नारियों की फूट व लड़ाइयों के दूर करने की एकमात्र औषधी है। प्रत्येक गृह में रखने योग्य हैं। इत्यादि इत्यादि।

नवीन पुस्तकें

पाठकवृन्द !

भारतवर्ष के अनुपमरत्न अर्जुनगीता का अनेकानेक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है क्योंकि उसमें कर्मयोग की महिमा का अच्छे प्रकार वर्णन किया गया है प्राचीन साहित्य का पाठ करने से भगवद्गीता के अतिरिक्त अनेकानेक गीताओं का पता चलता है जिनके बहुधा मनुष्य नाम तक नहीं जानते फिर उनके विषयों की बाबत् कौन कहे अतः हमने गृहस्थियों के स्वाध्याय करने योग्य

शम्पाक--हारीत--पिङ्गल--वोध्य--मंकि--हंस--उतथ्य--वामदेव

नामक आठ गीताओं के सरल भाषानुवाद पूर्वक मूल श्लोकों सहित मुद्रित कराया है जिनमें विवेक- वैराग्य- तप- ब्रह्मचर्य- जप- ध्यान- दान- शम- दम- राजा और प्रजा के धर्म- संसार सागर से पार होने के लिये अनेक सुगम रीतियों का वर्णन कथाओं के मनोहर रूप में बड़ी विचित्रता से किया गया है जिनके पाठ से हृदय में उत्साह और उमंग को लहरें उत्पन्न होती हैं और प्रतिदिन स्वाध्याय पूर्वक तदनुकूल कार्य करने से आपकी संतानें सत्यवादी, सच्चे त्यागी सत्कर्मी और सत्य सङ्कल्पी बन पूर्ण कर्म वीरता के अद्भुत कौतुक दिखा अपने नाम और कीर्ति को अमर कर सकती हैं इसलिये उपरोक्त गीताओं का परिवार सहित अवश्य पाठ कीजिये मूल्य ॥) डा० ।=)

श्री० बाबू कन्नोमल जी एम. ए. सबजज धौलपुर

शम्पाक- हारीत- पिङ्गल- वोध्य- मंकि-हंस--उतथ्य और वामदेव गीताओं की पुस्तक जो अपने गीताष्टक के नाम से सरल भाषा सहित छपवाई है वह अति उत्तम है। सभी धर्मों के लोग इस पुस्तक को पढ़ कर लाभ उठा सकते हैं।

चौधरी रामस्वरूपजी वर्मा नायब तहसीलदार भरतपुर

आपने बड़े परिश्रम और विचार से गीताओं को लिखा है इनसे सर्व-साधारण को बहुत लाभ होगा।

श्री महता जैमिनिजी बी. ए.

प्रत्येक भाषा पाठी के लिये परमोपयोगी आठ गीताओं का सरल अनुवाद करके आपने बड़ा उपकार किया है गीताओं का पाठ प्रत्येक को लाभ दायक है। नीचे दिये नोट बड़े उपयोगी हैं। छपाई बहुत सुन्दर और कागज बढ़िया लगाया गया है।

श्री स्वामी विवेकानन्दजी

गीताष्टक का पाठ पुत्र-पुत्रियों को कराने से बड़ा लाभ होगा क्योंकि उनमें अनेक उपयोगी विषयों का वर्णन है इसलिये प्रत्येक गृहस्थ को यह पुस्तक अवश्य देखनी चाहिये।

देह विज्ञान।

देह विज्ञान--अपने ढंग की सचित्र और नवीन पुस्तक है।

देह विज्ञान—के पाठ से ही आप शरीर के तत्वों को जान उसके आरोग्य रखने की उत्तम रीतियों को जान सकते हैं।

देह विज्ञान—बड़ी आयु प्राप्त करने और अकाल मृत्यु से बचने के उपाय बताकर सैंकड़ों रुपया हकीम और डाक्टरों से बचावेगा।

देह विज्ञान—जिस्म के बाहरी और भीतरी बनावट को बतला कर किस कुपथ्य से कौन २ रोग होते हैं इसका ज्ञान भले प्रकार कराता है।

देह विज्ञान—के पाठ से शारीरक बल-बुद्धि और धन की वृद्धि होती है।

देह विज्ञान—की भाषा इतनी रोचक और सरल है कि पुत्र पुत्रियाँ और स्त्रियाँ भले प्रकार समझ सकती हैं।

देह विज्ञान—आरोग्य रहने के नियम उपाय और शरीर के सिर से पैर तक की सब नस नाड़ी आदि दैहिक बातों का पूर्ण रूप से ज्ञान कराता है।

देह विज्ञान—के चित्र आर्ट पेपर पर तथा पुस्तक उत्तम सफेद कागज पर बड़ी उत्तमता से छपी है तिस पर भी मू० आठ आना। डा० व्य० ।=)

देह विज्ञान के लिये सज्जनों की सम्मतियां

श्री स्वामी विवेकानन्दजी

देह विज्ञान में उपयोगी विषयों का उल्लेख है प्रत्येक गृहस्थ को अपने कुटुम्ब सहित इसका पाठ करना चाहिये।

श्री० स्वामी अच्युतानन्दजी महाराज

देह विज्ञान—बहुत अच्छी शिक्षा प्रदपुस्तक है सब नर नारियों को इसका पाठ करना चाहिये क्योंकि पुस्तक में अत्यन्त आवश्यकीय विषय रक्खे गये हैं। चित्रों से पुस्तक की शोभा और भी बढ़ गई है। बालक बालिकाओं की प्रारम्भिक शिक्षा के लिये यह पुस्तक अति उपयोगी है। आदि आदि

रत्न भंडार

इस पुस्तक को चुने हुए रत्नों का भंडार ही समझिये इसके पाठ से बच्चों को शिक्षा, युवाओं को आनन्द और वृद्धाओं को ज्ञान का स्वाद मिलता है इसकी उत्तमता को देखकर आगरा व अवध की टेक्सबुक कमेटी

ने लायब्रेरी में रखने और बालकों को इनाम में देने के लिये स्वीकार किया है। भारत के साहित्य प्रेमियों ने पुत्रपुत्रियों की शालाओं में धर्मशिक्षा के स्थान पर पढ़ाने के लिये इस पुस्तक का अनुमोदन किया है। कागज उत्तम सफेद मूल्य ।=) मात्र ।

-यह पुस्तक टेक्सबुक कमेटी यू. पी. ने इनाम में देने को स्वीकार की है।

और इसकी

भारत के सभी विद्वानों ने प्रशंसा की है

देखिये

सरस्वती सम्पादक जी क्या कहते हैं।

"पद्यों का चुनाव अच्छा हुआ है पुस्तक सब के पढ़ने लायक है मूल्य ।=)"

इनके अतिरिक्त

श्री० बाबू नैपालसिंह जी प्रेन्सिपल राजाराम कालेज कोल्हापुर। श्री कुंवर हुकुमसिंह जी प्रधान आ० प्र० नि० सभा। श्री० बाबू गंगासहायजी असिस्टेन्ट इंस्पेक्टर स्कूल्स कमिश्नरी रुहेलखण्ड। श्री पं० महेशीलाल जी तेवारी डिप्टी इंसपेटक्र आदि, २ महानुभावों की राय है कि—

"पुस्तक अति उत्तम है इसको हर एक धर्म वाला पढ़कर बड़ा लाभ उठा सकता है। बालकों के लिये यह पुस्तक विशेष उपयोगी है धर्मशिक्षा के स्थान में तथा पाठ्य पुस्तकों की जगह पाठशालाओं में इस पुस्तक को स्थान देना चाहिए।"

पुत्री प्रियम्वदादेवी रचित पुस्तकें.

नई ! नई !! नई !!!

कलियुगी परिवार का एक दृश्य।

वर्तमान समय में गृहस्थाश्रम के अन्दर रंग विरंगे चमत्कारिक दृश्य देखने में आते हैं, उनका खाका इस पुस्तक में विचित्रता से खींचा गया है जिसके पढ़ते पढ़ते ही गृहस्थाश्रम की वास्तविक दशा का चित्र आपके

12914

हृदयपटल पर अङ्कित हो जावेगा। आपको मालूम होगा कि धन, धान्य, पुत्र, पौत्र होते हुये भी इस समय गृहस्थाश्रम में कितना सुख मिल रहा है। इसका ढंग उपन्यासी है भाषा की उत्तमता, भाव की गम्भीरता और सरलता देखने से ही विदित हो सकती है। मूल्य केवल ॥)

धर्मात्मा चाची अभागा भतीजा

यह पुस्तक भी उपन्यास के ढंग पर लिखी गई है। इसकी नायका ने अपने कुटुम्बियों को नाना उपयोगी और आवश्यक विषयों की शिक्षायें दी हैं जिससे यह भलीभांति प्रकट हो जाता है कि संसारयात्रा करने वाले गृहस्थों को गृहस्थाश्रम में सुख के सच्चे उपाय क्या २ हैं? विशेष उपयोगिता देखने पर ही मालूम होगी। मू० ।-)

आनन्द मई रात्रि का एक स्वप्न

इसमें स्वर्गीय विदुषी महिलाओं की सभा के अधिवेशन में कितनी स्पीचों द्वारा यह भले प्रकार विचार किया गया है कि स्त्री जाति की अवनति का क्या कारण है? अब उन्नति कैसे होसकती है और गृहस्थाश्रम स्वर्गमय कैसे बन सकता है' इत्यादि कई विषयों का आन्दोलन किया गया है। मूल्य ≈)

श्री पं० भवानीदयाल जी जैकोब्स (साउथ अफ्रीका)

उपर्युक्त तीनों पुस्तकों की रचयिता श्री चिम्मनलालजी की सुयोग्य एवं विदुषीपुत्री प्रियम्वदा हैं। तीनों पुस्तकें कल्पित उपाख्यान स्वरूप हैं। इन पुस्तकों में विशेष रूपसे स्त्रियों की वर्त्तमान दशा पर प्रकाश डाल कर उसके सुधार के उपाय बतलाये गये हैं उन्हें आरम्भ करने पर आद्योपान्त पढ़े बिना जी नहीं मानता। विशेष प्रवासी बहिनों के लिये ये पुस्तकें बहुत उपयोगी हैं और कथा के रूप में होने के कारण जो बहनें थोड़ा भी पढ़ना जानती हैं वे भी इनके पाठ से लाभ उठा सकती हैं। और सहज ही में बहुत सी आवश्यक बातें जान सकती हैं। इनका हम इसलिये भी हार्दिक स्वागत करते हैं कि यह एक आर्य देवी की कीर्ति है। भाषा सरल है। शैली श्रेष्ठ है। कथायें रोचक हैं, और मूल्य भी अधिक नहीं है।

मिलने का पता—
चिम्मनलाल भद्र गुप्त
तिलहर जि० शाहजहांपुर।

❀ ओ३म् ❀

❀ नम्र निवेदन ❀

१—बहुधा महानुभाव पुस्तकों को मंगाकर पार्सल वापिस कर देते हैं उससे व्यर्थ में पुस्तकालय को हानि उठानी पड़ती है अतः सोच-विचार कर आर्डर भेजना चाहिये। व्यर्थ में नुक़सान पहुंचाना सभ्यता के प्रतिकूल है।

२—पुस्तक मंगाते समय अपना पता (नाम, स्थान, डाक घर, जिला) बहुत साफ़ साफ़ लिखना चाहिये ताकि पुस्तकें भेजने में सुभीता रहे।

३—डांक पार्सल का महसूल बढ़ गया है अतः एक रुपया से कम की पुस्तकें न मंगाना चाहिये क्योंकि जितने की पुस्तकें होंगी उतना ही महसूल लग जायगा।

४—पुस्तकों पर हमारी मोहर भी देख लेना चाहिये। विना मोहर की पुस्तक चोरी की समझनी चाहिये।

निवेदक—

चिम्मनलाल भद्रगुप्त,

तिलहर जि० शाहजहांपुर।

पुस्तक मिलने का पता—

चिम्मनलाल भद्रगुप्त वैश्य

मुक़ाम वा पोस्ट ख़ास तिलहर,

ज़ि० शाहजहांपुर।

INDIA.

☞ कृपा करके इसका द्वितीय और तृतीय भाग भी मंगाकर देखिये।